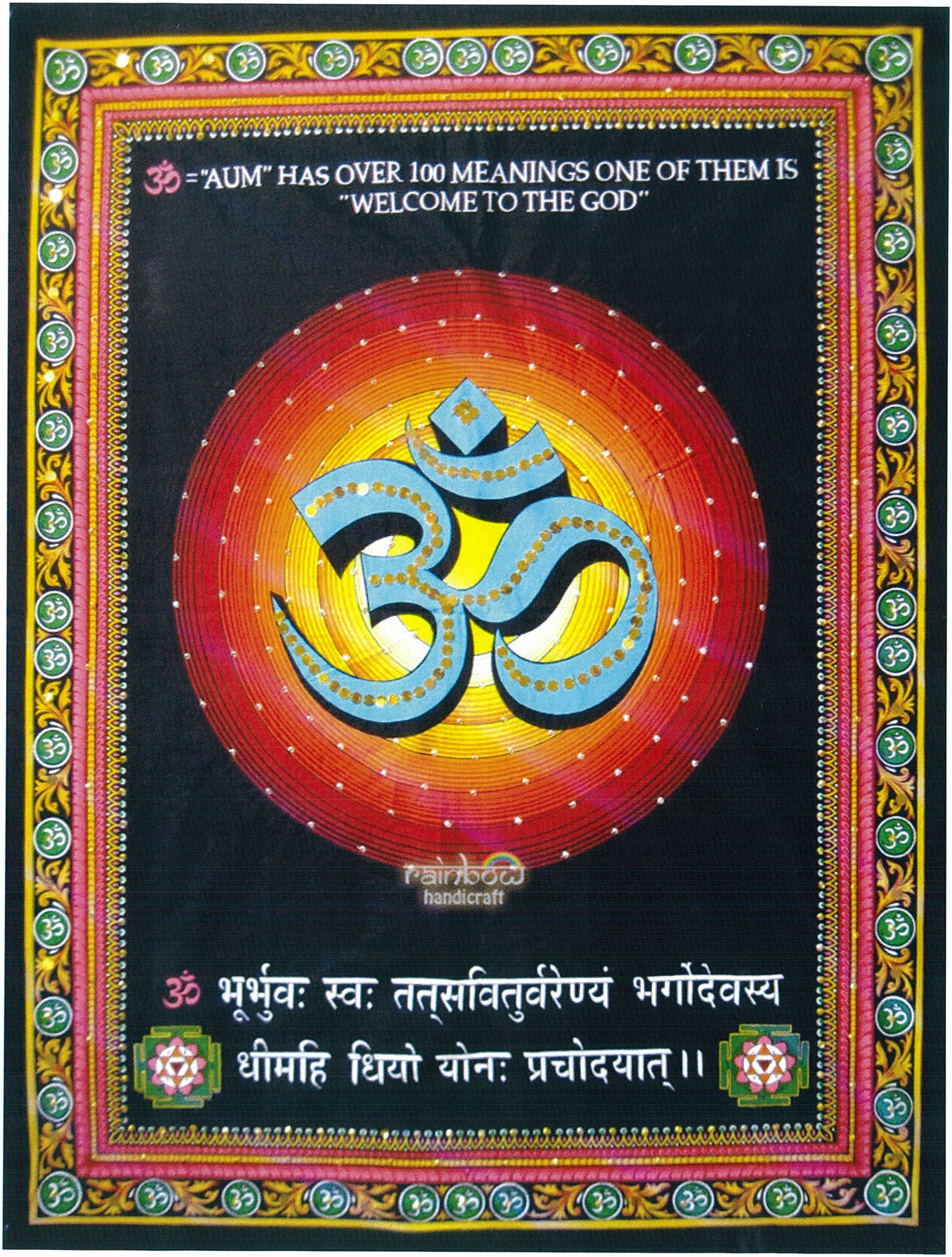
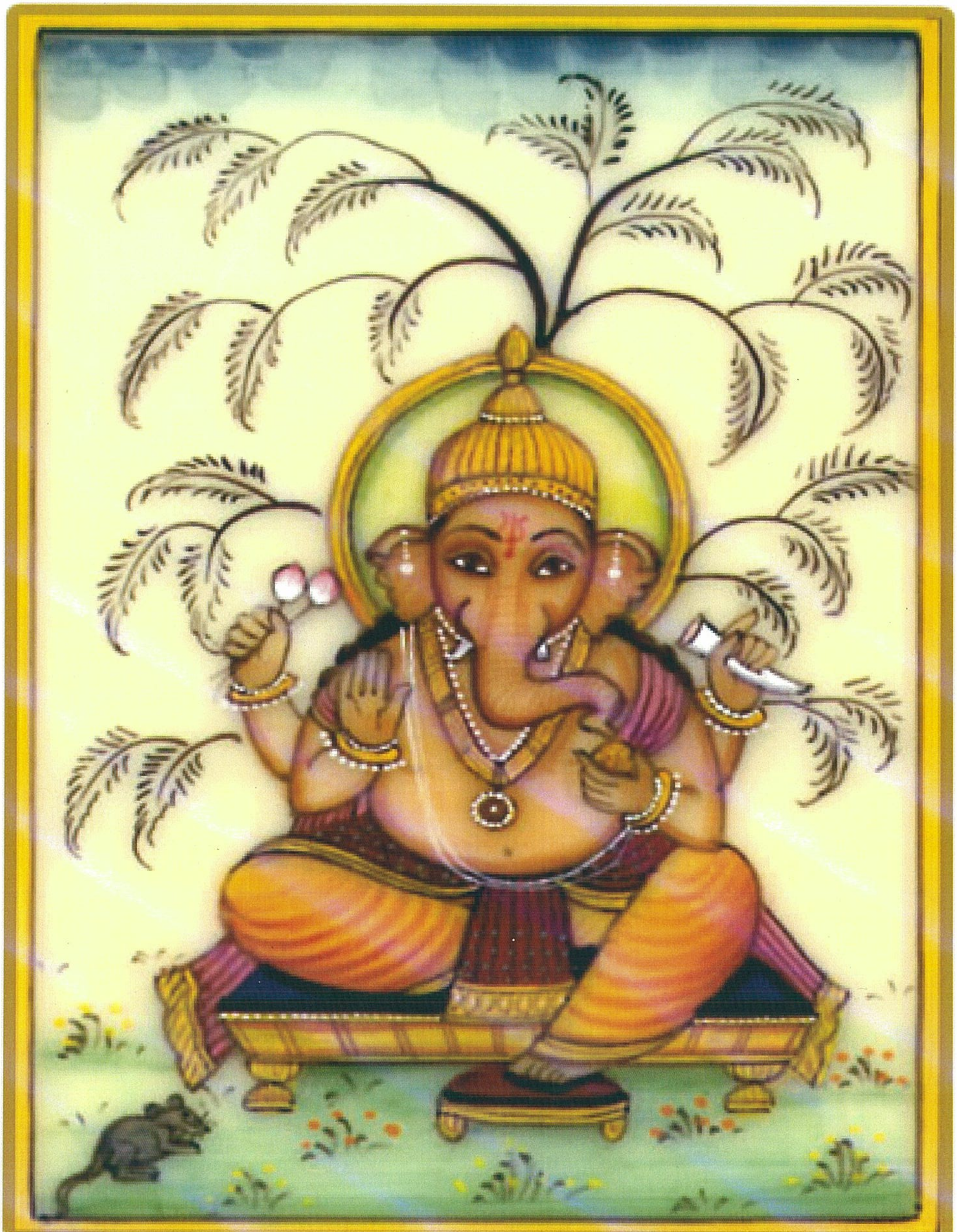

ॐ = "AUM" HAS OVER 100 MEANINGS ONE OF THEM IS
"WELCOME TO THE GOD"
rainbow
handicraft
ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य
धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ।।

VRAT KATHA INDEX



<u>तिल चौथ कथा</u>

सकंट चौथ का वरत माघ मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को किया जाता है।इस दिन गणेश जी और चाँद की पूजा की जाती है।कहीं कहीं इसे तिल चौथ भी कहा जाता है।

कथा-एक साहुकार दम्पत्ती थे। जिनके कोई संतान नहीं थी।एक दिन साहुकार की पत्नी अग्नि लेने पड़ोस के घर में गई।वहां उसने देखा की पड़ोसन एवं अन्य महिलाएं पूजन कर कथा सुन रही हैं। यह देख उसने पूछा-आप सब किसकी पूजा एवं वरत कर रही हो तथा इस वरत के करने से क्या फल मिलता है। पड़ोसन ने साहुकार की पत्नी को बताया कि यह चतुर्थी की पूजा है।इस दिन वरत करने तथा कथा कहने सुनने से बिछड़े हुए मिल जाते हैं।सुख समृध्दि एवं सतांन की मनोकामना पूरी होती है।यह सुनकर साहुकारनी ने वहीं सकंल्प किया कि यदि मेरे कोई सतांन हो जएगी तो मैं भी सवा सेर का तिलकुटा चढ़ाऊंगी।सकंट चौथ माता ने उसकी मनोकामना पूरी की तथा उसे पुत्ररत्न हुआ।पर वह तिलकुटा चढ़ाना भूल गई।इसके बाद उसके छह बेटे और हुए फिर भी उसे तिलकुटा चढाने की याद नहीं आई।सातों बेटे बड़े होने लगे।उसने बड़े बेटे के विवाह के लिए फिर से मन्नत मांगते हुए कहा-यदि मेरे बेटे का विवाह हो जाए तो सवा मण का तिलकुटा चढाऊगीं।विवाह की सभी तैयारियां होने लगी फिर भी साहुकारनी तिलकुटा चढाना भूल गई।जब उसका बेटा फेरों में बैठ गया तो चौथ माता विनायक ने सोचा कि साहुकारनी हर बार तिलकुटा बोल तो देती है लेकिन चढाती एक बार भी नहीं।अब तो इसके बेटे का विवाह भी सम्पन्न होने जा रहा है।अगर हम इसे चमत्कार नहीं दिखाएगें तो हमें कौन मानेगा।इतना कह चौथ माता ने दुल्हे को फेरों से उठा कर गाँव के बाहर पीपल के पेड़ पर बैठा दिया। दुल्हे के अचानक इस तरह फेरों पर से गायब हो जाने से वहां विवाह में शामिल लोगों में हाहाकार मच गया।सभी तरफ दुल्हे को खोजा गया पर वह कहीं नहीं मिला और दिन बीतते गए। जब गणगौर पूजन के लिए गावँ के बाहर

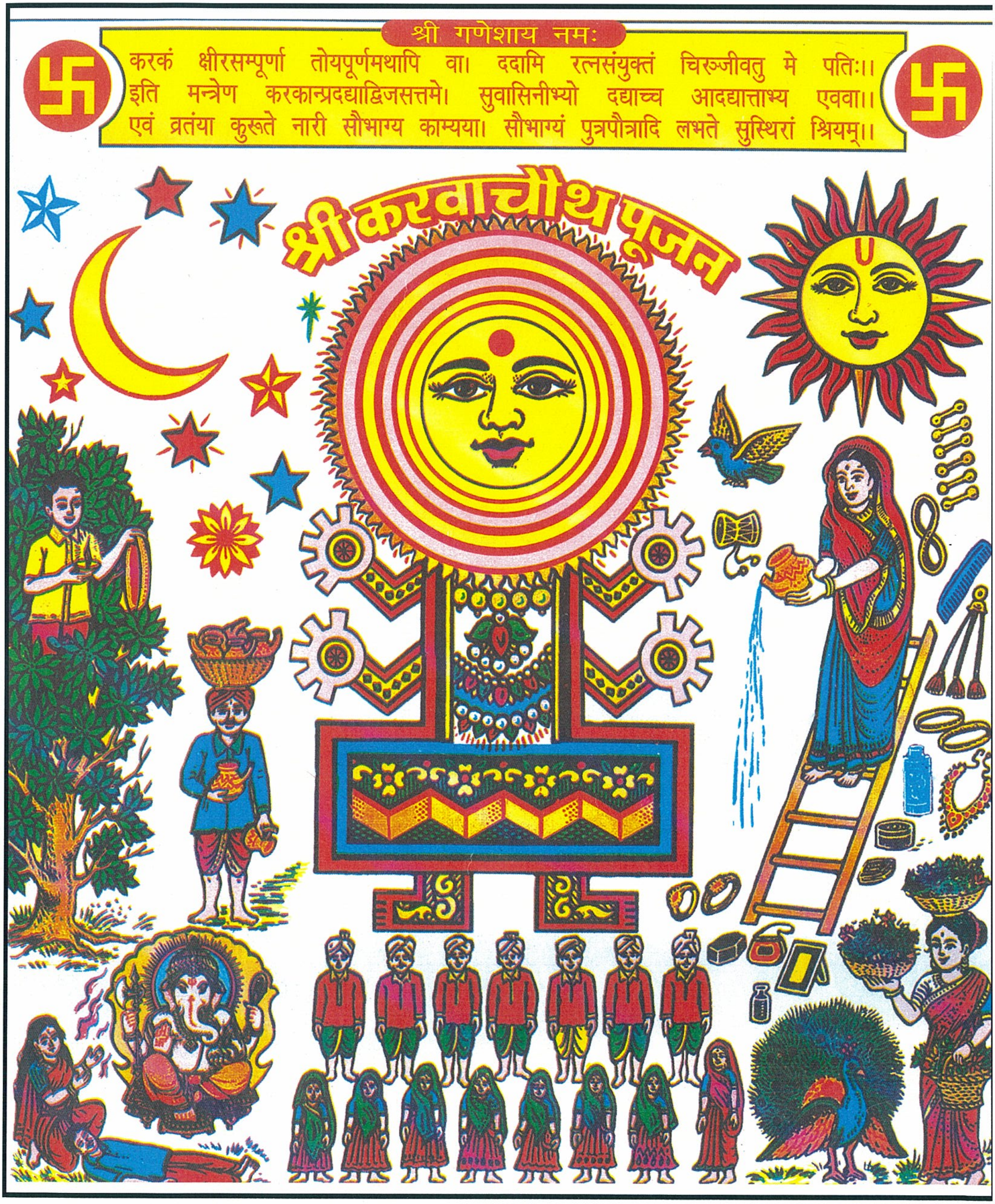
लड़कियां दूब लेने जाती तो वह लड़की भी उनके साथ जाती जिसका पति फेरों से गायब हो गया था।सब सहेलियां जब राह में एक पीपल के समीप से गुजरती तो पीपल पर बैठा उसका दूल्हा उसे देख कर कहता आए म्हारी अद ब्याही हुई।यह आवाज सुन कर वह लड़की चिन्तित होती।इसी चिन्ता से वह दुबली होती जा रही थी।तब माँ ने दुबली होने का कारण पूछा तो बेटी ने बताया कि -मैं जब भी गणगौर पूजने के लिए दूब लेने जाती हूं तो पीपल में से एक आदमी बोलता है आए म्हारी अद ब्याही हुई। उसने दूल्हे के कपड़े पहन रखे हैं।हाथों में मेंहदी लगा रखी है और कांगना बांध रखा है।सिर पर सेहरा बांध रखा है।आंखो में काजल लगा रखा है।बेटी की बात सुनकर माँ उस पेड़ को देखने आई।माँ ने देखा वह तो उसी का दामाद है जो फेरों पर से अचानक गायब हो गया था।उसने अपने दामाद से वहां बैठने का कारण पूछा तो दूल्हे ने बताया मैं चौथ माता के यहां गिरवी हूं।मेरी माँ ने तिलकुटा बोला था और चढाया नहीं।इस कारण चौथ माता नाराज है और उन्होंने मुझे यहां बैठा रखा है।दामाद की बात सुन कर सास उसी समय उसकी माँ के पास गई और सारी बातें बताई।साहुकारनी ने उसी दिन ढाई मण का तिलकुटा चढा कर चौथ माता के भोग लगाया और पूजा की।इससे चौथ माता खुश हुई।उसने गिरवी रखे बेटे को छोड़ दिया और विवाह सम्पन्न हुआ।इसके बाद साहुकारनी हर चौथ का वरत करने लगी।

सकट चौथ
(माघ कृष्ण चतुर्थी)

माघ कृष्ण चतुर्थी को सकट का त्योहार मनाया जाता है । इस दिन सकट हरण गणपति गणेश जी का पूजन होता है । इस व्रत को करने से सभी कष्ट दूर हो जाते हे और समस्त इच्छाओ व कामनाओं की पूर्ति होती हें ।
इस दिन स्त्रियाँ दिन भर निर्जल व्रत रखकर शाम को फलहार लेती है । दूसरे दिन सुबह सकट माता को चढ़ाये गये पूरी - पकवानों को प्रसाद रूप में ग्रहण करती हैं । तिल को भूनकर गुड़ के साथ कुट लिया जाता है । तिलकुट का बकरा भी बनाया जाता है । उसकी पूजा करके घर का कोई बच्चा तिलकुट के बकरे की गर्दन काट देता है । सबको इसका प्रसाद दिया जाता है । पूजा के बाद कथा सुनते है ।

सकट चौथ व्रत कथा
(माघ कृष्ण चतुर्थी)

किसी नगर मे एक कुम्हार रहता था। एक बार उसने बर्तन बनाकर आँवा लगाया तो आँवा पका ही नही । हारकर वह राजा के पास जाकर प्रार्थना करने लगा । राजा ने राजपंड़ित को बुलाकर कारण पूछा तो राजपंडित ने कहा कि हर बार आँवा लगाते समय बच्चे कि बलि देने से आँवा पक जाएगा ।
राजा का आदेश हो गया । बलि आरम्भ हुई । जिस परिवार की बारी होती वह परिवार अपने बच्चो मे से एक बच्चा बलि के लिए भेज देता ।
इसी तरह कुछ दिनों बाद सकट के दिन एक बुढ़िया के लड़के की बारी आई । बुढ़िया के लिए वही जीवन का सहारा था । राजा आज्ञा कुछ नही देखती । दु:खी बुढ़िया सोच रही थी कि मेरा तो एक ही बेटा हैं, वह भी सकट के दिन मुझसे जुदा हो जाएगा । बुढ़िया ने लड़के को सकट की सुपारी और दूब का बीड़ा देकर कहा " भगवान् का नाम लेकर आँवा मे बैठ जाना । सकट माता रक्षा करेंगी ।" बालक आँवा मे बिठा दिया गया और बुढ़िया सकट माता के सामने बैठ कर पुजा करने लगी । पहले तो आँवा पकने मे कई दिन लग जाते थे, पर इस बार सकट माता की कृपा से एक ही रात मे आँवा पक गया था । सवेरे कुम्हार ने देखा तो हैरान रह गया । आँवा पक गया था । बुढ़िया का बेटा तथा अन्य बालक भी जीवित एवं सुरक्षित थे । नगर वासियों ने सकट की महिमा स्वीकार की तथा लड़के को भी धन्य माना । सकट माता की कृपा से नगर के अन्य बालक भी जी उठे ।


श्री गणेशाय नमः
करकं क्षीरसम्पूर्णा तोयपूर्णमथापि वा। ददामि रत्नसंयुक्तं चिरञ्जीवतु मे पतिः।।
इति मन्त्रेण करकान्प्रदद्याद्विजसत्तमे। सुवासिनीभ्यो दद्याच्च आदद्यात्ताभ्य एववा।।
एवं व्रतंया कुरूते नारी सौभाग्य काम्यया। सौभाग्यं पुत्रपौत्रादि लभते सुस्थिरां श्रियम्।।
श्री करवाचौथ पूजन

पूजन विधि :

कार्तिक मास के कृष्ण-पक्ष की चतुर्थी तिथि को करवा चौथ अथवा करक-चतुर्थी के नाम से जाना जाता है। इस दिन सौभाग्यवती स्त्रियो के लिए गणेशजी की पूजा करने का विधान है। भारतीय वाङ्मय मे गणेशजी की पूजा किसी भी कार्य के प्रारम्भ मे करने की प्रथा सदैव से ही रही है, क्योकि सभी देवो मे इन्हे अनादि देव माना गया है। अत: गणेश जी की पूजा सर्व प्रथम होती है।

भगवान् शिव-पार्वती ने भी अपने विवाह-काल मे सर्व प्रथम गणेश जी की पूजा की थी। इसका उल्लेख कवि-कुल-सम्राट गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने महाकाव्य मे किया है।

मुनि अनुशासन गनपतिहिं, पूजे शम्भु भवानि । अस सुनि संशय करिय नहिं, सुर अनादि जिय जानि ।

गणेश जी विध्न विनाशक के रुप मे माने जाते है, इसलिये किसी भी कार्य की निर्विध्न पूर्णता के लिए इनकी पूजा को आवश्यक कहा गया है । करवा चौथ के दिन व्रती को नित्य कर्म से निर्वत होकर गणेश जी की पूजा के लिए मन मे दृढ. संकल्प करनइ चाहिए कि, मै आज दिन-भर निराहार रहकर गयेश जी के ध्यान मे तत्पर रहुँगी और रात्रि मे जब तक चन्द्रोदय नही होगा तब तक निर्जल व्रत करूँगी ।

व्रत के दिन सायंकाल मे घर की दिवार को गोबर से लीपकर उसके ऊपर गेरू की स्याही बनाकर उससे गणेश, पार्वती, शिव कार्तिकेय आदि देवो की प्रातिमा बनानी चाहिए। साथ ही एक वटवृक्ष (बरगद का पेड़), मानव की आकृति भी उस दीवार पर चित्रित करनी चाहिए।

क्रमश:

उस मानवकृति के हाथ मे छलनी भी होनी चाहिए। पास मे उदित होते चाँद की आकृति भी उस दीवार पर चत्रित करनी चाहिए।
पूजन-काल मे उस दीवार के नीचे दो करवो मे जल भरकर रखना चाहिए। उस करवे के गले मे नारा लपेटकर सिदूँर से रंगना चाहिए और उसकी टोंटी मे सरई की सींक लगानी चाहिए। तदानन्तर करवे के ऊपर चावल से भरा हुआ कटोरा रखकर सुपारी भी रखानी चाहिए। नैवेद्य के रूप मे उस पर चावल का बना हुआ लड्डू(शकरपिण्डी) रखे। इसके अतिरिक्त प्रतिमा के पास पूड़ी, खीर भी नैवेद्य के रूप मे अर्पित करे। इसके अतिरिक्त ऋतु फल के अनुसार सिंघारा, केला, नारंजी, गन्ना आदि, जो कुछ भी पदार्थ उपलब्ध हो उसे अर्पित कर भक्तिपूर्वक कथा श्रवण करे। कथा के अन्त मे, पूर्व से स्थापित उन करवो को दायिनी ओर से बाँयी ओर एवं बाँयी ओर रखे हुए करवे को दाहिनी ओर घुमाकर रखे।इस प्रक्रिया को लोक-भाषा मे "करवा फेरना" कहते है। इस प्रकार विधि-विधान पूर्वक पूजन करने से ब्रती के ऊपर गणेश जी की प्रसन्नता होती है। और उसके फलस्वरूप उसे मनवांछित फल की प्राप्ति एवं अखण्ड सौभाग्यता मिलती है।

साहूकार-कन्या की कथा

एक साहुकार के सात पुत्र और एक पुत्री थी। कार्तिक कृष्ण चतुर्थी के दिन साहुकार की पत्नी, उसकी सभी बहुओ एवं कन्या ने संयुक्त रूप व्रत का अनुष्ठान किया। पूजन के पश्चात् साहूकार के सभी पुत्र भोजन करने बैठे। भोजन करते समय साहूकार के पुत्रो ने अपनी बहन से भी भोजन करने का आग्रह किया।

बहन ने उत्तर दिया- तुम सभी लोग भोजन कर लो। मै चन्द्रोदय होने के पश्चात् अर्घ्य दे लेने के बाद ही भोजन करूँगी। बहन की बात सुनकर भाइयो ने कुछ दूरी पर मैदान मे अग्नि जला दी और उस अग्नि के प्रकाश को छलनी मे-से दिखाकर कहा- बहन! देखो, सामने चन्द्रमा निकल आया है। अब तुम भी भोजन कर लो। भाई की बात सुनकर उस कन्या ने अपनी भाभियो से भी यही भात दहिरायी। उसकी भाभियाँ इस कपट-पूर्ण बात को जानती थी। उन्होने उससे कहा- अभी चाँद नही निकला है। तुम्हारे भाइयो ने अग्नि के प्रकाश-द्वारा तुम्हे चन्द्रमा के उदित होने का भास कराया है। परन्तु अपनी भाभियों ने उस कन्या ने कोई ध्यान न देकर अर्घ्य दे डाला और उसके भाद भोजन भी कर लिया।

उसके इस कृत्य से गणपति भगवान् अत्याधिक रूष्ट हो गये। जिसके फलस्वरूप उस कन्या का पति भयंकररोग से ग्रस्त हो गया। चिकित्सा आदि कराने मे संचित धन नष्ट हो गया और वह अत्यन्त शोकाकुल होकर कष्ट भोगने लगी।

कम्रश:

(१)

कष्ट भोगने के बाद जब उसे अपनी भूल का ज्ञान हुआ तो वह बारम्बार मन मे पश्चात्ताप करने लगी । उसने अपनी भूल के लिए गणेश जी से क्षमा -याचना की और व्रत को पुन: भक्तिपूर्वक पूरा किया। उसकी आराधना से गणेश जी प्रसन्न हो गये और सभी कष्टो का निवारण कर उसे धन-धान्य से पूर्ण कर दिया। अतएव इस व्रत को जो प्राणी विधिपूर्वक सम्पन्न कर लेता है उसकी सभी आशएँ पूरी हो जाती है।

इस प्रकार कथा श्रवण करने के पश्चात् चन्द्रोदय हो जाने पर चन्द्र देव को अर्घ्य-प्रदान करना चाहिए। अर्घ्य-दान काल मे "ॐ चन्द्राय नम:" इस मन्त्र का उच्चारण भी करते रहना चाहिए। इसके अनन्तर चार बार परिक्रमा कर चनद्रदेव को दण्डवत करें।इतना कर लेने के पश्चात् घर क वृद्ध जनो को भोजन कराकर स्वयं भोजन करे। पूजाकाल मे व्यवहृत पदार्थ-अर्पित किये गये नैवेद्य आदि को ब्राह्मणो को दान कर देना चाहिए।

इस प्रकार भक्तिभाव से जो लोग इस चतुर्थी व्रत को करते है उनकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती है।

(२)

करवा-चौथ उद्यापन-विधि :

किसी भी व्रत को पूर्णता पर ही उद्यापन करनइ चाहिए। व्रत की तिथि पर ही उद्यापन किया जाता है। जिस वर्ष मे उद्यापन करना हो उस वर्ष की कार्तिक कृष्ण चतुर्थी के दिन व्रत समाप्त होने के पश्चात् एक थाली को कुमकुम से रँजित कर चार-चार की संख्या मे पूड़ी और उस पर शक्कर रखकर तेरह स्थानो पर लगा दें और उस पर एक नयी साड़ी, ब्लाउज, दक्षिणा आदि रखकर अपनी सास को अर्पण कर दें। जिनकी सास न हो उन्हें चाहिए की, वे किसी सधवा ब्राह्मणी को दान कर दें। सम्पूर्ण कृत्य प्रतिपादित करने के अनन्तर ही स्वयं अन्न ग्रहण करे। ऐसा करने से उनका सौभाग्य अक्षय बना रहता है।

गणेश विनायकजी की कहानी

एक अन्धी बुढ़िया थी उसका एक लड़का और लड़के की बहू थी। वो बहुत गरीब था। एक अन्धी बुढ़िया नित्यप्रति गणेशजी की पूजा किया करती थी। गणेशजी साक्षात् सन्मुख आकर कहते थे कि बुढ़िया माई तू जो चाहे सो मांग ले। बुढ़िया कहती मुझे मांगना नहीं आता सो कैसे और क्या मांगू। तब गणेशजी बोले कि अपने बहू बेटे से पूछकर मांग ले। तब बुढ़िया ने अपने पुत्र और बहू से पूछा तो बेटा बोला कि धन मांग ले और बहू ने कहा कि नाति मांग ले। तब बुढ़िया ने सोचा कि बेटा बहू तो अपने-अपने मतलब की बातें कर रहे हैं। अतः उस बुढ़िया ने पड़ौसियों से पूछा तो पड़ौसियों ने कहा कि बुढ़िया तेरी थोड़ी-सी जिन्दगी है। क्यों मांगे धन और नाती, तू तो केवल अपने नेत्र मांग ले जिससे तेरी शेष जिन्दगी सुख से व्यतीत हो जाये। उस बुढ़िया ने बेटे और बहू तथा पड़ौसियों की बात सुनकर घर में जाकर सोचा, जिससे बेटा बहू और मेरा सबका ही भला हो वह भी मांग लूं और अपने मतलब की चीज भी मांग लूं। जब दूसरे दिन श्री गणेशजी आये और बोले-'' बोल बुढ़िया माई क्या मांगती है। हमारा वचन है तो तू मांगेगी सो ही पायेगी। गणेशजी के वचन सुनकर बुढ़िया बोली-''हे गणराज! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे नौ करोड़ की माया दें, निरोगी काया दें, अमर सुहाग दें, आंखों में प्रकाश दें, नाती पोता दें और समस्त परिवार को सुख दे और अन्त में मोक्ष दें। बुढ़िया की बात सुनकर गणेशजी बोले- ''बुढ़िया मां तूने तो मुझे ठग लिया। खैर जो कुछ तूने मांग लिया वह सभी मुझे मिलेगा। यूं कहकर गेणशजी अन्तर्ध्यान हो गए। हे गणेशजी जैसी बुढ़िया मां को मांगे अनुसार आपने सब कुछ दिया है वैसे हीं सबको देना और हमको भी देने की कृपा करना।

श्री गणेशजी की आरती

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ।। जय.
एक दन्त दयावन्त चार भुजा धारी ।
माथे सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी ।। जय.
अन्धन को आँख देत कोढ़िन को काया ।
बाँझत को पुत्र देत निर्धन को माया ।। जय.
हार चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा ।
लड्डुअन का भोग लगे सन्त करे सेवा ।। जय.
दीनन की लाज राखो, शम्भु पुत्र वारी ।
मनोरथ को पूरा करो, जय बलिहारी ।। जय.


अहोई आठे की कथा

आहोई आष्टमी व्रत

यह व्रत कार्तिक मास की कृष्ण-पक्ष अष्टमी के दिन किया जाता है।इस व्रत की आरोग्यता-प्राप्ती एवं दीर्घजीवी संतान होने के निमित्त किया जाता है।

व्रत-विधान एवं पूजन

इस व्रत को दिन भर निराहार रहकर स्त्रियों-द्वारा किया जाता है। रात्रि मे चंद्रोदय होने के बाद दीवार पर बनी अहोई माता के चित्र के सामने किसी एक लोटे मे जल भरकर रख दे। चाँदी-द्वारा निर्मित चाँदी की स्याऊ की मूर्ति और दो गुडिया रखकर उसे मौली मे गूंधले।तत्पश्चात रोली, अक्षत से उनकी पूजा करे। पूजा करने के बाद दूध-भात, हकवा आदि का उन्हे नैवेद्य अर्पित करे।

तदान्त पहके से रखे जलपूर्ण-पात्र से चन्द्रमा को अधर्यदान करे।इसके अनन्तर हाथ मे गेहूँ के सात दाने रखकर अहोई माता की कथा सुने। कथा श्रवण करने के बाद मौली मे पिरोयी गयी अहोई माता को गले मे पहन ले। अर्पित किये गये नैवेद्य को ब्राह्मण को दान कर दे। यदि ब्राह्मण न हो तो अपनी सास को ही देदे। इसके अनन्तर स्वयं भोजन करे।

प्रत्येक सन्तानोत्पत्ति के पश्चात एक-एक अहोई माता की मूर्ति बनवाकर पूर्व के गूथे हुए मौली मे बढाती जाए। प्रत्येक पुत्रो के विवाहोपरान्त भी इसी प्रकार की क्रिया दुहराये। जब भी गले से अहोई उतारने की आवश्यकता पडे तो किसी शुभ दिन मे उतार कर उन्हे गुड आदि का नेवेद्य देकर जल का आचमन कराकर रख दे। ऐसा करने से सन्तान मे वृद्धि होती है। अहोई अष्टमी -पूजन के बाद ब्राह्मण को कूष्माण्ड दान करने से विशेष फल की प्राप्ती होती है।

सेठ-सेठानी की कथा (१)

किसी नगर मे साहूकार रहता था। उसके सात पुत्र थे। एक दिन साहूकार की पत्नी खदान मे-से खोदकर मिट्टी लाने के लिए गयी। ज्यों ही उसने मिट्टी खोदने के लिए कुगाल चलाई त्योंही उसमे रह-रहे स्याऊ के बच्चे प्रहार से आहत होकर मृत हो गए। जब साहूकार की पत्नी ने स्याऊ को रक्तरंजित देखा तो उसे बच्चो के मर जाने का अत्याधिक दु:ख हुआ। परन्तु जो कुछ होना था वो हो चुका था। यह भूल उससे अनजाने मे हो गयी थी। अत: दु:खी मन से वह घर लौट आई। पश्चात्तप के कारण वह मिट्टी भी नही लाई।

इसके बाद स्याहु जब घर मे आई तो उसने अपने बच्चो को मृतावस्था मे पाया। वह दु:ख से कतार हो अत्यन्त विलाप करने लगी। उसने ईश्वर से प्रार्थना कि, जिसने मेरे बच्चो को मारा है उसे भी त्रिशोक-दु:ख भुगतना पड़े। इधर स्याऊ के श्राप से एक वर्ष के अन्दर ही सेठानी के सातों पुत्र काल-कलवित हो गए। इस प्रकार की दु:खद घटना देखकर सेठ-सेठानी अत्यन्त शोकाकुल हो उठे।

उस दम्पति ने किसी तीर्थ स्थान पर जाकर अपने प्राणो का विर्सजन कर देने का मन मे संकल्प कर लिया। मन मे ऐसा निश्चय कर सेठ-सेठानी घर से पैदल ही तीर्थ की ओर चल पड़े। उन दोनो का शररि पूर्ण रूप से अशक्त न हो गया तब तक वे बराबर आगे बढते रहे। जब वे चलने मे बिल्कुल असमर्थ हो गये,तो रास्ते मे ही मूर्छित हो कर भूमि पर गिर पड़े। उन दोनो की इस दयनीय दशा को देखकर करूणानिधि भगवान् उन पर दयार्द्र हो गये और अकाशवाणी की - 'हे सेठ ! तेरी सेठानी ने मिट्टी खोदते समय अनजाने मे ही सेही के बच्चो को मार डाला था। इस लिऐ तुझे भी अपने बच्चो का कष्ट सहना पड़ा। भगवान् ने आज्ञा दी- अब तुम दोनो अपने घर जाकर गाय की सेवा करो और अहोई आष्टमी आने पर विधि-विधान पूर्वक प्रेम से अहोई माता की पूजा करो। सभी जीवो पर दया भाव रखो, किसी को अहित न करो। यदि तुम मेरे कहने के अनुसार आचरण करोगे, तो तुम्हे सन्तान सुख प्राप्त हो जायेगा।'

इस आकाशवाणी को सुनकर सेठ-सेठानी को कुछ धैर्य हुआ और वे दोनो भगवाती का सम्रण करते हुए अपने घर को प्रस्थान किये। घर पहुँचकर उन दोनो ने आकाशवाणी के अनुसार कार्य करनइ प्रारम्भ कर दिया। इसके साथ ईर्ष्या-द्रेष की भावना से रहित होकर सबी प्राणियो पर करूणा का भाव रखना प्ररम्भ कर दिया।

भगवत्-कृपा से सेठ-सेठानी पुन: पुत्रवान् होकर सभी सुखो का भोग करने लगे और अन्तकाल मे स्वर्गगामी हुए ।

साहुकार की कथा (२)

एक साहुकार के सात बेटे, सात बहुएँ एंव एक कन्या थी। उसकी बहुँए कार्तिक कृष्ण अष्टमी को अहोई माता के पूजन के लिए जंगल मे अपनी ननद के साथ मिट्टी लेने के लिए गयीं। मिट्टी निकालने के स्थान पर ही एक स्याहू की माँद थी। मिट्टी खोदते समय ननद के हाथ से स्याहू का बच्चा चोट खाकर मर गया। स्याहू की माता बोली, अब मै तेरी कोख बाँधूगी अर्थात अब तुझे मै सन्तान-विहीन कर दूँगी । उसकी बात सुनकर ननद ने अपनी सभी भाभियों से अपने बदले मे कोख बँधा लेने के लिए आग्रह किया, परन्तु उसकी सभी भाभियों ने उसके प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया । परन्तु उसकी छोटी भाभी ने कुछ सोच-समझकर अपनी कोख बँधवाने की स्वीकृति ननद को दे दी ।

तदान्तर उस भाभी को, जो भी सन्तान होती वे सात दिन के बाद ही मर जाती। एक दिन पण्डित को बुलाकर इस बात का पता लगाया गया ।

पण्डित ने कहा तुम काली गाय की पूजा किया करो । काली गाय रिश्ते मे स्याहू की भायली लगती है। वह यदि तेरी कोख छोड़ दे तो बच्चे जिवित रह सकते है। पण्डित की बात सुनकर छोटी बहु ने दुसरे दिन से ही काली गाय की सेवा करना प्रारम्भ कर दिया। वह प्रतिदिन सुबह सवेंरे उठकर गाय का गोबर आदि साफ कर देती । गाय ने अपने मन मे सोचा कि, यह कार्य कौन कर रहा है, इसका पता लगाऊँगी। दूसरे िदन गाय माता तड़के उठकर क्या देखती है कि उस स्थान पर साहुकार की एक बहु झाड़ू बुहारी करके सफाई कर रही है। गऊ माता ने उस बहु से पूछा कि तू किस लिए मेरी इतनी सेवा कर रही है और वह उससे क्या चाहती है? जो कुछ तेरी इच्छा हो वह मुझ से माँग ले । साहुकार की बहु ने कहा - स्याहू माता ने मेरी कोख बाँध दी है जिससे मेरे बच्चे नही बचते है । यदि आप मेरी कोख खुलवा दे तो मै अपका बहुत उपकार मानूँगी । गाय माता ने उसकी बात मान ली और उससे साथ लेकर सात समुद्र पार स्याहू माता के पास ले चली । रास्ते मे कड़ी धूप से ब्याकुल होकर दोनो एक पेड़ की छाया मे बैठ गयी ।

जिस पेड़ के नीचे वह दोनो बैठी थी उस पेड़ पर गरूड़ पक्षी का एक बच्चा रहता था। थोड़ी देर मे ही एक साँप आकर उस बच्चे को मारने लगा । इस दृश्य को देखकर साहूकार की बहु ने उस साँप को मारकर एक डाल के नीचे छिपा दियाऔर उस गरूड़ के बच्चे को मरने से बचा लिया। इस के पश्चात् उस पक्षी की माँ ने वहाँ रक्त पड़ा देखकर साहूकार की बहू को चोंच से मारने लगीं ।

तब साहूकार की बहू ने कहा - मैने तेरे बच्चे को नही मारा है । तेरे बच्चे को

क्रमश:

डसने के लिए एक साँप आया था मैंने उसे मारकर तेरे बच्चे की रक्षा की है। मरा हुआ साँप डाल के नीचे दभा हुआ है । बहू की बातों से वह प्रसन्न हो गई और बोली – तू जो कुछ चहाती है मुझसे माँग ले । बहू ने उस से कहा – सात समुद्र पार स्याहू माता रहती है तू मुझे सउ टक पहूँचा दे । तब उस गरूड़ पंखिनी ने उन दोनों को अपनी पीठ पर बिठाकर समुद्र के उस पार स्याहू माता के पास पहुँचा दिया।

स्याहू माता उन्हे देखकर बोली – आ बहिन, बहुत दिनों बाद आयी है । वह पुन: बोली मेरे सिर मे जूँ पड़ गयी है। तू उसे निकाल दे। उस काली गाय के कहने पर साहूकार की बहू ने सिलाई से स्याहू माता की सारी जूँओ को निकाल दिया। इस पर स्याहू माता अत्यन्त खुश हो गयीं । स्याहू माता ने उस साहूकार की बहू से कहा – तेरे सात बेटे और सात बहूएँ हो । सुनकर साहूकार की बहू ने कहा – मुझे तो एक भी बेटा नही है सात कहाँ से होगें । स्याहू माता ने पूछा – इसका कारण क्या है ? उसने कहा यदि आप वचन दें तो इसका कारण बता सकती हूँ । स्याहू माता ने उसे वचन दे दिया । वचन-बद्ध करा लेने के बाद साहूकार की बहू ने कहा – मेरी कोख तुम्हारे पास बन्द पड़ी है, उसे खोल दें ।

स्याहू माता ने कहा – मै तेरी बातों मे आकर धोखा खा गयी । अब मुझे तेरी कोख खोलनी पड़ेगी । इतना कहने के साथ ही स्याहू माता ने कहा – अब तू घर जा । तेरे सात बेटे और सात बहुएँ होगीं । घर जाने पर तू अहोई माता का उद्यापन करना ! सात सात अहोई बनाकर सात कड़ाही देना । उसने घर लौट कर देखा तो उसके सात बेटे और सात बहुएँ बैठी हुई मिलीं । वह खुशी के मारे भाव-विभोर हो गयी । उसने सात अहोई बनाकर सात कड़ाही देकर उद्यापन किया। इसके बाद ही दिपावली आया। उसकी जेठानियाँ परस्पर कहने लगीं –सब लोग पूजा का कार्य शीध्र पूरा कर लो । कहीं ऐसा न हो कि, छोटी बहू अपने बच्चों का स्मरण कर रोना- धोना न शुरू कर दे । नहीं तो रंग मे भंग हो जायेगा । जानकारी करने के लिए उन्होने अपने बच्चो को छोटी बहू के घर भेजा । क्योकि छोटी बहू रूदन नही कर रही थी । बच्चों ने घर जाकर बताया की वह वहाँ आटा गूँथ रही है और उद्यापन का कार्यक्रम चल रहा है ।

इतना सुनते ही सभी जेठानियाँ आकरउससे पूछने लगी कि, तूने अपनी कोख कैसे खुलवायी । उसने कहा –स्याहू माता ने कृपाकर उसकी कोख खोल दी । सब लोग अहोई माता की जय-जयकार करने लगे । जिस तरह अहोई माता ने उस साहूकार की बहू की कोख को खोल दिया उसी प्रकार इस व्रत को करने वाली सभी नारियो की अभिलाषा पूर्ण करें ।

समाप्त

अहोई अष्टमी दूसरी कथा

प्राचीनकाल में झांसी के समीप दतिया नामक नगर में चन्द्रमान नामक साहूकार रहता था। उसकी चन्द्रिका बहुत सुन्दर सर्वगुण सम्पन्न सती साधवी शीलवन्त चरित्र वान तथा बुद्धिमान थी। उसके कई पुत्र पुत्रियाँ थी। परन्तु वे सब बाल अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो गये। इस प्रकार सन्तान के मर जाने का उन्हें बहुत दुःख था। वे पति व पत्नि नित्यप्रति मन ही मन में सोचा करते थे कि हमारे मन जाने के बाद इस अपार धन सम्पत्ति का अधिकारी कौन होगा। एक दिन उन दोनों ने निश्चय कर लिया कि इस समस्त धन समपत्ति को त्यागकर कहीं बन चलकर भजन करें। ऐसा विचार करके वे दोनों अपना सब घर-द्वार ईश्वर भरोसे पर छोड़कर जंगल को चल दिये। जब चलते-चलते थक जाते तो कुछ ठहर कर विश्राम करते और फिर चल पड़ते। इस प्रकार चलते-चलते वे दोनों बद्रिका आश्रम के समीप शीतल कुण्ड पर जा पहुंचे। वहां पहुंचकर उन दोनों ने खान-पान आदि सब त्याग दिया और निराहार अपने प्राणों को त्याग देने का निश्चय कर लिया। इसी तरह बिन आहार और जल-पान के सब सात दिन व्यतीत कर दिये। तब सातवें दिन आकाशवाणी हुई कि तुम दोनों प्राणी अपने प्राण मत त्यागो। यह सब दुःख तुम्हें तुम्हारे पूर्व पापों से भोगना पड़ा है सो अब तुम अपनी स्त्री से अहोई आठें जो कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष में आए उसी आठे को अहोई माताा का व्रत और पूजन कराओ।

तब अहोई नामक देवी प्रसन्न होकर साक्षात् दर्शन देगी। तब तुम उससे अपने पुत्रों की दीर्घायु मांग लेना और व्रत के दिन तुम रात्रि को राधा कुण्ड में स्नान करना। तत्पश्चात् इस आकाशवाणी के अनुसार चन्द्रभान की स्त्री उस चन्द्रिका ने बड़ी श्रद्धा और स्वच्छ भावना से विधि-विधान से अहोई आठें का व्रत किया और स्त्री ने राधा कुण्ड में स्नान किया। जब वे दोनों स्नान करके वापिस लौटे तो उन पर प्रसन्न होकर अहोई माता ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर वर माँगने को कहा। तब उस साहूकार दम्पत्ति ने हाथ जोड़कर कहा कि हे माता! हमारे बच्चे कम आयु में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं सो आप बच्चों की दीर्घायु होने का वरदान दे दिया। यह कहकर अहोई माता वहीं अंतर्ध्यान हो गई। इसके बाद साहूकार-साहूकारिनी लौटकर अपने घर आ गये और अहोई माता की कृपा से कुछ ही दिनों बाद पुत्रवान् हो गये और गुणवान्, बुद्धिमान पुत्र पाकर आनन्द विभोर हो गये। अहोई माता की कृपा से इस लोक में सुख भोगकर बैकुण्ठ को चले गये।

श्री अहोई माता की आरती

जय अहोई माता जय अहोई माता । तुमको निसदिन ध्यावत हरि विष्णु धाता ।। जय॰
ब्रह्माणी रूद्राणी कमला तू ही है जग दाता । सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता ।। जय॰
माता रूप निरंजन सुख सम्पत्ति दाता । जो कोई तुमको ध्यावत नित मंगल पाता ।। जय॰
तू ही है पाताल बसन्ती तू ही है सुख दाता । कर्म प्रभाव प्रकाशक जगनिधि से त्राता ।। जय॰
जिस घर थारो वास वही मे गुण आता । कर न सके सोई कर ले मन नही घबराता ।। जय॰
तुम बिन सुख न होवे पुत्र न कोई पाता । खान-पान का वैभव तुम बिन नही आता ।। जय॰
शुभ गुण सुन्दर युक्ता क्षीर निधि जाता । रतन चतुर्दश तोकूं कोई नही पाता ।। जय॰
श्री अहोई माँ की आरती जो कोई गाता । उर उमंग अति उपजे पाप उतर जाता ।। जय॰


शुभ
लाभ



धनतेरस कथा

एक बार यमराज ने अपने दूतों से प्रश्न किया- क्या प्राणियों के प्राण हरते समय तुम्हें किसी पर दया भी आती है? यमदूत संकोच में पड़कर बोले- नहीं महाराज! हम तो आपकी आज्ञा का पालन करते हैं। हमें दया-भाव से क्या प्रयोजन? यमराज ने सोचा कि शायद ये संकोचवश ऐसा कह रहे हैं। अतः उन्हें निर्भय करते हुए वे बोले- संकोच मत करो। यदि कभी कहीं तुम्हारा मन पसीजा हो तो निडर होकर कहो। तब यमदूतों ने डरते-डरते बताया-सचमुच! एक ऐसी ही घटना घटी थी महाराज, जब हमारा हृदय काँप उठा था। ऐसी क्या घटना घटी थी?- उत्सुकतावश यमराज ने पूछा। महाराज! हंस नाम का राजा एक दिन शिकार के लिए गया। वह जंगल में अपने साथियों से बिछड़ कर भटक गया और दूसरे राज्य की सीमा में चला गया। वहाँ के शासक हेमा ने राजा हंस का बड़ा सत्कार किया। उसी दिन राजा हेमा की पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया था। ज्योतिषियों ने नक्षत्र गणना करके बताया कि यह बालक विवाह के चार दिन बाद मर जाएगा। राजा हेमा के आदेश से उस बालक को यमुना के तट पर एक गुहा में ब्रह्मचारी के रूप में रखा गया। उस तक स्त्रियों की छाया भी न पहुँचने दी गई। किन्तु विधि का विधान तो अडिग होता है। समय बीतता रहा। संयोग से एक दिन राजा हंस की युवा बेटी यमुना के तट पर निकल गई और उसने उस ब्रह्मचारी बालक से गंधर्व विवाह कर लिया।

page 1

चौथा दिन आया और राजकुँवर मृत्यु को प्राप्त हुआ। उस नवपरिणीता का करुण विलाप सुनकर हमारा हृदय काँप गया। ऐसी सुंदर जोड़ी हमने कभी नहीं देखी थी। वे कामदेव तथा रति से भी कम नहीं थे। उस युवक को काल ग्रस्त करते समय हमारे भी अश्रु नहीं थम पाए थे।

यमराज ने द्रवित होकर कहा- क्या किया जाए? विधि के विधान की मर्यादा हेतु हमें ऐसा अप्रिय कार्य करना पड़ा। महाराज! -एकाएक एक दूत ने पूछा- क्या अकाल मृत्यु से बचने का कोई उपाय नहीं है? यमराज ने अकाल मृत्यु से बचने का उपाय बताते हुए कहा- धनतेरस के पूजन एवं दीपदान को विधि पूर्वक करने से अकाल मृत्यु से छुटकारा मिलता है। जिस घर में यह पूजन होता है, वहाँ अकाल मृत्यु का भय पास भी नहीं फटकता।

इसी घटना से धनतेरस के दिन धन्वन्तरि पूजन सहित दीपदान की प्रथा का प्रचलन शुरू हुआ।

श्री लक्ष्मी जी की कहानी

प्राचीन समय में एक नगर में एक साहूकार था उसकी एक लड़की थी वह नित्य पीपल देवता की पूजा करती थी। उसने देखा कि श्री महालक्ष्मी जी उसी पीपल से निकला करती हैं। एक दिन लक्ष्मी जी उस साहूकार की लड़की से बोली कि मैं तुझ पर बहुत प्रसन्न हूँ, इसलिए तू मेरी सहेली बनना स्वीकार कर ले। लड़की बोली क्षमा कीजिए मैं अपने माता-पिता से पूछकर बताऊंगी। इसके बाद वह अपने माता-पिता की आज्ञा प्राप्त कर श्री लक्ष्मी जी की सहेली बन गई। श्री महालक्ष्मी उससे बड़ा प्रेम करती थीं एक दिन महालक्ष्मी जी ने उस लड़की को भोजन जीमने को निमंत्रण दिया। जब लड़की भोजन पाने को गई तो लक्ष्मी जी ने उसे सोने चांदी के बर्तनों में खाना खिलाया और सोने की चौकी पर उसे बैठाया और बहुमूल्य दिव्य दुशाला उसे ओढ़ने को दिया। तत्पश्चात् लक्ष्मी जी ने कहा कि मैं भी कल यहां जीमने को आऊंगी। लड़की ने स्वीकार कर लिया और अपने माता-पिता से सब हाल कहकर सुनाया तो सुनकर उसे माता-पिता बहुत प्रसन्न हुए। परन्तु लड़की उदास हो करके बैठ गई। कारण पूछने पर उसने अपने पिता को बताया कि लक्ष्मी जी का वैभव बहुत बड़ा है, मैं उन्हें कैसे सन्तुष्ट कर सकूंगी। उसके पिता ने कहा कि बेटी गोबर से पृथ्वी को लीपकर जैसा भी बन पाये उन्हें रूखा-सूखा श्रद्धा और प्रेम से खिला देना, यह बात पिता कहने भी न पाया कि सहसा एक चील मंडराती हुई आई और किसी रानी का नौलखा हार वहीं डाल गई यह देखकर साहूकार की लड़की बहुत प्रसन्न हो गई। उसने हार को थाल में रख करके बहुत बढ़िया दुशाले से ढककर रख दिया। तब तक श्री गणेश और महालक्ष्मी जी भी वहाँ आ गए। लड़की ने उन्हें सोने की चौकी पर बैठने को कहा इस पर श्री महालक्ष्मी जी ने कहा कि इस पर तो राजा रानी बैठते हैं हम कैसे बैठें। बहुत आग्रह करने पर महालक्ष्मी जी और गणेश जी ने बड़े प्रेम से भोजन किया। लक्ष्मी जी के और गणेश जी के पदार्पण करते ही साहूकार का घर सुख-सम्पत्तियों से भर गया। हे महालक्ष्मी जी! जिस प्रकार साहूकार का घर धन-सम्पत्ति से भर गया था उसी प्रकार सभी के घरों में धन-सम्पत्ति भरकर सभी को कृतार्थ कर दो।

राजा बलि की कथा

एक बार महाराज युधिष्ठिर ने भगवान् श्री कृष्ण से विनयपूर्वक पूछा कि, हे भगवन्! आप मुझे कृपा कर कोई ऐसा व्रत या अनुष्ठान बतायें, जिसके करने से मै अपने नष्ट राज्य को पुन: प्राप्त कर सकूँ, क्योंकि राज्यच्युत हो जाने के कारण मैं अत्यन्त दु:खी हूँ ।

श्री कृष्ण जी ने कहा - हे राजन् ! मेरा परमभक्त दैत्यराज बलि ने एक बार सौ अश्वमेघ यज्ञ करने का संकल्प किया । निनयानबे यज्ञ तो उसने निर्विघ्न रूप से पूर्ण कर लिये, परन्तु सौवाँ यज्ञ के पूर्ण होते ही उनहे अपने राज्य से निर्वासित होने का भय सताने लगा ।

देवताओं को साथ लेकर इन्द्र क्षीरसागर निवासी भगवान् विष्णु के पास पहुँचकर वेद - मन्त्रों से स्तुति की और अपने कष्ट का सम्पूर्ण वृत्तान्त भगवान् विष्णु से कह सुनाया । सुनकर भगवान् ने उनसे कहा - तुम निर्भय होकर अपने लोक मे जाओ । मै तुम्हारे कष्ट को शीघ्र दूर करूँगा ।

इन्द्र के चले जाने पर भगवान् ने वामन का अवतार धारण कर बटुवेश मे राजा बलि के यज्ञ मे प्रस्थान किया । राजा बलि को वचनबद्ध कर भगवान् ने तीन पग भूमि उनसे दान मे माँग ली । बलि द्वारा दान का संकल्प करते ही भगवान् ने अपने विराट् रूप से एक पग मे सारी पृथ्वी को नाप लिया । दूसरे पग से अंतरिक्ष और तीसरा चरण उसके सिर पर रख दिया । राजा बलि की दानशीलता से प्रसनन हो भगवान् ने उससे वर माँगने को कहा । राजा के कहा - कार्तिक कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी से अमावस्या तक अर्थात दीपावली तक इस धरती पर मेरा राज्य रहे । इन तीन दिनों तक सभी लोग दीप -दान कर लक्ष्मी जी की पूजा करें और कर्ता के गृह मे लक्ष्मी का वास हो ।

राजा द्वारा याचित वर को देकर भगवान् ने बलि को पातालपुरी का राज्य देकर पाताल लोक को भेज दिया । उसी समय से देश के सम्पूर्ण नागरिक इस पूनित दीपावली पर्व को मनाते चले आ रहे है । अत: सभी प्राणियों के लिये इस पर्व को सदभावना पूर्वक मनाना आवश्क ही नही बल्कि अनिवार्य भी है ।

श्री लक्ष्मी जी की आरती

ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता
तुम को निस दिन सेवत, मैया जी को निस दिन सेवत
हर विष्णु विधाता ।
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

उमा रमा ब्रह्माणी, तुम ही जग माता
ओ मैया तुम ही जग माता ।
सूर्य चन्द्र माँ ध्यावत, नारद ऋषि गाता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

दुर्गा रूप निरन्जनि, सुख सम्पति दाता
ओ मैया सुख सम्पति दाता ।
जो कोई तुम को ध्यावत, ऋद्धि सद्धि धन पाता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

तुम पाताल निवासिनि, तुम शुभ दाता
ओ मैया तुम ही शुभ दाता ।
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि, भव निधि की दाता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

जिस घर तुम रहती तहँ सब सद्‌गुण आता ।
ओ मैया सद्‌गुण आता ।
सब संभव हो जाता, मन नहीं घबराता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

तुम बिन यज्ञ न होते, वस्त्र न कोई पाता
ओ मैया वस्त्र ना पाता ।
खान पान का वैभव, सब तुम से आता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

शुभ गुण मंदिर सुंदर, क्षीरोदधि जाता
ओ मैया क्षीरोदधि जाता ।
रत्न चतुर्दश तुम बिन, कोई नहीं पाता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

महा लक्ष्मीजी की आरती, जो कोई जन गाता
ओ मैया जो कोई गाता ।
उर आनंद समाता, पाप उतर जाता
ॐ जय लक्ष्मी माता ।।

श्री गणेशजी की आरती

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ।। जय.
एक दन्त दयावन्त चार भुजा धारी ।
माथे सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी ।। जय.
अन्धन को आँख देत कोढ़िन को काया ।
बाँझत को पुत्र देत निर्धन को माया ।। जय.
हार चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा ।
लड्डुअन का भोग लगे सन्त करे सेवा ।। जय.
दीनन की लाज राखो, शम्भु पुत्र वारी ।
मनोरथ को पूरा करो, जय बलिहारी ।। जय.


© drikPanchang.com

एकादशी व्रत कथा

वर्ष मे २४ एकादशी होती है तथा अधिक मास मे २ कुल २६ एकादशी होती है, उनके नाम यह है – १. उत्पन्ना, २. मोक्षदा, ३. सफला, ४. पुत्रदा, ५. जया, ६. विजया, ७. पापमोषनी, ८. कामदा, ९. मोहिनी, १०. योगिनी, ११. पवित्रा, १२. पुत्रदा, १३. अजा, १४. इन्दिरा, १५. रमा, १६. पापांकुशा, १७. देवशयनी, १८. सफला, १९. निर्जला, २०. आमलकी, २१. परियर्सिनी, २२. देवोत्थानी, २३. वरुथिनी २४. कामदा। इन नामो के अतिरिक्त अधिक मास मे पद्मिनी और परमा ये दो एकादशी होती है। यह नामानुसार फल देती है ।

श्री सूत जी महाराज ब्राह्मणो से बोले हे ब्राह्मणो ! इस विधि युक्त उत्तम माहात्म्य को श्रीकृष्ण जी ने कहा था, विशेष कर जो इस व्रत की उत्पत्ति भक्ति से सुनते है वह इस लोक मे अनेक प्रकार के सुख भोग कर अन्त मे दुष्प्राप्य विष्णुलोक को पाते है । पूर्व काल मे श्री भगवान् ने अर्जुन के प्रति एकादशी व्रत की उत्पत्ति विधि इत्यादि कही थी सो उन्ही के कथोपकथन रूप से मै कहता हूँ । अर्जुन ने पूछा कि हे जनार्दन ! जो रात्रि मे उपवास करते है तथा एक समय भोजन करते है उन्हे कैसा पुण्य मिलता है और उस उपवास करने की विधि क्या है? शो अब आप कृपा करके कहिए । यह सुनकर श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा कि सबसे प्रथम दशमी की रात्रि को दन्तधावन करे अर्थात दिन के आठवे प्रहर मे जब सूर्य का तेज मन्द पड़ जाय तब दन्तधावन करना चाहिए और रात्रि को भोजन न करे, पुन: प्रात:काल निश्चिन्त चित्त होकर संकल्प करे, मध्यान्ह मे भी संकल्प पूर्वक स्नान करे । नदी, तालब और वापी कूप आदि मे स्नान करना चाहिए। स्नान के पहले मृत्तिका स्नान अर्थात मिट्टी का चन्दन लगाना चाहिए ।

क्रमश:

(१)

स्नान करने व्रती पुरूष पतित, चोर, पाखंडी, मिथ्या दूसरो का अपवाद करने वाला, देवता, वेद और ब्राह्मणो की निन्दा करने वाला और जो अगम्या गमन करने वाला, दुराचारी परद्रव्य चुराने वाला इन सबो से भात न करे, यदि दैवत् इनको देखले तो इस पाप को दूर करने के लिए सूर्य को देखे । स्नान के अनन्तर सादर नैवेद्य आदि अर्पण करे । उस दिन निद्रा और मैथुन न करे । दिन तथा रात्रि नृत्य गायन आदि सद्वार्ता से बितावे। भक्ति युक्त होकर ब्राह्मणो को दक्षिणा देवे और प्रणाम पूर्वक उनसे अपनी त्रुटि की क्षमा करावे । शुक्लपक्ष की और कृष्णपक्ष की एकादशी दोनो धार्मिको के लिए समान है, इन दोनो एकादशी मे भेद बुद्धि उचित नही है। इस प्रकार जो एकादशी व्रत करते है उन मनुष्यो को शंखोद्धार तीर्थ मे स्नान करके भगवान् के दर्शन से जो पुण्य होता है वह एकादशी व्रत के पुण्य के सोलहवे हिस्से के भी बराबर नही है, व्यतीपात योग मे सं.काति समय मे, चन्द्र-सूर्य ग्रहण मे, कुरूक्षेत्र मे स्नान से जो फल प्राप्त होता है, वह सब एकादशी के व्रत करने से मनुष्य को प्राप्त होता है ।अश्वमेघ यज्ञ करने से जो फल होता है उससे सौ गुना अधिक पुण्य एकादशी व्रत से भी होता है । जिस मनुष्य एक सहस्त्र तपस्वी साठ हजार वर्ष भोजन करे, उसे जो पुण्य प्राप्त होता है सो एकादशी व्रत से भी होता है । वेद वेदांग पूर्ण ब्राह्मण को एक हजार गौदान करने से जो पुण्य होता है उससे दस गुना अधिक पुण्य एकादशी व्रत से होता है। दस उत्तम ब्राह्मणो को भोजन कराने से जो पुण्य होता है। उससे दस गुना अधिक पुण्य एकादशी व्रत से होता है। दस उत्तम ब्राह्मणो को भोजन कराने से जो पुण्य होता है। उससे दस गुना अधिक ब्रह्मचारियो के भोजन से होता है इससे हजार गुना अधिक खन्या और भुमिदान से पुण्य है इससे दस गुना अधिक विद्यादान शे पुण्य है, विद्या दान से दस गुना अधिक पुण्य भूखे को अनन देने से होता है। अन्न दान के बराबर और दुसरा पुण्य नही है।

क्रमश:

(२)

इसके द्वारा स्वर्गीय पितर तृप्त होते है इसके पुण्य का प्रभाव देवताओ को भी जानना दुर्लभ है। नक्तव्रत करने का आधा फल एक भुक्त व्रत से होता है। एकादशी को इनमे से कोई करना चाहिए। तीर्थ तभी तक गर्जना करते है, दान नियम यम अपने फल की तभी तक घोषणा करता है, यज्ञो का फल तभी तक है झब तक की दस एकादशी प्राप्त नही हुई है। इस कारण अवश्य एकादशी व्रत करना चाहिए। शंख से जल नही पीना छाहिए । मछली और सूआ नही खाना चाहिए और अन्न नही खाना चाहिए, एक एकादशी के समान हजार यज्ञ भी नही है। अर्जुन ने पूछा हे देव! आप इस तीर्थ को सब तीर्थों से श्रेष्ठ तथा पवित्र कहते है। इसमे क्या कारण है ? भगवान् ने कहा कि- पहले सतयुग मे मुर नामक एक भयंकर दैत्य था जिसके भय से सभी देवता भयभीत थे। उसने इन्द्र आदि सभी देवताओ को जीतकर उन्हे उनके स्थान से भ्रष्ट कर दिया था। तब इन्द्र ने महादेव जी से कहा कि- हम लोग इस समय मुर दैत्य के अत्याचार से पीड़ित होकर मृत्युलोक मे अपना काल बिता रहे है और देवताओ की दशा तो कही नही जाती सो कृपा करके इस दु:ख से छुटने का उपाय बतलाइये। श्री महादेव जी ने कहा कि- देवो के राजा इन्द्र आप भगवान् विष्णु के पास जाइये । महादेव जी के वचन को सुनकर देवराज इन्द्र देवताओ को साथ लेकर क्षीर सागर मे जहां जगत्पति जनार्दन सोये थे, वहाँ गये। भगवान को सोये देखकर इन्द्र ने हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की- हे देवताओ के देव ! हे देवपूजित ! आपको नमस्कार है। दैत्यो के नाशक मधुसूदन ! हे पुंडरीकाक्ष ! आप हम लोगो की रक्षा करे। हे जगन्नाथ ! दैत्यो से डरकर सब देवता मेरे साथ आपकी शरण मे आए है। आप हम लोगो की रक्षा करे । आप इस जगत् के स्थिति कर्ता, उत्पत्तिकर्ता और संहारकर्ता है। आप देवताओ के सहायक है तथा उन्हे सुख देने वाले है। आप पृथ्वी है, आकाश है और संसार के प्राणियो के उपकारक है। आप ही संसार है तथा सम्पूर्ण त्रैलोक्य

क्रमशः

(३)

की रक्षा करने वाले है। आप देवताओ के सहायक है तथा उन्हे सुख देने वाले है। आप ही सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, हव्य, मन्त्र, तन्त्र, यजमान, यज्ञ ओर समस्त कर्म फल भोक्ता ईश्वर भी है। इस सम्पूर्ण जगत मे ऐसा कोई स्थान नही है जहाँ आप न होवे । हे शरणद: ! आये हुओ के रक्षक हे देव- देव भगवान् ! आप हम लोगो की रक्षा करे । इस समय दानवो ने देवताओ को जीत लिया है और उन्हे स्वर्ग से निकाल दिया है, अब देवता लोग अपने स्थान को छोड़कर भुमि मे मार-मारे फिरते है, आप ही उन सबके रक्षक है। इस प्रकार से इन्द्र के वचनो को सुनकर भगवान बोले कि- वह कौन दैत्य है ? जिसने देवो को जीता है। वह कहां रहता है, उसका नाम क्या है और उसका बल क्या है ? हे इन्द्र ! यह सब विस्तार पूर्वक कहिए तथा भय छोड़ दो ।यह सुनकर इन्द्र कहने लगे कि हे देव ! पहले एक बड़ा भारी नाड़ीजंघ नामक दैत्य था। जिसकी उत्पत्ति ब्रह्मवंश मे थी और अपने बल से गर्वित होकर देवो को सर्वदा पीड़ित करता था। उसी का पुत्र मरू नामक दैत्य है जिसकी राजधानी का नाम चन्द्रावती है। वह नगरी अति सुन्दर है। वह दैत्य उपने प्रखर वीर्य से सम्पूर्ण विश्व को जीत कर और देवताओ को देवलोक से निकाल कर इन्द्र, अग्नि, यम, वरूण और चन्द्रमा आदि लोकपाल स्वयं बन बैठा है, स्वयं सूर्य बनकर जगत खो तपा रहा है, स्वयं पर्जन्य (मेघ) बन गया है। इस कारण आप देवताओ के लिए दर्द के लिए दर्दमनीय दानव को मारकर देवताओ को विजयी बनाये। श्री भगवान् इन्द्र से अत्याचार सुनकर अत्यन्त क्रुद्ध हुए तथा इन्द्र को सम्बोधन करके बोले कि- देवेन्द्र ! अब मै आप लोगो को शत्रुभय से शीघ्र ही निर्मूल करूंगा और हे बलशाली देवो ! आप लोग सब मिल चन्द्रावती पुरी को जाओ। यह कह श्री भगवान् भी पीछे-पीछे चन्द्रावती को गए। वहां जाकर देखा कि दैत्याधिप मुरू अनेक दैत्यो से परिवेष्टित होकर संग्राम भुमि मे गरज रहा है। युद्ध प्रारंभ होने पर असंख्यात सहस्र दानव दिव्य अस्त्र शस्त्रो से सुसिज्जत होकर लड़ने लगे। अंत मे देवता लोग दानवो से लड़ न सके तब दैत्यो ने देखा कि ह्यषिकेश भगवान् रणभूमि मे उपस्थित है । उन्हे देखकर अनेक दैत्य अस्त्र-शस्त्र से उन पर टूट पड़े। जब भगवान ने देखा कि देवता भाग

क्रमश:

गये है तब शंख च,क गदाधारी भगवान् अस्त्र-शस्त्रो से राक्षसो को विद्ध करने लगे। उन सर्प समान अस्त्रो से विद्ध अनेक दानव इस लोक से चिरदिन के लिए प्रस्थित हुए परन्तु दैत्याधिप निश्चल भाव से युद्ध करता रहा । भगवान् जिन-जिन अस्त्रो का प्रयोग उस पर करे वह सब उसके तेज से कुण्ठित होकर पुष्प के समान उसके अंगो मे मालूम पड़ते थे। अनेक शस्त्रो के प्रयोग उस पर करे वह सब उसके तेज से कुण्ठित होकर पुष्प के समान उसके अंगो मे मालूम पड़ते थे। अनेक शस्त्रो के प्रयोग करने पर भी जब भगवान् उसको न जीत सके तो तब,कुद्ध होकर परिघ तुल्य बाहुओ से मल्ल युद्ध करने लगे। देवताओ के हजार वर्ष भगवान् ने उससे युद्ध किया परन्तु वह नही हारा। तब भगवान् शांत होकर विश्राम करने की इच्छा से बदरिकाश्रम चले गए । वहां अवतालीस कोस की लम्बाई मे विस्तृत और एक द्वार युक्त हेमवती नामक गुफा मे शयन करने के अर्थ भगवान् ने प्रवेश किया। हे धनञ्जय ! मै उस गुफा मे सोया था। इह दानव भी मेरे पीछे-पीछे उस गुफा मे चला आया और मुझे सोता देखकर मारने के लिए उद्यत हुआ। वह समझता था कि आज मै दानवो के चिर शत्रु इनको मारकर उन्हे निष्कण्टक बनाउं । उसी समय मेरे शरीर से अ अत्यन्त सुन्दरी दिव्य अस्त्र लिए एक कन्या उत्पन्न होकर दानवराज के सन्मुख युद्ध के लिए उपस्थित हुई। दानवेन्द उससे युद्ध कइने लगा और युद्ध मे उसकी निपुणता देखकर सोचने लगा कि इस रूद्रास्वरूप स्त्री को किसने बनाया जिसके बाण बर्ज्रो के समान है। पुन: उन दोनो मे घमासान युद्ध आरम्भ हुआ। इस मुहूर्त मे ही उस कन्या ने दानव राज के अस्त्र शस्त्रो को काटकर उसे रथहीन कर दिया। वह दानव विरथ और नि:शस्त्र होकर आक्रमण करने के लिए दौड़ा परन्तु भगवती ने उसे मुष्टिक मारकर जमीन पर गिरा दिया। पुन: उटकर कन्या को मारने की इच्छा से दौड़ा, उसे आते देखकर भगवती ने उसका सिर धड़ से अलग करके उसे यमलोक को भेज दिया और उसके साथी भयभीत होकर पाताल को चले गये । तब भगवान् उठे और सामने हाथ जोड़ खड़ी हुई उस कन्या को देखकर परम प्रसन्न हुए और बोले कि सम्पूर्ण

कमशः

देव गन्धर्व नाग लोकेश सभी को जीतने वाले इस दुष्ट दानव को रण मे किसने मारा है ? जिसके भय से मैने इस कन्दरा का आश्रय लिया था सो किसने कृपाकर मेरी रक्षा की है। कन्या ने उत्तर दिया कि- हे प्रभो! आपको सोया देखकर वह आपको मारना चाहता था कि आपके अंश से उत्पन्न हुई मैने ही इस दानव का संहार करके देवताओ को निर्भय किया है। मै सर्व शुभद्‌मनकारिणी आपकी ही महाशक्ति हूं । हे प्रभो ! आप बतलाइए कि इसके मारने से आपको क्यो आश्चर्य हो रहा है ? भगवान् बोले कि- हे निष्पाप! एस दानव को मारने मे तुझ पर मै अत्यन्त प्रसन्न हूँ इस समय सभी देवता अत्यन्त हर्षित हो गये है और तीनो लोकों मे इस समय सभी देवता अत्यन्त हर्षित हो गये है और तीनो लोकों में इस समय आन्नद छा रहा है। अतएव निस्संकोच होकर तुम्हारी जो इच्छा हो सो वर मांगो । स्मरण रक्खो कि देवताओ को दुर्लभ वर भी तुम मांगोगी तो मै तुम्हे दूंगा। कन्या बोली कि भगवान ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न है और यदि वर देना चाहते है तो मुझे वह वर दीजिए कि यदि कोई उपवास करे तो मै उसके पापों से उसे तारने मे समर्थ होउँ और उपवास से जो पुण्य होता है उससे आधा रात्रि भोजन मे होवे और उसका आधा पुण्य एक संध्या मे भोजन करने वालो को हो । जो मेरे दिन को जितेन्द्रिय भक्ति युक्त होकर उपवास करे सो विष्णु धाम को प्राप्त होवे और अनेक कोटि वर्ष तक वह वहां अनन्त सुख भोग करे। भगवन् ! यदि आप प्रसन्न है तो यही वर दीजिए। यह सुनकर भगवान् बोले कि हे कल्याणि ! जो तुम कहती हो वह सत्य होवे। जो हमारे और आपके भक्त है उनकी कीर्ति जगत में प्रसिद्ध होगी तथा वे मेरे समीप वास करेंगे । हे मेरी उत्तम शक्ति तुम एकादशी तिथि को उत्पन्न हुई हो इस कारण तुम्हारा नाम भी एकादशी होगा। एकादशी उपवास करने वाले के सम्पूर्ण पापो को दूरकर मै उन्हे उत्तम गति दूंगा। विशेष कर अष्टमी चतुर्दशी एकादशी ये तिथियाँ मुझे अत्यन्त प्रिय है। हे पार्थ ! सब तीर्थो से, सब दानो से, सब व्रतो से अधिक पुण्य एकादशी तिथि मे है।विष्णु भगवान इतना वर देके वही अनतर्ध्यान हो गये और एकादशी तिथि भी वर पाकर परम संतुष्ट तथा

क्रमशः

(६)

हर्षित हुई। हे अर्जुन ! जो मनुष्य एकादशी का व्रत करते है मै उनके शत्रुओ को नाश करके अवश्य उत्तम पद देता हूँ। इस प्रकार एकादशी की उत्पत्ति हुई है। यह नित्य एकादशी व्रत सब पापो को नाश करने वाला है। सब पापो को दूर करने और सब प्रकार के मनोरथ सिद्ध करने के लिए यह एक तिथि प्रसिद्ध है। शुक्ल पक्ष की एकादशी अथवा कृष्णपक्ष की एकादशी इन दोनो मे भेद करना उचित नही। दोनो समान है । जो एकादशी का माहात्म्य जो सर्वदा श्रवण या पठन करते है उन्हे अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है । जो विष्णु परायण मनुष्य दिन-रात विष्णु के द्वारा विष्णु की कथा सुनते है वह अपने कोटि पुरुष के साथ विष्णु लोक मे जाकर पूजित होते है। जो एकादशी माहात्म्य का चतुर्थांश भी श्रवण करता है उसके ब्रह्म हत्यादिक पाप छूट जाते है। विष्णु धर्म नही है और एकादशी व्रत के समान दूसरा व्रत नही है ।

(७)

षट्तिला एकादशी व्रत कथा
(माघ कृष्ण - एकादशी)

इस दिन काली गाय तथा काले तिलों को दान का माहात्म्य है । शरीर पर तिल - तेल, गर्दन, तिल-जल स्नान, तिल-जल-पान तथा तिल पकवान इस व्रत के विशिष्ट उपादान है । इस दिन तिलों का हवन करके श्री कृष्ण ने नारद जी को बताया था ।

कथा

एक ब्राह्मणी थी । उसने तपस्या करके अपना शरीर सुखा डाला । उसके तप से प्रसन्न होकर प्रभु भिखारी के रूप मे उसके द्वार पर भीख माँगने गये । ब्राह्मणी ने आक्रोश में आकर उनके भिक्षा पात्र में मिट्टी का ढेला डाल दिया । मरणोपरांत, बैकुण्ड में उसे रहने के लिए मिट्टी का स्वच्छ एवं आलीशान मकान दिया गया । उसके लिए खाने-पीने की कोई व्यवस्था नहीं थी । यह सब देखकर उसे दु:ख हुआ । उसने सोचा मैनें इतना कठोर तप भी किया पर फिर भी मुझे यहाँ खाने-पीने के लिए कुछ भी क्यों उपलब्ध नहीं है ।

उसने प्रभु से इसका कारण पुछा । प्रभु ने कहा - " इसका कारण देवांगन से पूछो।" देवांगनाओ ने उसे बताया - "तुमने षट्तिला एकादशी का व्रत नहीं किया हैं ।" ब्राह्मणी ने पुन: षट्तिला का व्रत किया और स्वर्ग के सारे सुखों का उपभोग किया ।

पापमोचनी एकादशी
(चैत्र कृष्ण एकादशी)

कृष्ण पक्ष के फाल्गुन मास की एकादशी पापमोचनी एकादशी कहलाती है । पापमोचनी एकादशी का व्रत जन्म-जन्मान्तरो के पापों को नष्ट कर देता है । सभी प्रकार की समृद्धि, सुख और अन्त मे मोक्ष प्रदायक इस व्रत को भगवान् विष्णु की पूजा अराधना करने का विधान है ।

पापमोचनी एकादशी कथा

प्राचीन काल में चैत्ररथ नामक एक अति सुन्दर वन था । इस वन में देवराज इंद्र गंधर्व कन्याओं, अप्सराओं तथा देवताओं सहित स्वच्छन्द विहार करते थे । इस वन में च्यवन ऋषि के पुत्र मेधावी नामक ऋषि तपस्या करते थे । ऋषि शिव भक्त तथा अप्सराएं शिवद्रोही कामदेव की अनुचरी थी ।
एक समय की बात है कामदेव ने बदले ओर द्वेष की भावना के तहत ऋषि मेधावी की तपस्या को भंग करना चाहा । इसी उदेश्य की पूर्ति के लिए कामदेव ने मंजुघोषा नामक अप्सरा को भेजा । उसने अपने नृत्य-गान और हाव-भाव से ऋषि का ध्यान भंग किया । अप्सरा के हाव-भाव और नृत्य-गान से ऋषि उस पर मोहित हो गए । फलस्वरूप ऋषि मंजूघोषा के साथ रमण करने लगे और उन्हे दिन और रात का कुछ विचार नही रहा ।
दोनों ने कई साल साथ-साथ गुजारे । एक दिन जब मंजूघोषा ने जाने की आज्ञा माँगी तो ऋषि ने उसे रोकना चाहा । तब मंजूघोषा ने ऋषि को समय का अहसास दिलाया । उन्होने समय की गणना की तो उन्हे अहसास हुआ कि पूरे ५७ वर्ष बीत चुके थे । तब ऋषि को वह अप्सरा काल के समान प्रतीत होने लगी ।
उन्होने अपने को रसातल में पहुँचाने का एकमात्र कारण मंजूघोषा को समझकर, क्रोधित होकर उसे पिशाचनी होने का श्राप दिया । श्राप सुनकर मंजूघोषा भयभीत हो गई और ऋषि के चरणों में गिरकर प्रार्थना करने लगी । कांपते हुए उसने ऋषि से श्राप के निवारण का उपाय पूछा ।
बहुत अनुनय-विनय करने पर ऋषि का दिल पसीज गया । उन्होने कहा - " यदि तुम चैत्र कृष्ण पापमोचनी एकादशी का विधिपूर्वक व्रत करो तो इसके करने से तुम्हारे पाप और श्राप समाप्त हो जाएंगे और तुम पुन: अपने पूर्व रूप को प्राप्त करोगी ।"
मंजूघोषा को मुक्ति का विधान बताकर मेघावी ऋषि अपने पिता महर्षि च्यवन के आश्रम चल पड़े ।
श्राप की बात सुनकर च्यवन ऋषि ने कहा - "पुत्र यह तुमने क्या अनर्थ कर दिया । श्राप देकर अपना सारस पुण्य श्रीण कर दिया । अत: तुम भी पापमोचनी एकादशी का करो ।
इस प्रकार पापमोचनी एकादशी का व्रत करके मंजूघोषा ने शाप से तथा ऋषि मैधावी ने पाप से मुक्ति पाई ।
पापमोचनी एकादशी के व्रत को करने से सब पाप नष्ट हो जाते है । इस कथा को पढने तथा सुनने से एक हजार गौदान का फल मिलता है ।

समाप्त

कामदा एकादशी
(चैत्र शुक्ल एकादशी)

चैत्र मास की अमावस्या को हमारे भारतीय संवत् की अंतिम तिथि होती है और इसकी अगली प्रतिपदा को प्रारम्भ हो जाता है हमारा नया संवत् और भगवती दुर्गा के नवरात्रे । नवरात्रों के बाद आने वाली चैत्र के शुक्ल पक्ष की एकादशी को कामदा अर्थात सभी कामनाओं की पूर्ति करने वाला कहा जाता है । इस दिन भगवान वासुदेव अर्थात वासुदेव के पुत्र श्रीकृष्ण का पूजन किया जाता है और गरीबो को दान देने का विशेष महत्व है।

इस व्रत के एक दिन पूर्व गेंहू और मूंग का एक बार भोजन करके भगवान को याद करना चाहिए । एकादशी वाले दिन प्रात: नानदि से निवृत होकर भगवान की पूजा-अर्चना करनी चाहिए । दिन-भर भजन-कीर्तन करके रात्रि में भगवान की मूर्ति के निकट जागरण करना चाहिए । अगले दिन व्रत का समापन करें । इस व्रत के दिन नमक ना खाएँ। इस व्रत को करने से समस्त मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती है ।

कामदा एकादशी कथा

पुलकित मन से भगवान् श्री कृष्ण को नमस्कार करने के बाद धर्मराज युद्धिष्ठिर ने भगवान् कृष्ण से प्रार्थना की - हे महाराज ! अब मेरी इच्छा चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी के नाम, महात्म्य, पूजा-विधान आदि के बारे में विस्तार पूर्वक जानने की है। तब भगवान् कृष्ण ने कहा - हे राजन् ! यही प्रश्न एक बार महाराज दिलीप ने महर्षि वशिष्ठ जी ने जो कथा महाराज दिलीप को सुनाई थी, वही मैं आपको सुनाता हूँ ।

बहुत समय पहले की बात है रत्नपुर नगर पर अनेक ऐश्वर्यों से युक्त पुण्डरीक नाम का एक राजा राज्य करता था । रत्नपुर नगर में अनेक अप्सरा, किन्नर तथा गन्धर्व वास करते थे । उनमें ललित और ललिता नामक पति-पत्नि भी थे । उन दोनों में अत्यन्त प्रेम था । थोड़े समय के लिए भी दोनों अलग नहीं हो सकते थे। एक बार पुण्डरीक की सभा में अन्य गन्धर्वों के साथ ललित भी गाना गा रहा था। गाते-गाते उसे अपनी प्रियतम ललिता का ध्यान आ गया । इससे उसके गायन का स्वरूप बिगड़ गया। ललित के मन का भाव जानकर कर्कोट नामक नाग ने पद भंग होने का कारण राजा से कह दिया। तब पुण्डरीक ने क्रोधपूर्वक कहा कि तू मेरे सामने गाता हुआ अपनी स्त्री का स्मरण कर रहा है अत: तू कच्चामांस और मनुष्यों को खाने वाला राक्षस बनकर अपने किये कर्म का फल भोग । पुण्डरीक के श्राप से ललित उसी समय विकराल राक्षस हो गया । उसका मुख अत्यन्त भयंकर नेत्र, सूर्य और चन्द्रमा की तरह प्रदीप्त तथा मुख से अग्निनिकलने लगी । सिर के बाल पर्वत पर खड़े वृक्षों के सामन तथा भुजाएं अत्यन्त लम्बी हो गई । इस प्रकार उसका शरीर आठ योजन लम्बा हो गया । राक्षस बनकर अनेक कष्टों को भोगता हुआ जंगल में भटकने लगा । अब तो उसकी स्त्री ललिता भी अत्यन्त दुखी होकर उसके पीछे-पीछे भटकने लगी। वह सदैव अपने पति को इस श्राप से मुक्ति दिलाने के बारे में सोचती रहती । एक दिन वह अपने पति के पीछे-पीछे चलते हुए विन्ध्याचल पर्वत पर श्रृंगी ऋषि के आश्रम तक पहुँच गई । श्रृंगी ऋषि ने ललिता को देखकर पूछा - हे देवी ! तुम कौन हो और यहाँ किसलिए आई हो ? वह बोली - मुनिवर ! मेरा नाम ललिता है । मेरा पति राजा पुण्डरीक के श्राप से भयानक और विशालकाय राक्षस बन गया है । इसका मुझे बहुत दु:ख है । मेरे पति के उद्धार के लिए कोई उपाय बतलाइए । ऋषि बोले हे गंधर्व कन्या ! अब चैत्र शुक्ला एकादशी आने वाली है, जिसका नाम कामदा एकादशी है । उसका व्रत करने से मनुष्य के सब कार्य सिद्ध होते है । यदि तू कामदा एकादशी का व्रत करके उसके पुण्य को अपने पति को दे तो राजा का श्राप

(१)

क्रमश:

भी अवश्यमेव शांत हो जायेगा और तेरा पति शीघ्र ही राक्षस योनि से मुक्ति प्राप्त होगा ।

चैत्र शुक्ला एकादशी (कामदा) आने पर ललिता ने व्रत किया और द्वादशी को ब्राह्मणों के सामने अपने व्रत का फल अपने पति को देती हुई भगवान् से प्रार्थना करने लगी - हे प्रभो ! मैंने जो यह व्रत किया है इसका फल मेरे पति को प्राप्त हो, जिससे वह राक्षस योनि से मुक्त हो जाए । एकादशी का फल देते ही उसका पति राक्षस योनि से मुक्त होकर अपने पुराने स्वरूप को प्राप्त हुआ और अनेक सुन्दर वस्त्राभूषणों से युक्त होकर ललिता के साथ विहार करने लगा । उसके पश्चात् वे दोनो एक दिव्य विमान में बैठकर स्वर्ग लोक को चले गए ।

वशिष्ट मुनि ने आगे कहा - हे राजन् ! इस व्रत को विधिपूर्वक करने से समस्त पापों का नाश हो जाता है तथा राक्षस आदि योनि भी छूट जाती है । संसार में इसके बराबर कोई व्रत नही है । इसकी कथा पढने या सुनने मात्र से ही वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है ।

समाप्त

(२)

वरुथिनी एकादशी
(वैशाख कृष्ण एकादशी)

वैशाख मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी को अत्यन्त पुण्यदायिनी और सौभाग्य-प्रदायिनी वरुथिनी एकादशी कहा जाता है । इस दिन भक्ति भाव से मधुसूदन की पूजा करनी चाहिए । इस व्रत को करने से भगवान् मधुसूदन की प्रसन्नता प्राप्त होती है और समस्त पापों का नाश होता हैं तथा सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है ।

इस व्रत के दिन निम्नलिखित दस वस्तुओं का त्याग कर देना चाहिए - (१)कांसे के बर्तन में भोजन करना, (२) मांस खाना (३) मसूर दाल खाना (४) चना (५) कोदों (६) शाक (७) मधु (८) दूसरे का अन्न (९) दूसरी बार भोजन करना (१०) स्त्री प्रसंग । व्रत वाले दिन पान खाना, दातून करना, परनिन्दा, क्रोध करना, असत्य बोलना, जुआ खेलना आदि भी निषेध हैं ।

वरुथिनी एकादशी के व्रत से अन्न दान तथा कन्या दान दोनों के योग के बराबर फल मिलता है । इस व्रत को करने से स्वर्ग लोक की प्राप्ति होती है तथा इसके महात्म्य को पढने या सुनने मात्र से एक हजार गोदान का फल मिलता है ।

मोहिनी एकादशी
(वैशाख शुक्ल एकादशी)

वैशाख शुखल की इस मोहिनी एकादशी कोभगवान् के पुरुषोत्तम रूप (राम) की पूजा का विधान है । इस व्रत को करने से निंदित कर्मों के पाप से छुटकारा मिल जाता है। सीता जी की खोज करते समय भगवान् राम ने भी इस व्रत को किया था तथा श्री कृष्ण के कहने पर महाराज युधिष्ठिर ने भी यह व्रत किया था ।
इस दिन भगवान् की प्रतिमा को स्नानादि करा कर उत्तम वस्त्र पहना कर उच्चासन पर बैठाकर आरती उतारनी चाहिए और मीठे फलों का भोग लगाना चाहिए । रात्रि मे भगवान् का कीर्तन करते हुए मूर्ति के समीप ही पृथ्वी पर शयन करना चाहिए।

मोहिनी एकादशी कथा

युधिष्ठिर ने बड़े विनीत भाव से श्री कृष्ण से कहा -"हे नटवर नागर ! वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी के बारे में कथा सहित सब बातें मुझे बताइये ।"
भगवान् कृष्ण ने कहा - हे कुन्तीपुत्र! जब सीताजी के बनवास के बाद रामचन्द्र जी बहुत व्यथित थे तब उन्होने वशिष्ठजी से पूछा था कि गुरुदेव मुझे कोई ऐसा व्रत बताइये जिससे समस्त दु:खो, पापों और संतापों का क्षय होकर मेरे हृदय को शान्ति मिले । उस समय वशिष्ठ जी ने जो उत्तर दिया वह मैं तुम्हे सुनाता हूँ -
महर्षि वशिष्ठ जी ने कहा - हे राम आपने कोई पाप नहीं किया । आपका तो नाम लेने से ही मनुष्य के सभी रोग-शोक मिट जाते है । यह प्रश्न आपने लोकहित की भावना से किया है, अत: मैं आपको बतलाता हूँ कि मानसिक शांति की प्राप्ति और संताप तथा पाप मिटाने का अमोघ अस्त्र है मोहिनी एकादशी का व्रत । वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को मोहिनी एकादशी इसलिए कहा जाता है कि इसका व्रत करने से मनुष्य के पाप तथा दुख दूर होकर वह मोहजाल से मुक्त हो जाता है । अतएव दुखी मनुष्यों को यह व्रत अवश्य करना चाहिए । मैं इसकी कथा कहता हूँ आप ध्यानपूर्वक सुनिए -
सरस्वती नदी के किनारे बसी सुन्दर और सम्पन्न नगरी भद्रवती में द्युतिमान नाम का चन्द्रवंशी राजा राज्य करता था । इसी नगर में धन-धान्य से परिपूर्ण धनपाल नामक एक वैश्य रहता था । वह वैश्य अत्यन्त धर्मात्मा एवं विष्णु भक्त था । उसने नगर में अनेकों भोजनालय, प्याऊ, कुएं तालाब एवं धर्मशाला आदि बनवाये । सड़को के किनारे आम, जामुन, नीम आदि के अनेक वृक्ष लगवाये । उस वैश्य के सुमना, सदबुद्धि, मेधावी, सुकृति और धृष्टबुद्धि नाम के पाँच पुत्र थे ।
उसके चार पुत्र तो धर्मात्मा थे, परन्तु सबसे छोटा बेटा धृष्टिबुद्धि महापापी, लमपट और दुराचारी था । वह वेश्याओं और दुराचारी मनुष्यों की संगति में रहकर जुआ खेलता, दूसरों की स्त्रियों के साथ भोग-विलास करता तथा मद्य-मांस का सेवन करता था । इस प्रकार अनेक कुकर्मों में फंसकर वह अपने पिता के धन को नष्ट करता था । इन्ही कारणों से उसके पिता, भाइयों तथा कुटुम्बियों ने उसको घर से निकाल दिया । घर से निकाल देने के बाद सब धन नष्ट हो जाने पर वेश्याओं तथा दुष्ट संगी साथियों ने उसका साथ छोड़ दिया । अब वह भूख प्यास से अयन्त दुखी रहने लगा । तब उसने रात्रि के समय चोरी करना प्रारम्भ कर दिया । एक बार वह पकड़ा गया, परन्तु राज्य कर्मचारियों ने उसे वैश्य का पुत्र जानकर छोड़ दिया । परन्तु दूसरी बार पकड़े जाने पर उन्होंने उसे राजा के सामने उपस्थित कर दिया । कारागार में राजा ने

क्रमश:

(१)

उसको बहुत दु:ख दिये और फिर नगर से निकाल दिया । अब तो वह वन में रहकर जानवरों के शिकार पर अपना जीवनयापन करने लगा । एक दिन भूख-प्यास से व्याकुल वह शिकार का पीछा करते-करते कौडिन्य ऋषि के आश्रम में जा पहुँचा । उस समय वैशाख मास था और कौडिन्य ऋषि गंगा स्नान करके आ रहे थे । उनके भीगे वस्त्रों के छींटे पड़ने से कुछ सद्‌बुद्धि प्राप्त हुई और वह मुनि के सामने हाथ जोड़कर कहने लगा – हे मुनिश्वर! मैंने अपने जीवन में बहुत पाप किये है अत: आप उन पापों से छुटने का कोई साधारण और बिना व्यय का उपाय बतलाइये । उसके दीन वचन सुनकर ऋषि कहने लगे कि ध्यान देकर सुनो । तुम वैशाख शुक्ला एकादशी का व्रत करो । इस एकादशी का नाम मोहिनी है और इससे तुम्हारे सब पाप नष्ट हो जायेंगे । मुनि के वचन सुनकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उनके द्वारा बताई गई विधि के अनुसार उसने मोहिनी एकादशी का व्रत किया । हे राम ! इस व्रत के प्रभाव से उसके सब पाप नष्ट हो गए और अन्त में वह गरूड़ पर चढ़कर विष्णुलोक गया । इस व्रत से मोह आदि सब नष्ट हो जाते है अत: संसार में इस व्रत से श्रेष्ठ अन्य कोई व्रत नहीं है । इसके महात्मय को पढ़ने अथवा सुनने से एक हजार गौ दान का फल प्राप्त होता है ।

समाप्त

(२)

अपरा (अचला) एकादशी
(ज्येष्ठ कृष्ण एकादशी)

कृष्ण पक्ष के ज्येष्ठ मास की एकादशी को अपरा अथवा अचला एकादशी कहा जाता है। इस दिन भगवान् त्रिविक्रम की पूजा की जाती है। इसके करने से कीर्ति, पुण्य तथा धन की वृद्धि होती हैं तथा भूत-प्रेत जैसी निकृष्ट योनियों से मुक्ति मिलती है। इस दिन चंदन, कपूर, गंगाजल सहित भगवान विष्णु की पूजा की जानी चाहिए।

अपरा (अचला) एकादशी कथा

पुलकित मन से भगवान् श्री कृष्ण को नमस्कार करने के बाद धर्मराज युद्धिष्ठिर ने भगवान् कृष्ण से प्रार्थना की - हे महाराज ! अब मेरी इच्छा ज्येष्ठ मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी के नाम, महात्म्य, पूजा-विधान आदि के बारे में विस्तार पूर्वक जानने की है। सो आप कृपा करके सुनाइये ।

श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे - हे राजन् ! इस एकादशी का नाम अपरा है । यह अपार धन देने वाली है । जो मनुष्य इस व्रत को करते है, संसार में उनको यश तथा कीर्ति की प्राप्ति होती है । अपरा एकादशी के व्रत के प्रभाव से ब्रह्महत्या, भूत, योनि, तथा पर-निन्दा आदि तक के सब पाप दूर हो जाते है । इस व्रत से पर-स्त्री-गमन, झूठी गवाही देना, असत्य भाषण, कल्पित शास्त्र पढ़ना या बनाना, झूठा ज्योतिषी, झूठा वैद्य बनना आदि तक के पाप नष्ठ हो जाते है । जो क्षत्रिय होकर युद्ध से भाग जाते है, वे नरकगामी होते है, परन्तु अपरा एकादशी का व्रत करने से उन्हे भी स्वर्ग की प्राप्ति होती है । जो शिष्य गुरु से शिक्षा ग्रहण करते है और बाद में उनकी निंदा करते है, वे अवश्य नरक में पड़ते है, परन्तु अपरा एकादशी का व्रत करने से वह भी इस पाप से मुक्त हो जाते है ।

जो फल तीनों पुष्कर में कार्तिक पूर्णिमा को स्नान करने से या गंगा तट पर पितरों को पिंडदान करने से प्राप्त होता है, वही अपरा एकादशी का व्रत करने से प्रात होता है । मकर के सूर्य में प्रयागराज के स्नान से, शिवरात्रि व्रत से शिंह राशि के बृहपति में गोमती नदी के स्नान से, कुम्भ में केदारनाथ या बद्रिकाश्रम की यात्रा, सूर्यग्रहण में कुरुक्षेत्र के स्नान, स्वर्ण अथवा हाथी-घोड़ा दान करने से अथवा नव-प्रसूता गौ दान से जो फल मिलता है, वही फल अपरा एकादशी के व्रत से मिलता है । यह व्रत पापरुपी वृक्ष को काटने के लिए कुल्हाड़ी है । पापरुपी ईंधन को जलाने के लिए अग्नि, पापरुपी अंधेरे के लिए सूर्य के समान है । अपरा एकादशी का व्रत तथा भगवान् का पूजन करने से मनुष्य सब पापों से छूटकर विष्णुलोक को जाता है ।

हे राजन् ! यह अपरा एकादशी की कथा मैंने लोकहित के लिए कही है, इसके पढ़ने अथवा सुनने से मनुष्य सब पापों से छुट जाता है इसमें संदेह नही है ।

समाप्त

निर्जला एकादशी
(ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी)

वर्ष की चौबीस एकादशियों में ज्येष्ठ के शुखल पक्ष की एकादशी सबसे बढ़कर फल देने वाली है । इस एकादशी का व्रत रखने से ही वर्ष भर की एकादशियों के व्रत का फल प्राप्त हो जाता है । इस एकादशी में एकादशी के सूर्योदय से द्वादशी के सूर्यास्त तक जल भी न ग्रहण करने का विधान होने के कारण इसे निर्जला एकादशी कहा जाता है । ज्येष्ठ मास में दिन बहुत बड़े होते है और प्यास भी बहुत अधिक लगती है। ऐसी दशा में इतना कठिन व्रत रखना सचमुच बड़ी साधना का काम है ।

व्रत का विधि-विधान

इस व्रत के दिन निर्जल व्रत करते हुए शेषशायी रूप में भगवान विष्णु की आराधना का विशेष महत्व माना गया है । जल-पान निषेध होने पर भी इस व्रत में फलाहार के पश्चात् दूध पीने का विधान है । इस एकादशी का व्रत करने के पश्चात् द्वादशी को ब्रह्म-बेला में उठकर स्नान कर ब्राह्मणों को भोजन कराकर दान देना चाहिए । इस एकादशी के दिन अपनी शक्ति और सामर्थ्यानुसार ब्राह्मणों को अनाज, वस्त्र, छतरी, फल, जल से भरे कलश और दक्षिणा देने का विधान है । सभी व्यक्ति प्राय: मिट्टी के घड़े अथवा सुराहियों, पंखों और अनाज का दान तो करते ही हैं, इस दिन मीठे शर्बत की प्याऊ भी लगवाते हैं ।

निर्जला एकादशी माहात्म्य

श्रीसूत जी बोले- हे ऋषियो ! अब सर्व व्रतो मे श्रेष्ठ सर्व एकादशियो मे उत्तम निर्जल एकादशी की कथा सुनो ।

एक बार पाण्डव पुत्र भमिसेन ने वेदव्यास जी से पूछा-हे महाज्ञानी पितामह ! मेरे चारो भाई युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल, सहदेव और माता कुन्ती तथा भार्य्या द्रौपदी एकादशी के दिन कभी भोजन नही करते, वे मुझे भी सदैव ऐसा करने को कहते रहते है, मै उनसे कहता हूं कि मुझ से तो भूख सही नही जाती, मै दान और विधिवत् भगवान् की पूजा आराधना करूंगा, सो कृपा पूर्वक ऐसा उपाय बताइए कि उपवास किए बिना मुझे एकादशी के व्रत का फल प्राप्त हो सके, तो व्यास जी बोले, यदि स्वर्ग भला और नरक बुरा प्रतीत होता है तो हे भमिसेन ! दोनो पक्षो की एकादशी को भोजन न करो । तब भमि ने निवेदन किया हे महामुनि ! जो कुछ मै कहता हूं वह भी सुनो, यदि दिन मे एक बार भोजन न मिले तो मुझ से नही रहा जाता, मै उपवास कैसे करू ? मेरे उदर मे वृक नामक अग्नि का निवास है बहुत सा भोजन करने से मेरी भूख शान्त होती है, हे मुनि ! मै वर्ष भर केवल एक ही व्रत कर सकता हूं, सो आप कृपा करके केवल एक व्रत बताइए जिसे विधिपूर्वक करके मै स्वर्ग को प्राप्त हो सकूं, वह निश्चय करके कहिए जिससे मेरा कल्याण हो । व्यास जी ने कहा हे भमिसेन ! मनुष्यो के लिए सर्वोत्तम वेद का धर्म है, किन्तु कलियुग मे भी उस धर्म पर चलने की शक्ति किसी मे नही है । इसलिए थोड़े धन और थोड़े कष्ट से होने वाला सरल उपाय जो पुराणों मे लिखा है वह मै तुमको बताता हूं । दोनो पक्षो की एकादशियो मे जो मनुष्य भोजन नही करते वे नरक नही जाते ।

क्रमश:

(१)

यह वचन सुनकर महाबली भमिसेन पहले तो पीपल पत्र की भांति कांपने लगे फिर डरते हुए बोले हे पितामह ! मै उपवास करने मे असमर्थ हूं, इसलिए हे प्रभो निश्चय करके बहुत फल देने वाला एक व्रत मुझ से कहिए । तो व्यास जी बोले- वृष मिथुन राशि के सूर्य मे ज्येष्ठ मास मे शुक्ल पक्ष मे जो एकादशी होती है, उसका निर्जला व्रत यत्न से करना उचित है । स्नान और आचमन करने से जलपान वर्जित, केवल एक घूंट जल से आचमन करे अधिक पीने से व्रत खण्डित हो जाता है, एकादशी के सूर्य उदय से लेकर द्वादशी के सूर्योदय तक लक ग्रहण न करे और न भोजन करे तो बिना परिश्रम ही सभी द्वादशी युक्त एकादशियो का फल मिल जाता है, द्वादशी को प्रात: काल स्नान करके स्वर्ण और जल ब्राह्मणो को दान करे, फिर ब्राह्मणो सहित भोजन करे । हे भमिसेन ! इस विधि से व्रत करने से जो फल मिलता है वह सुनो, सारे वर्ष मे जो एकादशियां आती है उन सब का फल नि:सन्देह केवल इस एकादशी के व्रत से प्राप्त होता है। शंख, चक्र, गदाधारी भगवान् विष्णु से स्वयं वह मुझ से कहा है कि सब त्याग कर केवल मेरी शरण मे आओ और सुन, एकादशी निराहार व्रत करने से मनुष्य सब पापो से छुट जाता है, सब तीर्थों की यात्रा तथा सब प्रकार के दानो में जो फल मिलता है वह सब इस एकादशी के व्रत से मिल जाता है। कलियुग मे दान देने से भी ऐसी सदगति नही होती, अधिक क्या कहूं ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष की एकादशी को जल और भोजन न करे । हे वृकोदर ! एस व्रत से जो फल मिलता है उसको सुनो ! सब एकादशी व्रतो से जो धन-धान्य व आयु आरोग्यता आदि की वृद्धि होती है वे सब फल नि:सन्देह इस एकादशी के व्रत से प्राप्त होते है । हे नरसिंह भमि ! मै तुझ से सत्य कहता हूं कि इसके करने से अति भयंकर काले पीले रंगो वाले यमदूत भय देने वाला दंड और फांसी सहित उस मनुष्य के पास नही आते, बल्कि पीताम्बर धारी हाथो मे चक्र लिए हुए मोहिनी मूर्ति विष्णु के दूत अन्त समय मे विष्णु दूत अन्त समय

(२) कमशः

मे विष्णु लोक मे ले जाने को आ जाते है, अत: जल रहित व्रत करना उचित है फिर जल और गोदान करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है। वैशमपायन जी कहते है- हे जनमेजय ! तब से भमिसेन यह व्रत करने लगे और तभी से इसका नाम भमिसेनी हुआ। हे राजन्! इसी प्रकार तुम सब पाप दूर करने के लिए उपवास करके विष्णु की पूजा करो और इस प्रकार प्रार्थना करो कि हे भगवान् ! मै आज निर्जल व्रत करूंगा। हे देवेश अनन्त ! द्वादशी को भोजन करूंगा। यह कहकर सब पापों की निवृति के लिए श्रद्धा से इन्द्रियो को वश करके व्रत करे। स्त्री व पुरूष के मन्दराचल पर्वत के समान (बड़े से बड़े) पाप भी इस एकादशी के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं, यदि गाय दान न कर सके तो वस्त्र में बांधे स्वर्ण के साथ घड़ा दान करे, निर्जला एकादशी को स्नान, दान, तप, होमादि जो धर्मकार्य मनुष्य करता है सो सब अक्षय हो जाता है। हे राजन् ! जिसने एकादशी का विधिवत् व्रत कर लिया उसे और धर्माचार करने की क्या आवश्यकता है ? सब प्रकार के व्रत करने से विष्णुलोक प्राप्त होता है और हे कुरूश्रेष्ठ ! एकादशी के दिन जो मनुष्य अन्न भोजन करते है वह पापी है । इस लोक मे चाण्डल होते और अन्त में दुर्गति को पाते हैं, इस एकादशी का व्रत करके दान देने वाले मोक्ष को प्राप्त होगे । ब्रह्महत्या, मदिरापान, चोरी, गुरु से द्वेष और मिथ्या (झूठ) बोलना यह सब महापाप द्वादशयुक्त एकादशी का व्रत करने से क्षय हो जाते है, हे कुन्तीपुत्र भमि ! अब इस व्रत की विधि सुनो । यह व्रत स्त्री व पुरूषों को अत्यन्त श्रद्धा से इन्द्रियो को वश मे करके करना चाहिए । क्षीरशायी भगवान् की पूजा करके गौदान करे । दूध देने वाली गौ, मिष्ठान और दक्षिणा सहित विधि पूर्वक दान करे।हे श्रेष्ठ भमि ! इस प्रकार भली भांति ब्राह्मणो के प्रसन्न होने से श्रीविष्णु भगवान् संतुष्ट होते है । जिसने यह महाव्रत नही किया उसने आत्मद्रोह किया । वह दुराचारी है और जिसने यह व्रत किया उसने अपने एक सौ अगले सम्बन्धियों को अपने सहित स्वर्ग पहुंचा दिया और मोक्ष को प्राप्त हुआ । जो मनुष्य शांति से

(३)

क्रमश:

दान और पूजा करके रात्रि को जागरण करते है और द्वादशी के दिन अन्न, जल, वस्त्र, उत्तम शय्या व कुण्डल सुपात्र ब्राह्मण को दान करते है वह निसन्देह स्वर्ण के विमान पर बैठ कर स्वर्ग को प्राप्त होते है । जो फल नाशनी अमावस्या अथवा सूर्य ग्रहण मे दान-पुण्य करके मिलता है वही फल इसके सुनने से मिलता है । दंत धावन कर विधि अनुसार बिना अन्न तथा जल के व्रती मनुष्य इस एकादशी का व्रत और आचमन जल के न पीकर द्वादशी के दिन देवदेवेश त्रिविक्रम भगवान् की पूजा करे । जल, पुष्प, धूप, दीप, अर्पण कर यताविधि पूजन करके प्रार्थना करे कि हे देवेश ! हे ह्रीषकेश, हे संसार सागर से पार कराने वाले! इस घड़े के दान करने से मुझे मोक्ष प्राप्त हो । हे भमिसेन ! फिर अपनी सामर्थ्य अनुसार अन्न, वस्त्र, छत्र, फल आदि घड़े पर रखकर ब्राह्मणो को दान देवे, तत्पश्चात् श्रद्धापूर्वक ब्राह्मणो को भोजन करवाकर आप भी मौन हो कर भोजन करे । इस प्रकार जो इस व्रत को यथा विधि करते है सब पापो से छुट कर मुक्त हो जाते है ।

।। समाप्त ।।

(४)

पुत्रदा एकादशी
(श्रावण शुक्ल एकादशी)

श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को पुत्रदा एकादशी कहा जाता है । इसदिन भगवान् जनार्दन की श्रद्धापूर्वक पूजा की जाती है । भक्तिपूर्वक इस व्रत को करने से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है । संतान प्राप्ति की इच्छा रखने वालों को यह व्रत अवश्य करना चाहिए ।

पुत्रदा एकादशी कथा

पुलकित मन से भगवान् श्री कृष्ण को नमस्कार करने के बाद धर्मराज युद्धिष्ठिर ने भगवान् कृष्ण से श्रावण के शुक्ल पक्ष की एकादशी के बारे में जानने की इच्छा जाहिर की । इसके उत्तर में में भगवान् कृष्ण ने कहा - हे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर ! श्रावण शुक्ला एकादशी का नाम पुत्रदा है । मै इसके बारे में एक प्राचीन कथा सुनाता हूँ, जिसके पढ़ने या सुनने मात्र से वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है । आप ध्यानपूर्वक इस कथा को सुनिये -

द्वापर युग के आरम्भ में महिष्मती नगरी में महीजित नाम का एक प्रतापी राजा राज्य करता था । उसका बहुत बड़ा राज्य था, परन्तु कोई पुत्र ना होने के कारण महीजित को राज्य सुखदायी नहीं लगता था । पुत्र प्राप्ति के लिये राजा ने अनेक दान, पुण्य, यज्ञ, हवन आदि उपाय किए परन्तु राजा को पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई । वृद्धावस्था आती हुई देखकर राजा अपनी प्रजा के प्रतिनिधियों और विद्वान ब्राह्मणों को बुला कर कहने लगा- हे प्रियजनों ! मैने इस जन्म में तो कोई पाप नहीं किया । मेरे खजाने मे अन्याय से उपार्जन किया हुआ धन नहीं है और न ही मैने कभी देव मन्दिरों, सद् - गृहस्थों अथवा ब्राह्मणों का धन छीनना है । किसी दूसरे की धरोहर भी मैनें कभी नहीं ली और न ही प्रजा पर अन्याय पूर्ण कोई कर लगाया है । मैं प्रजा का पुत्र के समान पालन करता हूँ तथा ब्राह्मणों और सन्यासियों को भरपूर दान देता हूँ । यद्यिप न्याय की रक्षा के लिये मै अपराधियों को दण्ड देता हूँ, परन्तु कभी किसी से घृणा नहीं की, सबको एक समान माना हैं । सज्जनों की सदा पूजा करता रहा हूँ । इस प्रकार धर्म= युक्त राज्य करते हुए भी मेरा पुत्र नहीं है । इस कारण मैं अत्यन्त दु:ख पा रहा हूँ इसका क्या कारण है ?

राजा महीजित की इस समस्या के निवारण हेतु प्रजा के प्रतिनिधि तथा मंत्रीगण वन में जाकर बड़े-बड़े ऋर्षियों और मुनियों के दर्शन करते हुए, किसी विद्वान तपस्वी की तलाश में लग गए । एक आश्रम में उन्होने एक अत्यन्त वयोवृद्ध, धर्म के ज्ञाता, बड़े तपस्वी, परामात्मा में मन लगाये हुए गूढ़ तत्वों को जानने वाले, समस्त शास्त्रों के ज्ञाता महात्मा लोमेश मुनि को देखा । एक कल्प के व्यतीत होने पर एक रोम गिरता था लोमेश ऋर्षि का, इतनी अधिक थी उनकी आयु ।

(१)

सबने जाकर लोमेश ऋर्षि को प्रणाम किया और उनके सामने बैठ गए। उन्हे देखकर ऋर्षि ने पूछा कि आप किस कारण से आए हैं? आप मुझे अपनी समस्या बताइए, निसंदेह मै आप लोगों का हित करूँगा। उनके ऐसे वचन सुनकर सब लोग बोले - हे महर्षि ! यद्दिप आप हमारी बात जानने में ब्रह्मा से भी अधिक समर्थ है, मगर फिर भी हम अपनी व्यथा कहते है। महिष्मती पुरी का धर्मात्मा राजा महीजित प्रजा का पुत्र के समान पालन करता है, परन्तु फिर भी वह पुत्रहीन है। हम लोग उसकी प्रजा है। अपने राजा के दु:ख से हम भी दु:खी हैं। हमको पूर्ण विश्वास है कि आपके दर्शन से हमारा यह संकट आवश्य दूर हो जायेगा, क्योंकि महान पुरूषों के दर्शन माझ से अनेक कष्ट दूर होजाते है। आप कृपा कर के राजा के पुत्र होने का उपाय बतलाए। यह वार्ता सुनकर ऋर्षि लोमेश ने थोड़ी देर के लिए अपने नेत्र बन्द कर लिए और राजा के पिछले जन्म का वृतान्त ज्ञात कर लिया। लोमेश ऋर्षि ने स्नेहासिक्त वाणी में कहा - हे महानुभावों ! आपका राजा पूर्व जन्म में एक निर्धन वैश्य था। निर्धन होने के कारण इसने अनेक बुरे कर्म किए। वह एक गांव से दूसरे गांव व्यापार करने के लिए जाया करता था। एक समय ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी के दिन मध्यान्ह काल के समय जब कि वह दो दिन का भूखा प्यासा था, एक जलाशय पर जल पीने गया। उस स्थान पर एक तत्काल गौ जल पी रही थी। राजा ने उस प्यासी गौ को जल पीते से हटा दिया और स्वयं जल पीने लगा। इसी पाप के कारण राजा को निपुत्री होने का दु:ख सहना पड़ा है। एकादशी के दिन भूखा रहने से वह राजा बना है और प्यासी गौ को जल पीते से हटाने के कारण पुत्रहीनता का दु:ख भोगना पड़ा है।

सब लोगों ने कहा - हे मुनिश्रेष्ठ ! राजा का यह पाप नष्ट हो आप ऐसा कोई उपाय बताने की कृपा करें। लोमेश मुनि ने उत्तर दिया - श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को पवित्रा एकादशी का व्रत और रात्रि को जागरण करें तो अवश्य ही पुत्र की प्राप्ति होगी।

लोमेश ऋर्षि से उपाय जानने के बाद सभी व्यक्ति नगर को वापस लौट आए। जब श्रावण शुक्ला एकादशी आई तो सबने मिलकर ऋर्षि की आज्ञानुसार राजा

(२)

सहित पुत्रदा एकादशी का व्रत और जागरण किया । इसके पश्चात् द्वादशी के दिन इसके पुण्य का फल राजा को दिया गया । उस पुण्य के प्रभाव से रानी ने गर्भ धारण किया और प्रसवकाल समाप्त होने पर एक बड़ा तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ ।

अन्त में भगवान् कृष्ण ने कहा – हे राजन् ! इस श्रावण शुक्ला एकादशी का नाम पुत्रदा एकादशी है, अत: सन्तान सुख की इच्छा रखने वाले इस व्रत को आवश्य करें । इसके महात्म्य को सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है और इस लोक में संतान सुख भोगकर परलोक में स्वर्ग को प्राप्त होता है ।

समाप्त

(३)

आमलकी एकादशी

(फाल्गुन शुक्ल एकादशी)

होलिका दहन से चार दिन पूर्व फाल्गुन के शुक्ल पक्ष की इस एकादशी का नाम आमलकी एकादशी है । इन दिनों आँवले के वृक्ष में भगवान् का निवास रहता है । इसलिए आँवले के वृक्ष के नीचे बैठकर भगवान् की पूजा करने और आंवले खाने और दान करने का विशेष महत्व है ।

इस दिन स्नानादि से निवृत होकर आंवले के वृक्ष का धूप, दीप, चंदन, रोली, पुष्प, अक्षत आदि से पूजन कर उसके नीचे ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए ।

आमलकी एकादशी कथा

त्रेता युग में एक दिन महाराज मांधाता ने ब्रह्मर्षि वशिष्टजी से अनुरोध किया – हे मुनिवर ! यदि आप मुझ से प्रसन्न हैं तो कृपापूर्वक मुझे कोई ऐसा व्रत बतलाएँ जिसको करने से मेरा सब प्रकार से कल्याण हो ।
महर्षि वशिष्ठजी ने उत्तर दिया – हे राजन् ! यों तो सभी व्रत उत्तम हैं, परन्तु इनमें सर्वोत्तम है आमलकी एकादशी व्रत । फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की इस आमलकी एकादशी का व्रत करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं । इस व्रत को करने से एक हजार गायों के दान के बराबर पुण्य प्राप्त होता है । इस बारे में कथा मैं आपको सुनाता हूँ ध्यानपूर्वक सुनिए –
वैदिक नामक एक नगर में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्णों के परिवार आन्नदपूर्वक रहा करते थे । वहाँ पर सदैव वेद ध्वनि गूंजा करती थी । पापी, दुराचारी तथा नास्तिक कोई नहीं था । उस नगर मे, चैत्ररथ नाम का चन्द्रवंशी राजा राज करता था । सभी नगरवासी भगवान् विष्णु के परम भक्त थे और सभी नियमपूर्वक एकादशियों का व्रत किया करते थे ।
प्रत्येक वर्ष के समान फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की आमलकी एकादशी आई । उस दिन राजा, प्रजा तथा बाल-वृद्ध सबने हर्षपूर्वक व्रत किया । राजा अपनी प्रजा के साथ मंदिर में जाकर कुम्भ स्थापित करके धूप, दीप, नैवेद्य, पंचरत्न आदि से धात्री (आंवले) का पूजन करके इस प्रकार स्तुति करने लगा – हे धात्री ! आप ब्रह्माजी द्वारा उत्पन्न हुए हो और समस्त पापों को नष्ट करने वाले हो, अत: आपको नमस्कार है । अब आप मेरा अर्ध्य स्वीकार करें । आप रामचन्द्र जी द्वारा सम्मानित हो । मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरे समस्त पापों को समूल नष्ट करें ।
मंदिर में सबने रात्रि को जागरण किया । रात के समय वहाँ एक बहेलिया आया, जो अत्यन्त पापी और दुराचारी था । वह अपने कुटुम्ब का पालन जीव-हिंसा करके किया करता था । उस दिन उसे कोई शिकार नहीं मिला था, अत: निराहार रहना पड़ा । भुख तथा प्यास से अत्यन्त व्याकुल वह बेहलिया मंदिर के एक कोने में बैठ गया और विष्णु भगवान् तथा एकादशी महात्म्य की कथा सुनने

क्रमश:

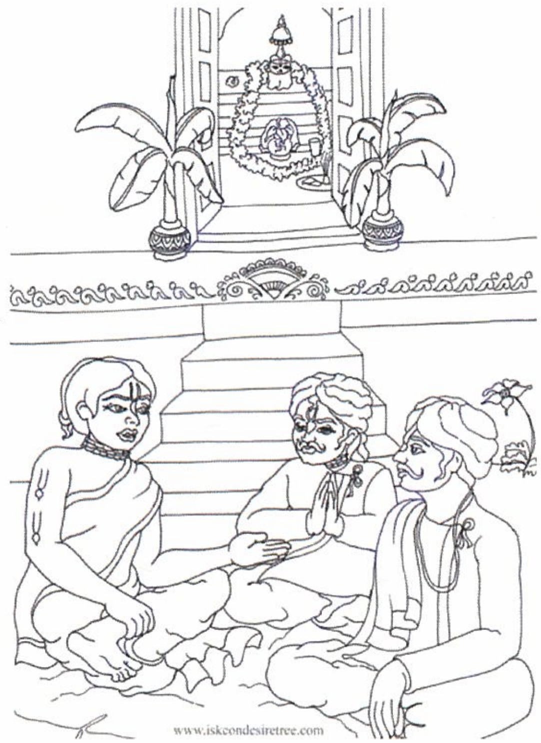
लगा । इस प्रकार अन्य मनुष्यों की तरह उसने भी सारी रात जागकर बिता दी । प्रात: काल घर जाकर उसने भोजन किया । कुछ समय बाद बहेलिये की मृत्यु हो गई ।

आमलकी एकादशी का व्रत व जागरण करने के कारण अगले जन्म में उस बहेलिये ने राजा विदूरथ के घर में जन्म लिया । उसका नाम वसुरथ रखा गया । युवा होने पर वह चतुरंगिणी सेना तथा धन-धान्य से युक्त होकर दस हजार ग्रामों का पालन करने लगा । वह तेज में सूर्य के समान, कांति मे, चन्द्रमा के समान ओर क्षमा मे, पृथ्वी के समान था । वह अत्यन्त धार्मिक, सत्यवादी, कर्मवीर एवं विष्णु भक्त राजा बना । प्रजा का समान भाव से पालन, यज्ञ करना तथा दान देना उसका नित्य का कर्तव्य था । एक दिन राजा वसुरथ शिकार खेलने के लिए वन गया । दैवयोग से वह मार्ग भूल गया और एक वृक्ष के नीचे सो गया । थोड़ी देर बाद पहाड़ी म्लेच्छ वहाँ आए और राजा को अकेला देखकर 'मारो-मारो' की आवाजें लगाते हुए राजा की ओर दौड़े । वे म्लेच्छ कहने लगे कि इसी दुष्ट राजा ने हमारे माता-पिता; पुत्र-पौत्र आदि अनेक संबंधियों को मारा है तथा देश से निकाल दिया है । अतएव इसको अवश्य मारना चाहिए । ऐसा कहकर वे मलेच्छ अस्त्रों से प्रहार करने लगे । अनेक अस्त्र-शस्त्र राजा के शरीर पर गिरते ही नष्ट हो जाते और उनका वार पुष्पों के समान प्रतीत होता । अब उन म्लेच्छ अस्त्र-शस्त्र उलटा उन्ही पर प्रहार करने लगे जिससे वे घायल होने लगे । इसी समय राजा को भी मूर्छा आ गई । उस समय राजा शररि से एक दिव्य स्त्री उत्पन्न हुई । वह स्त्री अत्यन्त सुन्दर वस्त्रों तथा आभूषणों से अलंकृत थी । मगर उसकी भृकुटी टेढ़ी थीं और आंखों से लाल-लाल अग्नि निकल रही थी । वह स्त्री म्लेच्छों को मारने दौड़ी और थोड़ी ही देर में उसने सब म्लेच्छों को काल के गाल में पहुँचा दिया । जब राजा सोकर उठा तो इन म्लेच्छों को मरा हुआ देखकर सोचने लगा कि इन शत्रुओं को किसने मारा है ? वह विचार कर ही रहा था कि तभी आकाशवाणी हुई - हे राजा ! इस संसार में विष्णु भगवान् के अतिरिक्त कौन तेरी सहायता कर सकता है । इस आका--वाणी को सुनकर राजा अपने नगर को चला आया और सुखपूर्वक राज्य करने लगा ।

महर्षि वशिष्ठजी आगे बोले - हे राजन् ! यह आमलकी एकादशी के व्रत का प्रभाव था । जो मनुय इस आमलकी एकादशी का व्रत करते हैं, वे सभी कार्यों में सफल होकर उन्त में विष्णु लोक को प्राप्त होते हैं ।

समाप्त

एकादशी महात्म्य



श्रील वेदव्यास विरचित पुराणोंसे संग्रहित

संग्रहक-गोविन्द भक्त दास

लक्ष्यवेधी
प्रकाशन



हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

परं विजयते श्रीकृष्ण संकीर्तनम् ।

लक्ष्यवेधी प्रकाशन

वैष्णव सेवा केंद्र
१८७, शुक्रवार पेठ, तिलकवाडी,
बेलगांव - ५९० ००६ (कर्नाटक)
संपर्क : ९२४२१७६५८७
E-mail : vishnulok.rns@gmail.com
प्रकाशक : विष्णुलोक दास

मुद्रक :

विषय सूची

उपवास की आवश्यकता

हमारे देश में सामान्यतः सब लोग उपवास करते हैं । सप्ताह के कौनसे तो दिन उपवास का व्रत रखते है और उस के द्वारा विविध देवताओंको प्रसन्न करने की इच्छा होती है । इस व्रत के पीछे कोई तो उद्देश्य निश्चित ही होता है । साधारणतः धन प्राप्ति के हेतु, बीमारी से ठीक होने के लिए, राजनीति में पद के लिए, अच्छी नौकरी, पत्नी या पति प्राप्ति के लिए लोग उपवास करते है ।

भौतिक इच्छा प्राप्ति के लिए उपवास करने से बहुत बार फल मिलता है । पर यह फल भौतिक होने से सिर्फ क्षणिक होता है । ऐसे व्रत करना मतलब भगवानसे किया हुआ सौदा ही है । हमारी इच्छा पूरी होते ही व्रत समाप्त करके हम भूल जाते है । 'जरूरत खत्म होते ही वैद्य की गुंजाईश नही रहती !' श्रील प्रभुपाद ऐसे अनुष्ठानोंको 'भौतिक धर्म' कहते थे ।

भगवान् श्रीकृष्ण के भक्त भी एकादशी, जन्माष्टमी, रामनवमी, गौर पौर्णिमा, नरसिंह जयंती, व्यासपूजा या और अन्य वैष्णव तिथिकों उपवास करते है, व्रत रखते है। इसके पीछे उनका क्या उद्देश्य होता है ? वस्तुतः भक्तोंकी कोई भी भौतिक कामना नही होती । भक्त अपने आध्यात्मिक उन्नति के लिए यह व्रत करते है । व्रत का पालन करना यह मूल सिद्धांत न होकर, भगवान् के प्रति अपनी श्रद्धा बढाना यह कारण है । उपवास करनेसे मन शुद्ध होता है, मन को वश में करके भगवान श्रीकृष्ण के प्रति अपनी श्रद्धा बढाना यह कारण है । मन को वश में करके भगवान श्रीकृष्ण की सेवा उत्तम प्रकारसे करने के लिए उपवास सहायक होता है ।

एकादशी के दिन अन्न का त्याग करके, शरीरकी आवश्यकताएँ कम करके श्रवण-कीर्तन के द्वारा भगवान् की अधिक से अधिक सेवा करना यही उपवास का उद्देश्य है । इससे भगवान संतुष्ट होते है । भारत में अनादि कालसे एकादशी के व्रत का पालन किया जाता है । लेकिन अभी लोगोंको अध्यात्म के प्रति कोई रूचि नही है । अगर कोई एकादशी व्रत रखना चाहता है तो घरके लोग नाराज होते है । एकादशी व्रत का पालन बडे-बुजुर्ग लोगोंको करना है, जवानोंको तो खा-पीकर मौज करनी चाहिए। ऐसा उपदेश दिया जाता है।

श्रील प्रभुपाद एकादशी तथा अन्य उत्सवों के वक्त व्रत रखनेको आध्यात्मिक जीवनका महत्त्वपूर्ण अंग मानते है। वे कहते है, ''यह सभी विधि-विधान हमारे महान आचार्योंनें उन लोगों के लिए बनाए है जो दिव्य जगत् में भगवान्का संग पाने के इच्छुक है। महात्मागण इन सभी विधि-विधानों को मानते है, इसलिए उन्हें फल मिलता है।''

-प्रकाशक

प्रस्तावना

बहुत सारे भक्तोंके आग्रहपर यह पुस्तक लिखने का प्रयास किया है । श्रील व्यासदेवजीने पुराणोंमें एकादशीव्रत का माहात्म्य अनेक स्थानोंपर किया है । इस पुस्तक में हर एकादशी माहात्म्य का वर्णन कथारूप में किया गया है । कथा पढनेके बाद किसीको ऐसा प्रतीत हो कि इस पालन से भौतिक लाभ होता है, इसलिए यह व्रत केवल भौतिक लाभहेतु हो । किंतु वेसा नही है, जो वैष्णव है, उनके लिए यह सर्वश्रेष्ठ व्रत है । एकादशी भगवान् श्रीकृष्ण को अत्यंत प्रिय है, इसलिए उसको *हरिवासर* कहते है।

उपवास इस शब्द अर्थ है पास रहना । हमें अगर भगवान के निकट रहना है, तो उपवास करना आवश्यक है । इसीलिए एकादशी के दिन सभी भौतिक इंद्रियतृप्ती के कार्य से दूर रहकर भगवान के नामस्मरण में अधिक-से-अधिक समय बिताना चाहिए । ब्रह्मवैर्वत पुराणमें कहा गया है कि-

उपावृत्तस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह ।
उपवासः स विज्ञेयः सर्व भोग विवर्जितः ।।

उपवास का मतलब सभी पापोंसे और इंद्रियतृप्ति के कार्योसे दूर रहना। निश्चित ही एकादशी व्रत के पालन से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इनकी प्राप्ति तो होती है, पर उसके साथ पंचम पुरूषार्थ भगवद्‌भक्ति अथवा कृष्णप्रेम भी प्राप्त होता है ।

श्री हरिभक्ती विलास नामक ग्रंथमें बताया गया है कि,

एकादशी व्रतं नाम सर्व काम फल प्रदम ।
कर्तव्यं सर्वदा विप्रैः विष्णु प्रीणनकारणम् ।।

भगवान् श्रीविष्णु की प्रसन्नता के लिए ब्राह्मणोंको एकादशी व्रतका पालन करना चाहिए । यह उनका कर्तव्य है । इसीलिए हर एक व्यक्तिको भगवान् की प्रसन्नता के लिए इस व्रतका पालन करना चाहिए। भगवान श्रीविष्णु प्रसन्न होनेसे सुख और समृद्धि अपने आप प्राप्त होती है ।

ॐ विष्णुपाद नित्यलीला प्रविष्ट सच्चिदानंद भक्तिविनोद ठाकुर अपने एक गीत में लिखते है,**माधव तिथी भक्ति जननी जनते पालन करी ।**

माधव तिथी अर्थात एकादशी, जन्माष्टमी इ. व्रत, भक्तिजननी का मतलब हमारे हृदयमें भक्ति निर्माण करनेवाली है। इसलिए वे कहते है कि, हमे प्रयत्नपूर्वक उसका पालन करना चाहिए ।

संत शिरोमणी श्री तुकाराम महाराज कहते है,

ज्यासी नावडे एकादशी । तो जिताची नरकवासी

ज्यासी नावडे हे व्रत । त्यासी नरक तोहि भीत
ज्यासी घडे एकादशी । जाणे लागे विष्णुपाशी
तुका म्हणे पुण्यराशी । तोचि करी एकादशी

जिसे यह एकादशी अच्छी नही लगती, वो जीते जी नरक में रहनेवाला व्यक्ति है । जिसे यह व्रत पसंद नही उससे नरक भी डरते है । क्योंकि वह व्यक्ति महापापी माना जाता है । जो एकादशी व्रतका पालन करता है, उसे निश्चित वैकुंठ प्राप्ती होती है । इसीलिए तुकाराम महाराज कहते है जिसने पूर्वजन्मोंमें पुण्यों की राशियाँ इकठ्ठी की है, वे ही केवल एकादशी व्रतका पालन करते है ।

एकादशी को अन्नग्रहण करनेसे क्या होता है इसका वर्णन तुकाराम महाराज इस प्रकार करते है,

एकादशीस अन्नपान । जे नर करिती भोजन
श्वान विष्ठेसमान । अधम जन ते एक
तया देही यमदूत । जाले तयाचे अंकित
तुका म्हणे व्रत । एकादशी चुकलिया

जो लोग एकादशी को अन्नग्रहण करते है, भोजन करते है वह बहुत ही पतित जीव है । उन्हें अधम माना जाता है, क्योंकि वे जो भोजन करते है वह श्वान की विष्ठा जैसा होता है । जो यह व्रत नही करता, उसके लिए यमदूत हैं ही, वो नरकगामी बनता है ।

एकादशी के दिन पापपुरूष अन्नमें वास करता है, इसलिए अन्नग्रहण नही करना चाहिए । जिसे अपना हित करना हो उसे निम्नलिखित अन्न का एकादशी के दिन त्याग करना चाहिए ।

१) चावल, तथा उससे बने पदार्थ, २) गेहुँ, ज्वार, मक्का इनसे बने हुए पदार्थ, ३) दाल-मूंग, मसूर, तूर, चना, मटर इत्यादि, ४) जव, ५) राई और तिलका तेल.

भूलसे भी इन पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए ।अन्यथा व्रत भंग होता है।

भक्ति में प्रगति करने के इच्छुक व्यक्ति को इनका पालन करना चाहिए । एकही दिन दो तिथि आती हो तो वैष्णव उस दिनका व्रत अथवा उत्सव दूसरे दिन करते है। इसलिए हम स्मार्त और भागवत यह दो एकादशी देखते हैं । हरिभक्ती विलास इस ग्रंथमें कहा गया है, *हे ब्राह्मण, सूर्योदय से पूर्व ९६ मिनट के पहिले एकादशी शुरू होती है उस एकादशी को शुद्ध एकादशी कहना चाहिए । गृहस्थोंको इस एकादशी का पालन करना चाहिए ।*

एकादशी करनेवाले या करने की इच्छा होनेवाले हर एक व्यक्तिको इस ग्रंथ को ध्यानपूर्वक पढना चाहिए ।

संग्राहक

१. उत्पन्ना एकादशी

उत्पन्ना एकादशी का महात्म्य भविष्योत्तर पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण अपने सखा अर्जुन को बताते है ।

नैमिष्यारण्यमें एकत्रित हुए सभी ऋषियोंको सूत गोस्वामी बताते हैं, ''भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनको बताये अनुसार जो नियमपूर्वक एकादशीव्रत करता है, उसे इस जन्ममें आनंद और अगले जन्ममें वैकुंठ लोक की प्राप्ति होती है ।''

एक बार अर्जुनने भगवान् श्रीकृष्ण से पूछा, ''हे जनार्दन ! एकादशी के दिन पूरा उपवास करने से या केवल रात को खाने से या केवल दोपहर में प्रसाद लेनेसे क्या लाभ मिलता है ?''

तब भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''हे अर्जुन ! हेमंत ऋतु के प्रारंभ के मार्गशीर्ष महीने की कृष्ण पक्ष की एकादशी करनी चाहिए । प्रात:काल उठकर इस का प्रारंभ करे । दोपहर में स्नान करके शुद्ध होना चाहिए । स्नान करते हुए पृथ्वीमाता की इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए ।

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ।
मृत्तिका हर मे पापं यन्मया पूर्वसंचितम् ।।

''है अश्वक्रान्ते ! हे रथक्रान्ते ! हे विष्णुक्रान्ते ! हे वसुंधरे ! हे मृत्तिके ! हे पृथ्वीमाता ! पूर्वजन्मों के मेरे सभी पापोंको नष्ट कर दो, जिससे मैं उच्चध्येय (भगवत्धाम) की प्राप्ति कर सकूं ।''

उसके बाद भगवान श्रीगोविंद की पूजा करनी चाहिए ।

एक बार देवराज इंद्र सब देवताओं के साथ श्रीविष्णु के पास गये और इस तरह प्रार्थना करने लगे, ''हे जगन्नाथ ! हे पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्! हमारा प्रणाम स्वीकार करें । आप सबके आश्रय है। आपही सबके माता-पिता है । आप सभीका सृजन, पालन, विनाश करनेवाले है। आप धरती, आकाश समेत सभी ब्रह्मांडों का हित करनेवाले है। आप ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश हैं । यज्ञ, तपस्या और वैदिक मंत्रोके स्वामी तथा भोक्ता आप है । इस जगत में ऐसी कोई भी (चराचर) वस्तु नहीं जिसपर आपका नियंत्रण न हो । संपूर्ण जगत् के चर-अचर वस्तु के स्वामी तथा नियंत्रक आप ही है । हे पूर्ण पुरूषोत्तम! हे देवेश्वर! हे शरणागत वत्सल ! हे योगेश्वर ! दानवोंने सभी देवताओंको स्वर्गसे भगा दिया है और भय से उन्होंने आपके चरणोंकी शरण ली है । कृपया उनकी रक्षा करें । हे जगन्नाथ ! स्वर्ग से इस भूलोकपर पतन होकर हम इस दुःखसागर में डूब रहे है । कृपया हम पर आप

प्रसन्न होईये ।''

इस प्रकार इंद्रकी दया की प्रार्थना सुननेपर भगवान् श्रीविष्णुने पूछा, ''ऐसा कौनसा अविजयी दानव है, जिससे देवता पराजित हो रहे है? उसका नाम क्या है ? उसके शक्तिका स्रोत क्या है ? हे इंद्र, निर्भय होकर सभी जानकारी हमें कहो ।''

इंद्र ने कहा, ''हे देवेश्वर ! हे भक्तवत्सल ! हे पुरूषोत्तम ! देवताओं में भय और चिंता निर्माण करनेवाला असुर नंदीजंघ ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुआ है । उसके जैसा ही उसे बलशाली और कुप्रसिद्ध मूर नामका बेटा है । चंद्रावती नाम का भव्य नगर मुर राक्षसकी राजधानी है ! इसी मुर राक्षसने सब देवताओंको स्वर्गसे निकालकर स्वयं वहाँ निवास कर रहा है । इंद्र, अग्नि, चंद्र, वरूण, यम, वायु और ईश ये सभी देवताओंके अधिकार उसने छीन लिए है । हम सब देवता मिलकर भी उसे पराजित नहीं कर सके। हे विष्णु ! आप कृपया उसका अंत करके देवताओं की रक्षा कीजिए ।''

इंद्र के यह शब्द सुनते ही देवताओंको कष्ट देनेवाले मुर राक्षस के प्रति श्रीविष्णुको क्रोध आया और वे कहने लगे, ''हे देवराज ! मैं स्वयं उस शाक्तिशाली दानव का वध करूँगा । आप सब चंद्रावती नगर चलिए।'' सब देवता भगवान के कहे अनुसार चंद्रावती नगरी में जाकर अनेक प्रकार के शस्त्र जमा करने लगे ।



दानवोंके सामर्थ्य से पहलेही सभी देवता भयभीत थे । पर अब भगवान श्रीविष्णु के नेतृत्व में निर्भय होकर देवता रणभूमि में पहुँचे । उन्हें देखकर राक्षस क्रोधित हो गये । भगवान्ने सभी असुरोंको पराजित किया, परंतु मुर को पराजित करना कठिन लगने

लगा। अनेक अस्त्र-शस्त्र का उपयोग करनेपर भी भगवान् मुर राक्षस को मार नहीं सके। दस हजार वर्ष तक दोनोंमें बाहुयुद्ध चला, अंतमें मुर राक्षसको पराजित करके भगवान बद्रिकाश्रममें हेमवती नामक गुफामें विश्राम करने पधारे ।

भगवान श्रीकृष्ण कहने लगे, ''हे अर्जुन ! उस असुरने गुफातक पीछा करके उसमें प्रवेश किया और श्रीविष्णु को निद्रावस्था में मारने का विचार किया। उस समय उनके शरीरसे एक तेजस्वी कन्या बाहर निकली।
वह शस्त्रोंसे परिपूर्ण थी, उसने मुर राक्षसे बहुत समयतक युद्ध करके उसका वध किया । शेष दानव भयभीत होकर पाताल लोकमें गये । श्रीविष्णु ने निद्रासे जागकर मूर राक्षस का शव और उनके सामने हाथ जोडके खडी हुई कन्या देखी तो आश्चर्यसे पूछने लगे, ''तुम कौन हो ?''

उस देवीने उत्तर दिया, ''हे भगवान ! मैं आपके शरीरसे उत्पन्न हुई हूँ और इस असुरका मैने वध किया है ! आपको निद्रावस्था में देखकर मारने के लिए आनेवाले इस असुर का मुझे वध करना पडा !''

भगवान श्रीविष्णुने कहा, ''हे देवी ! आपके इस कार्य से मैं प्रसन्न हूँ । तुम मनचाहा वरदान माँग लो ।'' जब देवीने वरदान मांगा तब भगवान् श्रीविष्णु ने कहा, ''तुम मेरी आध्यात्मिक शक्ती हो, एकादशी दिन उत्पन्न होने के कारण तुम्हारा नाम एकादशी होगा । जो भी एकादशी व्रत करेगा उसे अक्षय सुख की प्राप्ति होगी ।''

''उस दिन से एकादशी दिन विश्वमें पवित्र दिन जाना जाता है । हे अर्जुन ! जो इसका पालन करेगा उसे मैं परम (उच्च) गति प्रदान करता हूँ ! हे अर्जुन ! एकादशी और द्वादशी एक ही तिथि में होनेपर उस एकादशीको सर्वोच्च माना गया है । एकादशी दिन मैथुन, अन्न, मद्य, मांस, रसोई में कास्य के बर्तन, शरीरको तेल लगाना वर्जित है । जो इसका महात्म्य जानकर व्रत करेगा उसे अधिक फलप्राप्ति होगी ।''

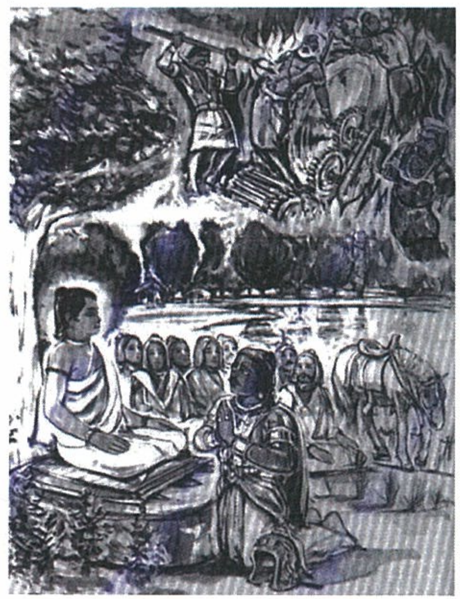


२. मोक्षदा एकादशी

ब्रह्मांड पुराणमें मार्गशीर्ष महीने के शुक्ल पक्ष में आनेवाली मोक्षदा एकादशी का महात्म्य भगवान श्रीकृष्ण युधिष्ठिर से कहते है !

युधिष्ठिर महाराजने पूछा, "हे देवदेवेश्वर ! मार्गशीर्ष के शुक्ल पक्षमें आनेवाली एकादशी का क्या नाम है? उसे किसप्रकार करना चाहिए, किस देवताको पूजना चाहिए ? कृपया इस विषयपर विस्तार से कहें !"

भगवान श्रीकृष्णने कहा, "मार्गशीर्ष के शुक्ल पक्ष में आनेवाली एकादशी मोक्षदा कहलाती है । इसकी महिमा सुननेसे वाजपेय यज्ञका फल प्राप्त होता है ! यह एकादशी पापहरण करती है ! हे राजन् ! इस दिन तुलसी मंजरी और धूप-दीप के साथ भगवान दामोदर की पूजा करनी चाहिए ! बडे बडे पातकों को नष्ट करनेवाली मोक्षदा एकादशी की रात्रि में मेरी प्रसन्नता के लिए नृत्य, कीर्तन तथा कथा करके जागरण करना चाहिए ! जिनके पूर्वज नरकमें है, वे इस एकादशीके पूण्य को पूर्वजोंको दान करनेसे उनको मोक्ष की प्राप्ति होती है !"



प्राचीन काल में वैष्णव निवासीत रमणीय चम्पक नगरमें वैखानस महाराज राज्य करते थे ! वे अपनी प्रजाका संतान की भाँति पालन करते थे ! एक रातको उन्होंने स्वप्न में देखा कि उनके पितर नीच नरक योनि में है ! अपने पितरोंकी इस अवस्था से आश्चर्यचकित होकर अगले प्रात:काल में ब्राह्मणोंको बुलाकर उस स्वप्न के बारे में कहा !

महाराज ने कहा, "हे ब्राह्मणो ! मैने अपने पितरोंको नरक में देखा है ! बारबार

रूदन-क्रंदन करते हुए मुझे कह रहे थे तुम हमारे तनुज हो, तुम ही हमें इस स्थिति से निकाल सकते हो ! हे द्विजवर ! मैं उनकी इस अवस्थासे अत्यंत विचलित हूँ ! क्या करना चाहिए ? कहाँ जाना चाहिए ? कुछ समझ में नही आता ! हे द्विजश्रेष्ठ ! कौनसा व्रत, तप या योग करनेसे मेरे पूर्वजोंका नरकसे उद्धार होगा, कृपया मुझसे कहिए! मेरे जैसा बलवान और साहसी पुत्र होते हुए भी मेरे माता-पिता नरक में हो, तो मेरा जीवन व्यर्थ है ?''

ब्राह्मण कहने लगे, ''राजन् ! निकट ही पर्वतमुनिंका आश्रम है, उन्हे भूत-भविष्य ज्ञात है ! हे नृपश्रेष्ठ ! आप उनके पास जाईये !''

ब्राह्मणोंकी बात सुनकर तत्काल राजा पर्वतमुनिकें आश्रम में गये और मुनिंको दंडवत करके उनके चरणस्पर्श किए ! मुनिने भी राजा का कुशलक्षेम पुछा!

महाराज कहने लगे, ''स्वामिन् ! आपकी कृपासे राज्य में सब कुशल है ! किंतु मैंने स्वप्न में देखा कि मेरे पूर्वज नरकमें है ! कौनसे पुण्यसे उनको मुक्ति मिलेगी कृपया आप कहिए !''

राजाके वचन सुनकर मुनि कुछ काल ध्यानस्थ हुए और राजा से कहा, ''महाराज! मार्गशीर्ष महीने के शुक्ल पक्ष को मोक्षदा एकादशी आती है ! उस व्रतका आप सभी पालन करके उसका पुण्य पूर्वजोंको दान कीजिए ! उस पुण्य के प्रभावसे उनकी नरकसे मुक्ति होगी!''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''हे युधिष्ठिर ! मुनि के वचन सुनते ही राजा ने घर लौटकर एकादशी व्रत को धारण करके उसका पुण्य अपने पितरोंको दान किया! उस पुण्य के दान करतेही आकाशसे पुष्पवृष्टि हुई! वैखानस महाराजाके पिता-पूर्वज नरकसे बाहर निकल के आकाशमें आए और राजा को कहा, ''पुत्र ! तुम्हारा कल्याण हो !'' इस आशीर्वाद को देकर वे सब स्वर्गं में गए !

इस प्रकार जो कोई चिंतामणीसमान इस एकादशी का व्रत करेगा उसे मृत्यु के बाद मोक्ष मिलेगा ! जो इस महात्म्य को सुनेगा, पढेगा उसे वाजपेय यज्ञ के फल की प्राप्ति होगी !



३. सफला एकादशी

ब्रह्मांड पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण और महाराज युधिष्ठिर के संवाद में सफला एकादशी का महात्म्य बताया गया है ! युधिष्ठिर महाराज ने पूछा, ''हे स्वामिन् ! पौष महीनेके कृष्ण पक्ष की एकादशी का नाम क्या है ? यह व्रत किस प्रकार करते हैं ? किस देवताकी पूजा करते है ? इस के बारें में आप विस्तारसे कहिए ?''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''राजेन्द्र ! बहुत बडे-बडे यज्ञ करने से जो आनंद प्राप्त होता है उससे अधिक आनंद इस व्रत पालन करनेवालेसे मुझे होता है ! यथाशक्ति विधिपूर्वक हर एक व्यक्ति को यह व्रत करना चाहिए ! भगवान् नारायणकी पूजा करें ! जिस तरह सर्पों में शेषनाग, पक्षियोंमें गरूड, देवताओंमें श्रीविष्णु और मानवोंमे ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार सब व्रतोंमें एकादशी तिथि श्रेष्ठ है ! हे राजन ! सफला एकादशी के दिन नाममंत्र का उच्चारण करते हुए नारियल, सुपारी, आम, नींबू, अनार, आवला, लवंग, बेर आदि फलोंको अर्पण करके श्रीहलिकी पूजा करनी चाहिए! धूप-दीपसे भगवानकी अर्चना करनी चाहिए! सफला एकादशीको विशेष करके दीपदान करनेका भी विधान है! रात को वैष्णवोंके साथ भगवत्-कथा, कीर्तन करते हुए जागरण करे! हजारों वर्षों की तपस्या से भी इस रात्रि के जागरण के फल की तुलना नही की जा सकती!''



''हे नृपश्रेष्ठ! अब इस सफला एकादशी की शुभदायी कथा सुनो! प्राचीन काल में चम्पावती नामक सुंदर नगरी महाराज माहिष्मताकी राजधानी थी ! उन्हें पांच पुत्र थे ! ज्येष्ठ पुत्र हमेशा पापकर्म करते हुए परस्त्री संग और वेश्यासक्त था ! अपने पिता का धन पापकर्मों में नष्ट किया !

वह दुराचारी ब्राह्मण, वैष्णव, देवताओंकी निंदा करता था ! उसके इन पापकर्मोंको देखकर राजाने उसका नाम लुम्भक रखा ! कुछ दिनों पश्चात पिता और दूसरे भाईयोंने उसे राज्यसे निकाल दिया ! लुम्भक गहन वन में चला गया ! वन में रहते हुए लुम्भक यात्रियोंको लूटने लगा ! एक दिन नगर में चोरी करने लुम्भक गया, तो सिपाहियोंने उसे पकड लिया ! अपने पिता का नाम कहने पर सिपाहियोंने उसे छोड दिया! वह वापस वन में गया और मांस, फलहार पर जीवन–निर्वाह करने लगा ! वह दुष्ट प्राचीन बरगद पेड के नीचे विश्राम करता था ! वह पेड अत्यंत प्राचीन होते हुए उस वनमें उस वृक्ष को महान देवता माना जाता था ।''

बहुत दिनों पश्चात संचित पुण्यप्रभावसे उसने एकदिन अनजाने एकादशी व्रत का पालन किया ! पौष महीने की कृष्ण पक्ष की दशमी को लुम्भक वृक्ष के फल खाकर और वस्त्रहीन रहनेसे रातभर ठंडीमें सो नही सका ! लगभग वह बेहोश हो चुका था ! 'सफला' एकादशी दिन भी वह बेहोश ही रहा । दोपहर में उसे होश आया । उठकर अथक प्रयास से चलते हुए,भुख से व्याकुल वह गहन वन में गया। जब फलोंको साथ वह लौटा तब सूर्यास्त हो रहा था । इसलिए उस फलोंको वृक्ष के मूलमें रखा और प्रार्थना की, कि भगवान् लक्ष्मीपति विष्णु इन फलोंका स्वीकार करें । ऐसा कहकर लुम्भक उस रात भी नही सोया । इससे अनजाने में उसने व्रतपालन किया ।

उस समय आकाशवाणी हुई, ''हे राजकुमार ! 'सफला' एकादशी के फल के प्रसाद से तुम्हे राज्य और पुत्र प्राप्ति होगी ।'' तब उसका मन परिवर्तन हुआ । उस समय से उसने अपनी बुद्धि भगवान् विष्णुके भजनमें लगायी । उसके बाद वह अपने पिताश्री के पास लौट गया, पिताने उसे राज्य दिया, अनूरूप राजकन्या के साथ विवाह करके बहुत वर्षों तक उत्तम राज्य करता रहा । भगवान विष्णुके वरदानसे उसे 'मनोज' नामक पुत्र की प्राप्ति हुई । मनोज जब राज्य संभालने योग्य हुआ तब लुम्भक ने आसक्तिरहित होकर राज्य त्याग दिया और भगवान् श्रीकृष्ण के शरणागत हो गया । इस प्रकार से सफला एकादशी के व्रत प्रभाव से इस जन्म में उसे सुख प्राप्त हुआ साथ ही मृत्यु पश्चात मोक्ष की भी प्राप्ति हुई। सफला एकादशी के पालन से तथा महिमा सुनने मनुष्य को राजसूय यज्ञ की प्राप्ति होती है।



४. पुत्रदा एकादशी

भविष्योत्तर पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण तथा महाराज युधिष्ठिर के संवाद में पुत्रदा एकादशी के महात्म्य का वर्णन मिलता है ।

महाराज युधिष्ठिर ने पुछा, ''हे श्रीकृष्ण ! कृपा करके मुझे पौष मास की शुक्ल पक्षकी एकादशी का वर्णन करे । उस व्रत की विधि क्या है ? तथा कौनसे देवताकी पूजा की जाती है ?''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''जगत कल्याण के लिए इस एकादशी का मैं वर्णन करूँगा । अन्य एकादशी की तरह इस एकादशी को व्रत करे । इसे 'पुत्रदा' कहते है । सब पापों का हरण करनेवाली यह सर्वोत्तम तिथि है । कामना तथा सिद्धी को पूर्ण करनेवाले भगवान् इस तिथिके अधिदेवता है । पूरे त्रिलोकमें यह सबसे उत्तम तिथि है ।''

''एक दिन घोडेपर सवार होकर महाराज सुकेतुमान गहरे वन में चले गये । पुरोहित और दूसरे लोगोंको इसकी कल्पना नही थी । पशु-पक्षियोंसे भरे हुए इस गहरे वन में महाराज भ्रमण कर रहे थे । दोपहर होते ही, महाराज को भूख और प्यास लगी । जल की तलाश में महाराज इधर-उधर घूम रहे थे । पूर्वजन्मके पुण्यसे उन्हे एक जलाशय दिखाई दिया । उस जलाशय के पास ही एक मुनिका आश्रम था ! अनेक शुभ शकुन होने लगे, उनकी बाँयी आँख और बायाँ हात फडकने लगा । शुभ घटना की आशा में राजा आश्रम में गये । उन्हें देखकर राजा को बहुत प्रसन्नता हुई । घोडे से उतरकर राजाने सभी मुनियोंको प्रणाम किया, तब उन मुनियोंने कहा, ''हे राजन ! हम आपपर प्रसन्न है ।''



राजा ने कहा, ''हे मुनिगण ! आप कौन है ? आपके

नाम क्या है? आप यहाँपर किस उद्देश्यसे एकत्रित हुए है ? कृपया हमे सत्य बताईये।''

मुनि ने कहा, ''राजन ! हम विश्वदेव है । आजसे आनेवाली पाँचवी तिथिसे माघ मास प्रारंभ होगा । आज 'पुत्रदा' एकादशी है । जो कोई भी यह एकादशी करता है उसे पुत्रप्राप्ति अवश्य होती है ।''

राजा ने कहा, ''विश्वदेवगण ! अगर आप मुझपर प्रसन्न है तो मुझे कृपया पुत्रप्राप्ति हो !''

मुनिने कहा, ''राजन ! आज 'पुत्रदा' एकादशी है । आज आप इसका पालन करे, भगवान केशव के प्रसादरूप आपको पुत्रप्राप्ति होगी।''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''हे युधिष्ठिर ! इस प्रकार मुनियोंके कहनेपर राजाने एकादशी व्रत किया । द्वादशी को व्रत संपूर्ण करके (पारण करके) मुनियोंका आशिर्वाद लेकर राजा वापस आया । उसके पश्चात् राणी गर्भवती हुई और एकादशी के पुण्य से राजाको तेजस्वी पुत्र की प्राप्ति हुई । जिसने अपने उत्तम गुणोंसे अपने पिताको संतोष दिया, वह उत्तम प्रजापालक था । इसलिए, हे राजन ! 'पुत्रदा' व्रत अवश्य करना चाहिए। जो कोई भी इस व्रतका पालन करता है उसे पुत्रकी प्राप्ति होकर वह मनुष्य स्वर्गप्राप्त करता है ।''

''जो इस व्रत की महिमा पढेगा, सुनेगा या कहेगा उसे अश्वमेध यज्ञ के फल की प्राप्ति होगी ।''



५. षट्तिला एकादशी

भविष्योत्तर पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर महाराज के संवाद में षट्तिला एकादशी महात्म्य का वर्णन है ।

युधिष्ठिरने पूछा, ''हे जगन्नाथ ! हे श्रीकृष्ण ! हे आदिदेव ! हे जगत्पते ! माघ मास के कृष्ण पक्षमें कौनसी एकादशी आती है? उसे किस प्रकार करना चाहिए ? उसका फल क्या होता है ? हे महाप्राज्ञ ! कृपया इस विषय में आप कुछ कहिए !''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''हे नृपश्रेष्ठ ! माघ मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी 'षट्तिला' नामसे विरव्यात है । सब पापोंको हरण करनेवाली एकादशी की कथा मुनिश्रेष्ठ पुलस्त ने दाल्भ्य को कही थी । वह कथा तुम भी सुनो ।''

दाल्भ्यने पूछा, ''हे मुनीवर्य ! मृत्यु लोकमें रहनेवाला हर एक जीव पापकर्म में रत है । उन्हें नरक यातना से बचाने के लिए कौनसा उपाय है, कृपया वह आप कथन करें ।''

पुलस्त्य कहने लगे, ''हे महाभाग ! आपने अच्छी बात पुछी है, तो सुनो। माघ मास में मनुष्य को स्नान करके इंद्रियोंको संयम में रखकर काम, क्रोध, अहंकार, लोभ और निंदा का त्याग करना चाहिए । देवाधीदेव! भगवान् का स्मरण करते हुए पानी से पैरो को धोकर भूमी पर गिरा हुआ गाय का गोबर इकठ्ठा करके उसमें तिल और कपास मिलाकर एकसौ आठ पिंड बनाने चाहिए । माघ मास में आर्दा मूल नक्षत्र आते ही कृष्ण पक्ष की एकादशी का व्रत धारण करे । स्नानसे पवित्र शुद्धभावसे श्रीविष्णुकी पूजा करे । अपराध क्षमा के लिए श्रीकृष्ण नाम का उच्चारण करें । रातमें होम, जागरण करे । चंदन, कर्पूर, अरभजा और भोग दिखाकर शंख, चक्र, पद्म और गदा धारण करनेवाले श्रीहरि की पूजा करें । बारंबार श्रीकृष्ण के नाम के साथ कुम्हड, नारियल और बिजौरे के फल अर्पण करके विधिपूर्वक अर्ध्य दे । दुसरी सामग्रीका अभाव हो तो सौ सुपारियोंका उपयोग करके भी पूजन और अर्घ्यदान किया जा सकता है ।

अर्घ्य मंत्र इस प्रकार है :-

कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव ।
संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरूषोत्तम ।।
नमस्ते पुंडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरूष पूर्वज ।।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं लक्ष्म्या सह जगत्पते ।

सच्चिदानंद श्रीकृष्ण आप बडे दयालु हैं । हम अनाथ जीवोंके आश्रयदाता आप हो । हे पुरूषोत्तम ! हम इस संसार सागरमें डूब रहे है, कृपया हमपर प्रसन्न हो, हे विश्वभावन ! हमारा आपको वंदन है । हे कमलनयन ! आपको प्रणाम है । हे सुब्रह्मण्यम ! हे महापुरूष ! हे सभी के पूर्वज ! आपको प्रणाम है । हे जगत्पते! लक्ष्मी के साथ आप इस अर्घ्य को स्वीकार करे ।

उसके पश्चात ब्राह्मणोंकी पूजा करके, उन्हें पानीसे भरा घडा देना चाहिए । साथमें छाता, चप्पल और वस्त्र भी अर्पण करें । 'इस दानद्वारा भगवान् श्रीकृष्ण प्रसन्न हो' यह कहते हुए दान करना चाहिए । अपनी परिस्थिती अनुसार श्रेष्ठ ब्राह्मण को काली गाय दान में देनी चाहिए । हे द्विजश्रेष्ठ ! विद्वान पुरूषने तिल से भरा हुआ पात्र दान करना चाहिए । तिल के दान से व्यक्ति हजारो वर्ष स्वर्गमें वास करता है ।

तिलस्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी ।
दिलदाता च भोक्ता च षट्तिला पापनाशिनी ।।

तिलसे स्नान करना, तिल का उबटन लगाना, तिल का हवन करना, तिल डाला हुआ जल पीना, तिल दान करना, तिल का भोजन में उपयोग करना, इस प्रकार छः कार्योंमें तिल का उपयोग करने से इसे 'षट्तिला' एकादशी माना जाता है, जो पापहारिणी है ।



एक बार षट्तिला एकादशी की महिमा सुनने देवर्षि नारद भगवान् श्रीकृष्ण के पास आए । भगवान् श्रीकृष्णने कहा, ''एक ब्राह्मण स्त्री थी। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वह भगवान् की आराधना करती थी । अनेक प्रकारकी तपस्याओंके कारण वह बहुत दुर्बल हो गई थी। उसने बहुत दान दिए, परंतु उसने ब्राह्मण और

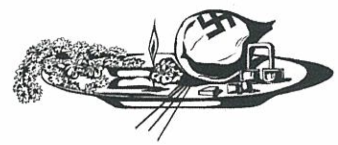
देवताओंको अन्नदान नहीं किया था । अनेक प्रकारके व्रत और तपस्या करने से वह शुद्ध हो गयी थी, परंतु भूखे लोगोंको कभी अन्नदान नही किया था । हे ब्राह्मण ! उसकी परीक्षा लेने मैं ब्राह्मण के रूप में उस साध्वीके घर जाकर भिक्षा माँगी ।

तभी उस ब्राह्मणीने पूछा, ''हे ब्राह्मण ! सत्य कहें कि आप कहाँसे आए है ?'' मैंने सुनकर अनजान बनते हुए उसे उत्तर नहीं दिया । उसने क्रोध में भिक्षापात्र में मिट्टी डाली। उसके बाद मैं अपने धाम लौट आया । अपनी तपस्याके प्रभाव से ब्राह्मणी मेरे धाम वापस आई । उसे संपत्ती हीन, सुवर्ण हीन, धान्य हीन सिर्फ एक सुंदर महल मिला। उस महल में कुछ न पाकर वह अस्वस्थ और क्रोधित होकर मेरे पास आई पूछने लगी, ''हे जनार्दन ! सब व्रत और तपस्या करके मैने श्रीविष्णु की आराधना की, परंतु मुझे धनधान्य क्यों प्राप्त नही हुआ?''

मैने कहा, ''हे साध्वी ! तुम भौतिक विश्वसे यहाँ आई हो । अब तुम अपने घर लौट जाओ । तुम्हे देखने देवताओंकी पत्नियाँ आयेंगी, उन्हे षट्तिला एकादशी की महिमा पूछकर पूरा सुनने के बाद ही दरवाजा खोलना अन्यथा नही ।'' यह सुनकर ब्राह्मणी घर वापस आई।

एक बार ब्राह्मणी दरवाजा बंद करके अंदर बैठी थी, तब देवपत्नीयाँ वहाँपर आकर कहने लगी, ''हे सुंदरी ! हे ब्राह्मणी ! हम तुम्हारे दर्शन करने आए है, कृपया दरवाजा खोले ।'' तब ब्राह्मणीने कहा, ''आपको मुझे देखने की इच्छा है तो कृपया षट्तिला एकादशी की महिमा का वर्णन करे तभी मैं दरवाजा खोलूंगी ।'' उस समय एक देवपत्नीने उसे वह महात्म्य बताया। महात्म्य सुनने के बाद ब्राह्मणीने दरवाजा खोला, देवपत्नीयाँ उसके दर्शनसे बहुत प्रसन्न हुई।

देवपत्नियों के कहेनुसार ब्राह्मणीने षट्तिला एकादशीका व्रत किया । जिसके प्रभावसे उसे धनधान्य, तेज, सौंदर्य प्राप्त हुआ । धनधान्य संपादन करने के लोभदृष्टिसे यह व्रत नही करना चाहिए । इस व्रतके पालन से अपने आप गरीबी – दुर्भाग्य नष्ट हो जाता है । जो कोई भी इस तिथि को तिल दान करेगा वह सब पापोंसे मुक्त हो जाएगा ।



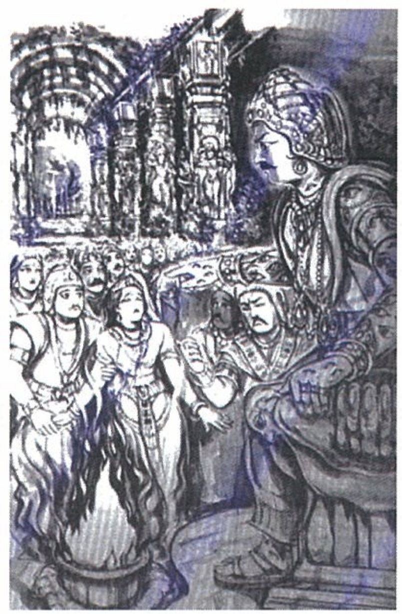
६. जया एकादशी

भविष्योत्तर पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण और महाराज युधिष्ठिर के संवाद में इस एकादशी का वर्णन आता है । युधिष्ठिर महाराजने पुछा, ''हे जनार्दन ! माघ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का क्या संबोधन है ? यह व्रत कैसे करे ? किस देवता की पूजा करनी चाहिए?''

भगवान् श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया, ''राजेन्द्र ! सुनो ! माघ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को जया एकादशी कहते है । सब पापों का हरण करके मोक्ष देनेवाली यह उत्तम तिथि है । जो कोई भी इस व्रत का पालन करेगा उसे पिशाच योनि प्राप्त नही होगी, इसलिए प्रयत्नपूर्वक इस 'जया'एकादशी का पालन करना चाहिए ।''

प्राचीन काल में स्वर्ग में देवराज इंद्र का राज था । देवगण अप्सराओंके साथ पारिजात वृक्षसे शोभित नंदनवन में विहार कर रहे थे । पचास करोड गंधर्वोंके नायक देवराज इंद्रने अपनी इच्छासे वनमें विहार करते हुए नृत्य का आयोजन किया था । गंधर्वोंमें प्रमुख पुष्पदंत, चित्रसेन और उसका पुत्र ये तीन थे।

चित्रसेनकी पत्नी का नाम 'मालिनी' था । मालिनी और चित्रसेन की कन्या 'पुष्पवन्ती' थी । पुष्पदन्त गंधर्व का पुत्र 'माल्यवान्' था । माल्यवान् पुष्पवन्ती के सौंदर्य पर मोहित हुआ था । ये दोनों भी इंद्र की प्रसन्नता के लिए नृत्य करने आए थे । यह दोनों भी अन्य अप्सराओं के साथ आनंद में गायन कर रहे थे । किंतु एक दूसरे पर अनुराग दृष्टि के कारण वे मोहित हो गये और उनका मन विचलित हो गया इससे वे शुद्ध गायन नही कर सके । कभी ताल गलत तो कभी गायन रुकता । इस बातसे क्रोधित और अपमानित होकर इंद्रने श्राप दिया, ''आप दोनो पतित हैं । मूर्ख हैं । तुम्हारा धिक्कार हो । मेरी आज्ञाभंग करने के फलस्वरूप आप पती-पत्नी



के रूप में पिशाच योनी में जन्म लेंगे ।''

इंद्र से ऐसा श्राप मिलते ही दोनो बहुत दुखी हुए । हिमालयमें जाकर पिशाच योनि को प्राप्त होकर भयंकर दुख भोगते रहे । शारीरिक पातक से प्राप्त हुई इस योनी से पीडित वे पर्वतकी गुफामें भ्रमण कर रहे थे । एक दिन पिशाच पतिने अपनी पत्नीको पूछा, ''हमने ऐसा कौनसा पाप किया है जिसके लिए हमें ये योनी मिली? नरक यातनाएँ तो दुखदायक है पर पिशाच योनीमें भी दुख बहुत भयानक है । इसलिए पूर्ण प्रयत्नसे इस पाप से छुटकारा प्राप्त करना चाहिए।''

दोनो चिंतामें मग्न थे । किंतु भगवान् की कृपा से उन्हे माघ महीनेकी एकादशी तिथि प्राप्त हुई । 'जया' नामसे प्रसिद्ध यह तिथि सब तिथिमें उत्तम है । इस तिथिको उन्होनें अन्न ग्रहण नही किया, जलग्रहण नही किया, किसी जीव की हत्त्या भी नही की और कोई फल भी नही खाया । दुख से व्याकुल सुर्यास्त तक वे बरगद के वृक्ष के नीचे बैठे रहे । भयानक रात उनके सामने उपस्थित हुई पर उन्हे निद्रा तक नही आई । कौनसे भी प्रकार का सुख और कामसुख भी उन्होंने नही भोगा । रात्र समाप्त होकर सुर्योदय हुआ । द्वादशी का दिन निकला । उनसे 'जया' एकादशी के व्रत का पालन हुआ था, उन्होंने रातभर जागरण किया था । व्रतके प्रभाव से और भगवान विष्णुकी शक्ती के कारण दोनों इस योनिसें मुक्त होकर अपने पूर्वरूप को प्राप्त हुए ।

उनके हृदयमें फिरसे पहले का अनुराग उत्पन्न हुआ । अलंकारसे शोभित होकर विमान में विराजमान होकर स्वर्गलोक में गए। देवराज इंद्र के सामने प्रसन्नतापूर्वक जाकर उन्हें सादर प्रणाम किया । उन्हें पूर्वरूपमें देखकर इंद्रको आश्चर्य हुआ और उन्होंने पूछा, ''किस पुण्य के प्रभाव से आप पिशाच योनीसे मुक्त हुए ? मुझसे श्राप पाकर भी आप कौनसे देवता के आश्रय से शाप मुक्त हो गए?''

माल्यवान ने कहा, ''हे स्वामी ! भगवान् वासुदेव की कृपासे तथा 'जया' एकादशी के व्रत से हम पिशाच योनिसे मुक्त हुए।''

देवराज इंद्र ने कहा, ''अब मेरे कहेनुसार आप दोनो सुधापान कीजिए । जो लोग भगवान् वासुदेव की शरण लेते है और एकादशी का पालन करते है वह हमें भी पूजनीय है।''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''हे राजन ! इसलिए एकादशी का व्रत करना चाहिए। हे नृपश्रेष्ठ ! 'जया'एकादशी ब्रह्महत्त्या के पातक से भी मुक्त करती है । जिसने 'जया' एकादशी के व्रत का पालन किया, उसने सभी प्रकार का दान तथा यज्ञोंको अनुष्ठान करने जैसा है । इस की महिमा पढने अथवा सुनने से अग्निष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त होता है ।''

ૡ ૡ ૡ

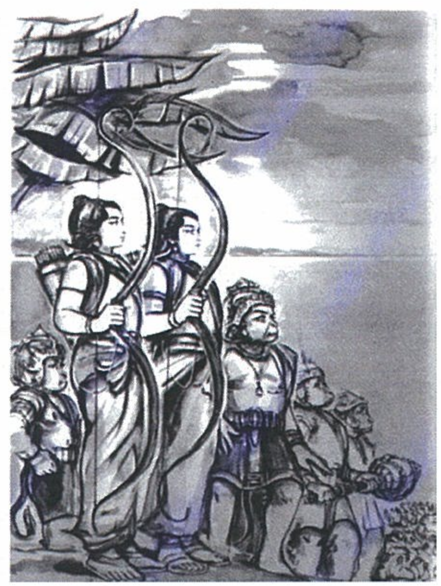
७. विजया एकादशी

स्कंद पुराणमें इस एकादशी के महिमा का वर्णंन किया गया है ।

महाराज युधिष्ठिर ने पूछा, ''हे वासुदेव ! फाल्गुन मास के कृष्ण पक्षमें कौनसी एकादशी आती है ? कृपया आप मुझे बताईये ।''

भगवान श्रीकृष्णने कहा, ''हे युधिष्ठिर ! एक बार कमलपर विराजमान ब्रह्माजी को नारदजीने पूछा, ''हे सुरश्रेष्ठ ! फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष में 'विजया' एकादशी आती है । उसका पालन करने से कौनसा पुण्य प्राप्त होता है इसके बारे में आप मुझे बताइये ।''

ब्रह्मदेव ने कहा, ''हे नारद ! सुनो, मैं तुम्हे एक कथा सुनाता हुँ, जो सब पापोंका हरण करनेवाली है । यह व्रत बहुत प्राचीन और पवित्र है। यह 'विजया'एकादशी राजाओंको विजय प्रदान करनेवाली है । बहुत पहले जब राजा रामचंद्र १४ वर्षों के लिए वन में गए थे, तो पंचवटी में सीता और लक्ष्मण के साथ निवास कर रहे थे । वहाँसे रावणने सीताहरण किया। इस दुखसे उन्हें व्याकुलता हुई । सीताजी की तलाश में वन-वन भटकते हुए उन्हे जटायु मिला जो मरणासन्न था । उसके पश्चात उन्होंने वनमें कबन्ध राक्षसका वध किया । सुग्रीवसे मित्रता करके श्रीरामचन्द्रजीने वानरसेना को संगठित किया । हनुमानजी श्रीरामचन्द्रजी की मुद्रा लेकर लंका गए और सीताजी की तलाश करके लौट आए । वहाँसे लौटते ही लंकाकथन के पश्चात सुग्रीवसे अनुमति लेकर श्रीरामचन्द्रजीने लंका जाना निश्चित किया । सागरतीर आनेपर वे लक्ष्मणसे कहने लगे, ''हे सुमित्रानंदन ! इस अगाध सागर में अनेक भयानक जीवजंतु है ।इसे सुगमतासे कैसे पार करे, कौनसाभी उपाय सूझ नही रहा है ।''



लक्ष्मणने कहा, ''महाराज ! आप ही आदिदेव और पुराण पुरूष पुरूषोत्तम है । आपसे कुछ भी छिपाना असंभव है । इस

द्वीप में प्राचीन काल से बकदाल्भ्य मुनि रहते है । पास में ही उनका आश्रम है । हे रघुनन्दन ! उन्हें इस समस्या का समाधान पूछते है ।''

लक्ष्मण के कथनानुसार प्रभु रामचंद्रजी मुनिवर्य बकदाल्भ्य के पास मिलने उनके आश्रम गए उन्हें सादर प्रणाम किया । तब मुनिवर्यने पहचाना कि यही परमपुरूषोत्तम श्रीराम है । अत्यंत आनंदपूर्वक उन्होंने पूछा, ''श्रीराम, आपका आगमन किस हेतु हुआ?''

रामचंद्रजीने कहा, ''हे मुनिवर्य ! रावणका संहार करने मै यहाँ आया हूँ । कृपा करके यह सागर पार करनेका उपाय बताएँ ।''

बकदाल्भ्यजीने कहा, ''हे श्रीराम ! फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की 'विजया'एकादशी के पालन से विजय मिलता है । हे राजन ! इस व्रतकी विधि इस प्रकार है । दशमीदिन सोने, चांदी, पीतल, तांबा अथवा मिट्टी के एक कलश की स्थापना करे । उसमें पानी भरके पत्ते डाले । उसपर भगवान् नारायण के सुवर्णमय विग्रहकी स्थापना करे । एकादशी के दिन प्रातःकाल उठकर स्नान करे । उसके बाद पुष्पमाला, चंदन, सुपारी, नारियल अर्पण करके उस कलशकी पूजा करनी चाहिए । दिनभर कलश के सामने बैठकर कथा करनी चाहिए, साथही जागरण भी करना चाहिए । घी का दीपक जलानेसे व्रतकी अखंड सिद्धी प्राप्त होती है । उसके पश्चात द्वादशी के दिन नदी या तालाब के किनारे उस कलशकी विधिवत पूजा करके वो कलश ब्राह्मण को दान करना चाहिए । महाराज ! कलश के साथ और भी बडे बडे दान करने चाहिए। हे श्रीराम ! आप इस व्रत का पालन कीजिए, इससे आपको विजय प्राप्त होगी ।''

ब्रह्माजी कहने लगे, ''हे नारद ! मुनिवर्य के कहेनुसार प्रभु श्रीरामचंद्रजीने 'विजया' एकादशी का व्रत किया । उस व्रत के प्रभाव से श्रीरामचंद्रजी विजयी हुए । हे पुत्र ! इस व्रत के प्रभाव से मनुष्य को इस जीवनमें विजय प्राप्त होता है और अक्षय परलोक प्राप्त होता है !''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''इस एकादशी का पालन करना चाहिए! इसका महात्म्य सुननसे वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है ।''



८. आमलकी एकादशी

इस एकादशी का महात्म्य ब्रह्मांड पुराणमें कहा गया है ।

युधिष्ठिर महाराजने पूछा, "हे श्रीकृष्ण ! फाल्गुन मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी का नाम क्या है ? यह व्रत किस प्रकारसे करना चाहिए कृपया आप बताईये ।"

भगवान् श्रीकृष्णने कहा, "हे धर्मनन्दन ! प्राचीन कालमें मान्धाता राजाने वशिष्ठ ऋषिको इसके बारे में पूछा था । इसे 'आमलकी' एकादशी कहते है और जो कोईभी इस व्रतका पालन करता है उसे विष्णुलोक या वैकुंठ की प्राप्ति होती है ।"

राजा मान्धाताने पूछा, "हे ऋषीवर्य ! पृथ्वीपर इस का कभी आरंभ हुआ इस विषय में आप मुझे बताईये ।"

वशिष्ठ ऋषि कहने लगे, "हे महाभाग ! पृथ्वीपर इस 'आमलकी' के प्रारंभ की कथा सुनो । आमलकी महान वृक्ष है जो सब पापोंका नाश करता है । भगवान् विष्णुकी थूंक से एक चंद्रमसमान बिंदू प्रकट हुआ । वह बिंदू पृथ्वीपर गिरा उसमें से वृक्ष उत्पन्न हुआ जिसे आमलकी नाम मिला । सब वृक्षोमें यह आदिवृक्ष माना जाता है । उसी वक्त सारी सृष्टि के निर्माता ब्रह्माजीकी भी उत्पत्ति हुई । उन्हींसे सब प्रजाकी सृष्टि हुई जिसमे देवता, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, नाग तथा पवित्र और शुद्ध हृदय वाले महर्षियों का जन्म हुआ। उनमें से देवता और ऋषिलोक विष्णुप्रिया आमलकी वृक्ष के पास आए । हे महाभाग्यवान! उस वृक्षको देखते ही देवताओंको काफी आश्चर्य हुआ और एक दूसरे को देखकर वो विचार करने लगे, पलस आदि वृक्षोंको हम जानते है, पर इस वृक्ष को हम प्रथम बार देख रहे है । उन्हें इस स्थिती में देखकर आकाशवाणी हुई, "हे महर्षि, यह आमलकी वृक्ष है, जो श्रीविष्णु को अति प्रिय है । केवल इसके स्मरणसे गोदानका पुण्य प्राप्त होता है। हमेशा आँवला खाना चाहिए । सब पापोंको नाश करनेवाला यह वैष्णव वृक्ष है ।"

तस्या मूले स्थितो विष्णुस्तदूर्ध्वंच पितामहः ।
स्कन्धे च भगवान रुद्रः संस्थितः परमेश्वरः ।।
शाखासु मुनयः सर्वे प्रशाखासुच देवताः ।।
पर्णेषु वसवो देवाः पुष्पेषु मरुतस्तथा ।।
प्रजानां पतयः सर्वे फलेष्वेव व्यवस्थिताः ।
सर्वदेवमयी ह्येषा धात्री च कथिता मया ।।

इस वृक्षके मूलमें विष्णु, अग्रभाण में ब्रह्माजी, स्कन्ध में शिवजी, शाखाओंमे मुनि, प्रशाखामें देवता, पत्तों में वसु, फुलों में मरूतगण तथा फलोंमें सब प्रजापती वास करते है। इसलिए आमलकी वृक्षको सर्वदेवमय कहा जाता है। इसलिए यह सब विष्णुभक्तोंको प्रिय है।

ऋषिने कहा, ''हे अव्यक्त महापुरूष, आप कौन है ? हम आपको क्या देवता समझे ? कृपया आप हमे बताईये ।''

फिरसे आकाशवाणी हुई, ''जो सभी जीवोंका कर्ता, सब भुवनोंका स्रोत है ओर विद्वान पुरूषोंकों भी अगम्य मैं वही विष्णु हूँ।'' देवादिदेव भगवान् विष्णुका कथन सुनने से सभी ब्रह्मपुत्र आश्चर्यचकित होकर बडे भक्तिभावसे श्रीविष्णुकी स्तुति करने लगे।

ऋषि ने कहा, ''सभी जीवोंके आत्मभूत आत्मा एवं परमात्मा आपको प्रणाम करते है। जिनका कभी पतन नही होता उन अच्युतको हम नमस्कार करते है। दामोदर, यज्ञेश्वर और परमपरमेश्वर आपको हमारा प्रणाम है। आप मायापति और संपूर्ण विश्वके स्वामी है आपको हमारा वंदन है ।''

इस प्रकार ऋषियोंने की हुई स्तुति सुनने से भगवान् विष्णु प्रसन्न हुए और कहने लगे, ''हे महर्षि ! मै आपको कौनसा अभिष्ट वरदान दूँ ।''

ऋषिने कहा, ''हे भगवान ! आप सचमुच हमारे ऊपर प्रसन्न है तो जिस व्रत को करने से मोक्ष मिलता है वो हमे कहें।''

श्रीविष्णु ने कहा, ''हे महर्षियों ! फाल्गुन शुक्ल पक्ष में अगर पुष्य नक्षत्रयुक्त द्वादशी होगी तो वो सब पापों को नष्ट करनेवाली होगी । हे द्विजवर ! उस दिन विशेष कर्तव्य करना चाहिए उसके बारे में सुनिए । आमलकी एकादशी को रातभर आमलकी वृक्षके पास जाकर जागरण करना चाहिए। उससे मनुष्य को सभी पापोंसे मुक्ति साथ ही उसे सहस्र गाय दान करनेका पुण्य भी मिलता है । हे विप्रगण ! सभी व्रतोंमें ये उत्तम व्रत है ।''

ऋषियोंने पूछा, ''हे भगवान् ! कृपया इस व्रत की विधि बताये । इसे कैसे पूर्ण करे? इसके अधिष्ठाता कौन है ? इस दिन स्नान, दान आदि विधि किस प्रकार करनी चाहिए ? पूजा की विधि क्या है ? उसके लिए मंत्र क्या है ? कृपया यथार्थ रूप से इसका वर्णन करे।''

भगवान् श्रीविष्णुने कहा, ''हे द्विजवर सुनिए ! एकादशी दिन प्रातःकाल जल्दी उठे। दंतधावन करनेके बाद संकल्प करना चाहिए कि, हे पुण्डरीकाक्ष ! हे अच्युत ! आज मै निराहार एकादशी करके कल भोजन ग्रहण करूँगा । कृपया मुझे अपने चरणोंमें आश्रय दीजिए।'' इस प्रकार से नियम ग्रहण करने के बाद पापी, पतित, चोर, पाखंडी, दुराचारी, मर्यादा भंग करनेवाले, गुरू पत्नीगामी इन व्यक्तियोंसे वार्तालाप न करें। अपने मन को वश में रखकर नदी, तालाब, कुआँ या घर में स्नान करे। स्नान करनेसे पूर्व शरीरको मिट्टी लगानी चाहिए । मिट्टी लगाते समय इस मंत्र को कहना चाहिए।

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ।
मृत्तिके हर मे पापं जन्मकोट्यां समर्जितम् ।।

हे वसुंधरा ! आप के उपर अश्व तथा रथोंका चलना हमेशा सहन करती है । भगवान वामन देवने भी अपने पैरोंसे आपको नापा है । हे मृत्तिके, मैने करोंडो जन्मोंमें अनेक पाप किए है कृपया उन सभी पापोंका आप हरण कीजिए ।

स्नान मंत्र

त्वं मातः सर्वभूतानां जीवनं तत्तु रक्षकम् ।
स्वेदजोद्भिज्जजातीनां रसनां पतये नमः ।।
स्नातो ऽ हं सर्वतीर्थेषु हृदयप्रस्रवणेषु च ।
नदीषु देवखातेषु इदं स्नांनं तु मे भवेत् ।।

हे जल अधिष्ठात्री देवी ! हे माते ! तुम सभी जीवोंका जीवन हो । वही जीवन जो स्वेदज और उद्‌भिज जातिके जीवोंका रक्षक है । तुम रस स्वामिनी हो, तुम्हे हमारा वंदन है । आज मैने सब तीर्थोमें, कुंडमें, तालाबमें और देवतासंबंधी सरोवर में स्नान किया है । मेरा ये स्नान उपर कहे हुए सभी स्नानोंका फल देनेवाला हो ।

विद्वान पुरूषको परशुराम की सोनेकी प्रतिमा बनानी चाहिए । वो चाहे अपनी शक्ति के अनुसार एक अथवा आधे तोले की हो । स्नान के पश्चात घर में पूजा और हवन करे । उसके बाद पूजा की सभी सामग्री लेकर आमलकी वृक्ष के पास जाएँ । वृक्ष के पास की जगह की साफ-सफाई करके गोबर से लेपना चाहिए। इस प्रकार शुद्ध भूमिपर मंत्र पठनद्वारा नये कुंभ की स्थापना करे । उस कलशमें पंचरत्न तथा चंदन छोडकर श्वेत चंदनसे उसे सजाए । कंठमें फूलोंकी माला डालकर सुगंधित धूप अर्पण करना चाहिए । दीपक प्रज्वलित करे इसका उद्देश्य यही कि सभी प्रकारका मनोहर, सुशोभित दृश्य निर्माण हो । पूजा के लिए नया छाता, जूता तथा वस्त्र ले। कलशपर एक बर्तन रखकर उसमें दिव्य लाजों को भरे। उसके उपर सुवर्णमय परशुरामजीकी स्थापना करे। **विशोकाय नमः** कहकर उनके चरणोंकी, **विश्वरूपिणे नमः** कहकर उनके घुटनोंकी, **उग्राय नमः** कहकर



उनके जंघाकी, **दामोदराय नमः** कहकर उनके कटिभागकी, **पद्मनाभाय नमः** से उदरकी, **श्रीवत्सधारिणे नमः** से वक्षस्थलकी, **चक्रिणे नमः** से उनके बायें हाथकी, **गदिने नमः** से दाएँ हाथकी, **वैकुण्ठाय नमः** से कंठकी, **यज्ञमुखाय नमः** से मुखकी, **विशोकनिधये नमः** से नासिकाकी, **वासुदेवाय नमः** से आंखोंकी, **वामनाय नमः** से ललाटकी, **सर्वात्मने नमः** से मस्तक तथा सभी अंगोंकी पूजा करनी चाहिए ।

नमस्ते देवदेवेश जामदग्न्य नमोऽस्तु ते ।
गृहणार्घ्यमिमं दत्तमामलक्या युतं हरे ।।

हे देवदेवेश्वर ! हे जमदग्निनंदन ! आपको मेरा सादर वंदन है । आमलकी के साथ इस अर्घ्य का आप स्वीकार करे ।

उसके पश्चात भक्तिभावसे जागरण करे । नृत्य, संगीत, वाद्य, धार्मिक उपाख्यान तथा श्रीविष्णु के संबंध की कथा–वार्ता करते हुए वो रात गुजारनी चाहिए। भगवान विष्णुका नामस्मरण करते हुए आमलकी वृक्ष की १०८ अथवा २८ परिक्रमाएँ करे । प्रातःकाल होतेही श्रीहरि की आरती करनी चाहिए । श्री परशुराम के स्वरूप में विष्णु मेरे ऊपर प्रसन्न रहे इस भावना के साथ ब्राह्मणोंकी पूजा करके वहाँकी सभी सामग्री उन्हे दान देनी चाहिए ।

उसके पश्चात आमलकी वृक्ष की परिक्रमा करके स्नान करके ब्राह्मणोंको भोजन खिलाना चाहिए । उसके बाद परिवार के साथ स्वयं भोजन ग्रहण करे । ऐसा करनेसे जो पुण्य प्राप्त होता है उस विषय में सुनिए । सभी तीर्थोंमें स्नान करनेसे, सभी प्रकारका दान करनेसे प्राप्त होता है वही पुण्य उपर्युक्त विधिका पालन करनेसे प्राप्त होता है । सभी यज्ञों को पूर्ण करनेसे जो पुण्य मिलता है उससे भी अधिक पुण्यप्राप्ती इस व्रत से होती है । इसमें किंचित भी संशय नही । वशिष्ठ ऋषि ने कहा, ‘‘हे राजन ! इतना कहकर भगवान विष्णु अंर्तधान हो गये । तब सभी महर्षियोंने इस व्रतका पालन किया । उसी प्रकारसे आपको भी इस व्रतका अनुष्ठान करना चाहिए ।’’

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा, ‘‘हे राजन् ! यह दुर्धर्वव्रत सभी पापोंसे मनुष्य को मुक्त करता है ।’’



९. पापमोचनी एकादशी

भविष्योत्तर पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण और महाराज युधिष्ठिर के संवादोंमें पापमोचनी एकादशी का वर्णन आता है ।

एक बार युधिष्ठिर महाराज भगवान् श्रीकृष्ण को कहने लगे, ''हे केशव! आमलकी एकादशी के वर्णन के पश्चात चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में आनेवाली पापमोचनी एकादशी का कृपया कथन करें ।''

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, ''हे राजन! बहुत वर्ष पहले लोमश ऋषिने राजा मान्धाता को इस पापमोचनी एकादशी की महिमा सुनायी थी। इस एकादशी व्रत के पालन से मनुष्य सब पापोंसे मुक्त होता है और जीवन के अनेक प्रकारके बुरे अनुभव से मुक्त होकर अष्टसिद्धी प्राप्त करता है ।''

लोमश ऋषीने कहा, ''बहुत पहले देवाताओंका कोषाध्यक्ष कुबेर का अतिशय सुंदर चैतरथ नाम एक मनोहर उपवन था। विशेष करके पूरे वर्षभर वसंत ऋतु के जैसा उस उपवन का वातावरण था। इसीलिए स्वर्गकन्या, किन्नर, अप्सरा और गंधर्व हमेशा विहार के लिए वहाँ आते थे। विशेष करके देवेंद्र और अन्य देवता भी वहाँ आकर आनंद और प्रेमका आदान–प्रदान करथे थे । उसी उपवनमें शिवजीके परमभक्त मेधावी नामक ऋषि तपस्या करते थे जिनकी तपस्या अनेक प्रकारसे भंग करने का प्रयत्न स्वर्गकी अप्सराएँ करती थी ।

मंजुघोषा अप्सराने उनका तपोभंग करनेका निश्चय किया । उसने ऋषि के आश्रम के समीप ही कुटिया बांधी और बहुत ही मधुर स्वरमें गाना गाने लगी । उसी समय शिवजीका शत्रु कामदेव भी शिवभक्त मेधावी ऋषि को जीतने का प्रयत्न करने लगे । शिवजीने कामदेव को एकबार भस्म किया था उसीका प्रतिशोध लेने के लिए कामदेवने ऋषिके शरीरमें प्रवेश किया । शुभ्र उपवीत धारण किए हुए मेधावी ऋषि च्यवन महर्षीके आश्रम में वास करते थे । कामदेव के शरीर में प्रवेश से मेधावी ऋषि भी कामदेव जैसे ही सुंदर दिखने लगे । उसी वक्त कामासक्त मंजुघोष उनके सामने आई । मेधावी ऋषि भी काम से घायल हो गए । उन्हे शिवजी की उपासना का विस्मरण हुआ और स्त्री संग मे पूरी तरह मग्न रहे । स्त्री–संग में उन्हे दिन–रात का भी विस्मरण हो गया। इस प्रकार अनेक वर्ष मेधावी ऋषीने काम क्रीडामें बिताए।

उसके पश्चात मंजुघोषने जाना कि मेधावी ऋषिका पतन हो चुका है और उसे अब स्वर्ग लौटना चाहिए । प्रणय में मग्न ऋषीको वह कहने लगी, ''हे ऋषीवर ! कृपया

मुझे स्वर्गलोक में लौटने की अनुमति दीजिए ।'' उसपर मेधावी ऋषीने उत्तर दिया, ''हे सुंदरी ! आज संध्या को तुम मेरे पास आयी हो, आज रात यहाँ पर रहकर सुबह तुम लौट जाना।'' मंजुघोषा इस तरह और कुछ वर्ष वहाँ रही जो ५७ वर्ष ९ महिने ३ दिन का काल था, परंतु ऋषि के लिए यह काल केवल अर्धरात्रि समान था । पुनः स्वर्ग जाने की अनुमति लेनेपर ऋषि ने कहा, ''हे सुंदरी ! अब प्रातः हो रही है, मेरी प्रातःविधी के पश्चात तुम जाना ।'' तभी अप्सरा हसते हुए कहने लगी, ''हे ऋषिवर ! प्रातःविधी को आपको कितना समय लगेगा ? अभी तक आपको तृप्ति नही आई ? मेरे संग में आपने कितने वर्ष गुजारे है? इसलिए कृपया समय का ध्यान करें ।''

ये शब्द सुनते ही मेधावी ऋषीने वर्षोंकी गणना की और कहा, ''अरेरे ! हे सुंदरी ! मैने अपने जीवनके ५७ वर्ष व्यर्थ गवा दिए । तुमने मेरे जीवन और तपस्या इन दोनोंका नाश किया।'' ऋषीके आँखोमें आंसू आए और उन्होंने मंजुघोष को शाप दिया, ''हे दुष्टे ! तुम्हे धिक्कार है ! तुमने मेरे साथ चुडैल जैसा व्यवहार किया है, इसलिए तुम चुडैल बनो।''



ऋषीसे शाप मिलने के बाद मंजुघोषा ने कहा, ''हे द्विजवर ! कृपया ये कठोर शाप आप वापस लीजीए । आप बहुत समय हमारे साथ रहे । हे स्वामी ! कृपया दया कीजिए ।'' इसपर मेधावी ऋषी कहने लगे, ''हे देवी ! मै अब क्या करुँ ? तुमने मेरी तपोशक्ति तथा तपोधन का नाश किया है । फिर भी इस शाप से मुक्त होने का उपाय सुनो । चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में जो पापमोचनी एकादशी आती है उस दिन इस एकादशी व्रतका कठोर पालन करनेसे इस पिशाच्च योनीसे तुम्हे मुक्ति मिलेगी।''

इतना कहकर मेधावी

ऋषी अपने पिता च्यवन ऋषिकें आश्रम लौट आए। अपने पतित पुत्रको देखकर च्यवन ऋषीकों बहुत दुःख हुआ। वे कहने लगे, ''हे पुत्र ! तुमने ये क्या किया? एक स्त्री के लिए अपनी तपस्या नष्ट की। अपना ही नाश कर लिया?'' उसपर मेधावी ऋषीने कहा, ''मैंने दुर्भाग्यसे एक अप्सरा का संग करके बहुत बडा पातक किया । कृपा करके इस पापका योग्य प्रायश्चित बताएँ ।'' पश्चातापदग्ध पुत्र के शब्द सुनने के बाद च्यवन महर्षी ने कहा, ''चैत्र मास के कृष्ण पक्ष की पापमोचनी एकादशी के व्रत पालन से तुम पापामुक्त हो जाओगे।''

''उत्साह और कठोरतासे मेधावी ऋषीने उस व्रतका पालन किया जिसके प्रभावसे वे सभी पापोंसे मुक्त हुए । मंजुघोषको भी इस व्रत के पालन करने से अपने पूर्वरूप की प्राप्ति हो गई जिससे वह स्वर्गलोक चली गई ।''

यह कथा कहने के पश्चात लोमश ऋषीने मान्धाता राजाको कहा, ''हे प्रिय राजन ! केवल इस व्रत पालन से सभी पाप नष्ट हो जाते है। इस एकादशी के महात्म्य पढनेसे अथवा सुननेसे हजार गाय दान करनेका पुण्य प्राप्त होता है । इस एकादशी व्रत का पालन करने से अनेक पापोंसे जैसे कि भ्रुणहत्या, ब्रह्महत्या, मद्यपान, परस्त्रीसंग, गुरुपत्नीसंग इनका नाश हो जाता है ।''



१०. कामदा एकादशी

वराह पुराणमें भगवान् श्रीकृष्ण और महाराज युधिष्ठिर के संवाद में कामदा एकादशी का महात्म्य कहा गया है ।

महाराज युधिष्ठिर श्रीकृष्ण को कहने लगे, "हे यदुवर, कृपया मेरा प्रणाम स्वीकार करे। चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का वर्णन करे। इस व्रतकी विधी और उसका पालन करने से होनेवाले लाभ का वर्णन करें।"

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा, "प्रिय युधिष्ठिर महाराज ! पुराणोंमे वर्णित एकादशी का महात्म्य सुनो। एक बार प्रभु रामचंद्र के पितामह महाराज दिलीपने अपने गुरू वसिष्ठ को यही प्रश्न पूछा था।"

वसिष्ठजीने कहा, "हे राजन् ! निश्चित आपकी इच्छा पूर्ण करुँगा। इस एकादशी को 'कामदा' कहते है । इस व्रतके पालनसे सभी पाप जलकर भस्म हो जाते हैं और व्रत के पालन करने वाले को पुत्रप्राप्ति होती है।"

बहुत वर्ष पहले रत्नपुर (भोगीपुर) राज्य में पुण्डरीक राजा अपनी प्रजा गंधर्व, किन्नर के साथ रहते थे। उसी राज्यमें अप्सरा ललिता अपने गंधर्व पति ललित के साथ रहती थी। उनका एक दूसरे पर बहुत प्रेम था। प्रेम इतना प्रगाढ था कि, एक क्षण भी एक दूसरे के बगैर वे नहीं रहते।



एक बार पुण्डरीक राजा की सभा में सब गंधर्व नृत्य और गायन करे रहे थे। उसमें ललित गंधर्व भी था। पत्नि सभा में न होने के कारण उसका नृत्य और गायन ताल में नही था। वहा प्रेक्षकोंमें कर्कोटक नामका सर्प भी था । उसने ललित के विसंगत नृत्य और गायन का रहस्य जाना और राजा को उसी प्रकार बताया । राजा बहुत क्रोधित हुए उन्होंने ललित को शाप दिया, "हे पापात्मा ! अपने स्त्रीपति कामासक्ती के कारण तुमने

नृत्यसभामें विसंगती निर्माण की है। इसलिए मै तुम्हे नरभक्षक बनने का शाप देता हूँ !''

पुण्डरीकसे शाप मिलते ही ललित को भयंकर नरभक्षक राक्षसका रूप मिला। अपने पतिका भयानक रूप देखकर ललिताको बहुत दुःख हुआ। फिर भी सभी मर्यादायें छोडकर वह अपने पति के साथ वनमें रहने लगी।

वनमें भ्रमण करते हुए विंध्य पर्वत के शिखरपर पवित्र शृंगी ऋषीका आश्रम ललिताने देखा और तुरंत आश्रममें जाकर ऋषीके सामने उसने प्रणाम किया ।

उसे देखकर श्रृंगी ऋषीने पूछा, ''तुम कौन हो ? तुम्हारे पिता कौन है? तुम यहाँ किस कारण से आयी हो ?''ललिताने कहा, ''हे ऋषीवर ! मैं ललिता, वृंदावन गंधर्व की कन्या हूँ । अपने शापित पति के साथ मैं यहाँ आयी हूँ । गंधर्व राजा पुण्डरीक के शापसे मेरे पति राक्षस बने है। उनका यह रूप देखकर मुझे बहुत दुख हो रहा है । कृपया इस शापसे मुक्ति मिलने का उपाय कथन करें जिस प्रायश्चितसे मेरे पति की राक्षसी योनी से मुक्तता हो।'' ललिताकी नम्र विनंती सुनकर शृंगी ऋषीने कहा, ''हे गंधर्वकन्या ! कुछ ही दिनों में चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की कामदा एकादशी आएगी। इस व्रतका तुम कठोर पालन करो और तुम्हे मिलनेवाला सभी पुण्य अपने पतीको अर्पण करो। जिससे वह इस शापसे मुक्त हो जाएंगे। ये एकादशी सभी इच्छा पूर्ण करनेवाली है।''

''हे राजन ! ऋषी के कहेनुसार ललिताने आनंदपूर्वक और कठोरतासे इस व्रतका पालन किया। द्वादशी के दिन भगवान् वासुदेव और ब्राह्मणों के समक्ष उसने कहा, ''मैंने अपने पतिकी शापसे मुक्तता कराने के लिए इसका पालन किया है। इस व्रत के प्रभावसे मेरे पति शापमुक्त हो जाएँ।''और क्या आश्चर्य नरभक्षक ललित पुनः गंधर्व बना। उसके बाद ललिता और ललित सुखसे रहने लगे।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा, ''हे युधिष्ठिर महाराज ! हे राजेश्वर ! जो कोई भी इस अद्भुत कथा का श्रवण करेगा और अपनी क्षमता के साथ इसका पालन करेगा वह ब्रह्महत्या के पातक से और आसुरी शापसे मुक्त हो जाएगा।''



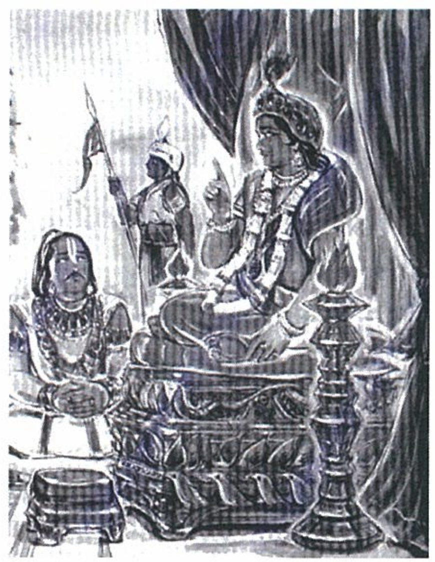
११. वरुथिनी एकादशी

वैशाख मास के कृष्ण पक्ष में आनेवाली वरुथिनी एकादशी का महात्म्य भविष्योत्तर पुराणमें श्रीकृष्ण और महाराज युधिष्ठिर के संवादमें कहा गया है।

एक बार युधिष्ठिर महाराजने भगवान् श्रीकृष्ण से पूछा, ''हे वासुदेव ! वैशाख मास के कृष्ण पक्षकी एकादशी का नाम क्या है ? और इस एकादशी व्रतका पालन करनेसे क्या फल प्राप्त होता है और उसका महात्म्य क्या है ?''

भगवान् श्रीकृष्णने कहा, ''हे प्रिय राजन् ! इस एकादशी का नाम वरुथिनी है जिसको करनेसे इस जन्म और अगले जन्म में भी सौभाग्य प्राप्त होता है। इस एकादशी व्रत के प्रभाव से व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त होता है, साथ ही उसे वास्तविक आनंद की प्राप्ति होकर वह भाग्यवान बनता है। और जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा मिलकर उसे भगवान की भक्ति प्राप्त होती है। इस व्रत के पालन से मान्धाता राजाको मुक्ति मिली। उसी प्रकार अनेक राजा महाराजा जैसे की महाराज धुन्धुमार भी मुक्त हुए। केवल वरुथिनी एकादशी के व्रत से दस हजार वर्ष तपस्या का फल प्राप्त होता है। तथा सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्रपर ४० किलो सुवर्णदान का फल इस व्रत को करनेसे मिलता है।''

''हे राजन् ! गजदान ये अश्वदान से श्रेष्ठ है, भूमिदान ये गजदान से श्रेष्ठ माना जाता है और तिलदान ये भूमिदान से भी श्रेष्ठ है। सुवर्णदान ये तिलदान से श्रेष्ठ है तथा अन्नदान ये सुवर्णदान से भी श्रेष्ठ है। हे राजन्! अन्नदान करने से पूर्वज, देवता और सभी प्राणी प्रसन्न होते है। बुद्धिमान लोंगो का यह विचार है कि, कन्यादान भी अन्नदान इतना ही पुण्यकार्य है। स्वयं भगवान् कहते है कि अन्नदान ये गोदान इतना ही श्रेष्ठ है। परंतु सर्वश्रेष्ठ विद्यादान ही है।''



केवल वरुथिनी एकादशी व्रत के पालन से सभी प्रकारके दान देने जैसा पुण्य प्राप्त होता है। अपने चरितार्थ के लिए जो अपनी कन्या को बेचता है वो सबसे नीच मनुष्य माना जाता है और प्रलयतक उस व्यक्तिको नरक में दु:ख भोगना पडता है। इसलिए किसी को भी अपनी कन्या के बदले में कभी धन स्वीकार नही करना चाहिए। और जो व्यक्ति ऐसा करता है उसे अगला जन्म बिल्ली का मिलता है। परंतु अपनी क्षमता से जो व्यक्ती सुवर्णालंकार से सुशोभित करके योग्य वर को अपनी कन्या प्रदान करता है उस व्यक्ति के पुण्यों का लेखाजोखा यमराज के सचिव चित्रगुप्त भी नही कर सकते।

इस एकादशी के व्रत का पालन करनेवालों को कुछ बाते वर्जित है वह है :- कांसे के बर्तन में न खाऐं। मांसाहार न करें। मसूर की दाल, हरी सब्जियाँ, मटर ना खाऐं। अभक्त के हाथ का बनाया हुआ न खाऐं। दशमी, एकादशी दिन मैथुन वर्जित है। जुआ ना खेलें। पान न खाऐं। दांत की सफाई न करे । (दंतमजन करना वर्जित है) प्रजल्प न करे । झूठ ना बोलें। किसीकी भी निंदा न करे। पापी व्यक्तिसे बात न करे। दिनमें न सोये। किसीपर भी क्रोध ना करे। शहद न खायें। दशमी,एकादशी और द्वादशी के दिन नाखून, बाल ना काटें । दाढी भी न करे। दशमी, एकादशी और द्वादशी के दिन शरीरको तेल न लगाऐं। सावधानीपूर्वक इन सब बातोंका पालन करनेसे उत्तम प्रकार से एकादशी व्रत का पालन होता है और पालन करनेवाले को जीवन के सर्वोच्च ध्येय की प्राप्ति होती है। एकादशी के दिन जागरण करने से सभी पाप क्षय हो जाते है और उसे भगवद्धाम की प्राप्ति होती है। इस एकादशी की महिमा को जो कोई भी सुनता है अथवा पढता है उसे एक सहस्र गोदान का पुण्य मिलता है और वह भगवान् विष्णुके धामकी प्राप्ति करता है।''



१२. मोहिनी एकादशी

सूर्य पुराणमें वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में आनेवाली मोहिनी एकादशी की महिमा का वर्णन है।

महाराज युधिष्ठिरने भगवान् श्रीकृष्ण को पूछा, "हे जनार्दन! वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में आनेवाली एकादशी का नाम क्या है ? इस व्रतका पालन कैसे करे ? इसे करने से क्या पुण्य प्राप्त होता है, कृपया आप विस्तारसे कहिए।"

भगवान् श्रीकृष्णने कहा, "हे धर्मपुत्र! ध्यान से सुनिए! जो कथा वशिष्ठ मुनिने प्रभू रामचंद्रको सुनायी थी वह मै आपको कहता हूँ।"

पूर्व कालमें प्रभु रामचंद्र वशिष्ठ महाराज को पूछने लगे, "हे आदरणीय ऋषिवर ! सीताजी के विरह से मैं अत्यंत निराश हूँ। कृपया आप हमें ऐसा व्रत बताईये जिसके प्रभाव से सब पापोंसे और दुःखोसे मुक्ति मिले।"

प्रभु रामचंद्रजीके आध्यात्मिक गुरु वशिष्ठजी ने कहा, "प्रिय राम! आप बहुत बुद्धिमान है! आपके पवित्र नाम से ही सभी प्राणियोंके दुःख दूर होते है, उनका जीवन मंगलमय होता है। फिर भी सभी जीवोंके उद्धार के लिए पूछा गया यह प्रश्न प्रशंसनीय है। अब मैं आपको इस व्रतकी विस्तारपूर्वक कथा कहता हूँ। वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में मोहिनी एकादशी आती है। वो बहुत ही मंगलकारक है, इस व्रत के पालन से व्यक्ति संसारके दुःखोसे, अनेक पापोंसे तथा भौतिक भ्रमसे मुक्त होता है।"



"प्राचीन काल में सरस्वती नदी के किनारे रम्य भद्रावती नामक राज्य था। धृतिमान नामक राजा वहाँ राज्य करता था। चंद्रवंशमें जन्मा यह राजा सहिष्णु और सत्यवादी था। उसी शहरमें धनपाल नामक एक वैश्य था जो बहुत ही पुण्यवान वैष्णव था। जनहित हेतू उस भक्त धनपाल ने नगर

में अनेक धर्मशाला, रुग्णालय, बडे मार्ग, पाठशाला, बाजार और भगवान् विष्णुके मंदिर की स्थापना की थी । पीने के पानी के कुएँ, शुद्ध जल का तालाब तथा अन्नछत्र पूरे नगर में बनाए थे । इस प्रकार जनकल्याण के लिए अपने धन का उपयोग योग्य तरीके से करते हुए अपना नाम धनपाल सचमुच सार्थक किया। सबका हित चिंतनेवाला, सब के उपर प्रेम रखनेवाले इस वैष्णव के पाँच पुत्र थे। समन, द्युतिमन, मेधवी, सुकीर्ति और धृष्टबुद्धि ये उनके नाम थे। इन सभी में धृष्टबुद्धी बहुत पापी और दुराचारी था। दुष्ट व्यक्तियोंका संग, व्यभिचारी स्त्रियोंका संग, निष्पाप पशु की हत्या, मांस, मदिरापान करना इन सब पाप कृत्योंसे वह अत्यंत पापी और दुराचारी बना था। अपने परिवारके लिए वो कलंक था। देवता, ब्राह्मण, बुजुर्ग तथा अतिथियोंको कभी आदर नही देता, सदा पाप करने में रत था।

एक दिन मार्गपर वेश्या के कंधेपर हाथ रखकर जाते हुए उसे उसके पिता धनपालने देखा और उन्हे बहुत दुःख हुआ। उसी दिन उन्होने धृष्टबुद्धीको घरसे बाहर निकाला। इसलिए धृष्टबुद्धी अपने माता-पिता, भाई, रिश्तेदार और वैश्य समाज से अलग हुआ और हर एक के तिरस्कार का विषय बना। पिताके निकालने से धृष्टबुद्धी घर से बाहर जाकर ज्यादा पापकृत्योंमें व्यस्त हुआ। खुदके वस्त्र और धन बेचकर जो भी मिला वो सभी उसने पापकृत्योंमें लगाया। अंत में जब धन खत्म हुआ तो निर्धनता के कारण उसकी हालत भिखारी जैसी हुई। अन्न न मिलने से उसका शरीर कमजोर हो गया, उसके सभी धूर्त मित्रोंने बहाने बनाकर उसका त्याग किया।

धृष्टबुद्धी को अतिशय चिंता हो रही थी, भुख से वह व्याकुल हो रहा था। अब मुझे क्या करना चाहिए। अन्न और धन कहाँ से प्राप्त होगा ? इन प्रश्नोंको सोचकर वह अशांत हो रहा था। आखिर उसने चोरी करने का निश्चय किया और शुरुआत भी की। बहुत बार राजा के सिपाही उसे पकडने के बाद भी, उसके पिता का मान और बढप्पन देखकर छोड देते। फिर भी उसने चोरी करना बंद नही किया। एक बार विशेष चोरी करते समय वह पकडा गया। तब राजाने उसे कहा, ''हे मूर्ख, आज तुम इस राज्यमें नही रह सकते क्योंकि तुम महापापी हो। मैं तुम्हे अभी छोड रहा हूँ, तुरंत इस राज्य के बाहर चले जाओ। तुम्हे जहाँ जाना है तुम जा सकते हो।''

फिर से सजा मिलने के भय से धृष्टबुद्धी राज्य के बाहर गहन वन में गया। अविवेक के कारण निष्पाप प्राणियोंकी हत्या करके उनका कच्चा मांस वह खाने लगा। किसी शिकारी की भाँति हाथ में धनुष्य लेकर वह वन में पापकृत्य करते भटकने लगा।

धृष्टबुद्धी हर समय दुःखी और चिंतित रहता। परंतु एक दिन उसके पिछले

जन्म के पुण्यकर्म के प्रभावसे, वह एक ऋषिके आश्रम में पहुँचा । उस आश्रममें कौण्डिण्य नामक बडे तपस्वी रहते थे । वैशाख मास था और कौण्डिण्य मुनी गंगास्नान से लौट रहे थे। दुःखोंसे परेशान धृष्टबुद्धी ने अनजाने में ऋषिके वस्त्रसे टपकते जल को स्पर्श किया और आश्चर्यम्! वह अपने सभी पापोंसे मुक्त हो गया। उसी समय उसने ऋषिको दंडवत प्रणाम करके विनम्रता से पूछा, ''हे ऋषिवर ! मै बहुत पापी व्यक्ति हूँ। ऐसा कौनसा भी पाप नही है जो मैने नही किया हो। कृपया ऐसा व्रत बताईये जिसके प्रभावसे मैं सभी पापोंसे मुक्त हो जाऊँ। अपर्याद पापकृत्यों के कारण मैं अपने कुटुंब से, मित्रोंसे, समाज से दूर हो गया हूँ साथ ही मैं मानसिक दुःख के खाई में गिरा हूँ।''

यह सब सुनते ही परदुखदुखी होनेवाले कौण्डिण्य ऋषिने कहा, ''सुनो! मेरु पर्वतसे भी अधिक प्रचंड पापों की राशि को नष्ट करनेवाले व्रत के बारे में मै तुम्हे कहता हूँ। उस व्रत के पालनसे कुछ ही क्षणोंमे तुम्हारे पापों का नाश हो जाएगा । वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में आनेवाली एकादशी का पालन करते ही तुम सभी पापोंसे मुक्त हो जाओगे।''

ऋषि के आदेश से धृष्टबुद्धीने इस व्रतका कठोर पालन किया। हे राजन! इस व्रत के पालन से वह सभी पापोंसे मुक्त होकर दिव्य शरीर प्राप्त करके गरुडपर सवार होकर विष्णुलोक चला गया। हे रामचंद्र ! इस व्रत से सभी पापोंसे, भ्रमसे व्यक्ति मुक्त होता है। इस व्रत से प्राप्त होनेवाला फल तीर्थमें स्नान करनेसे अथवा यज्ञ करनेसे प्राप्त होनेवाले से भी श्रेष्ठ है।



एकादशी माता की आरती

ॐ जय एकादशी, जय एकादशी, जय एकादशी माता।
विष्णु पूजा व्रत को धारण कर, शक्ति मुक्ति पाता॥
ॐ जय एकादशी...॥

तेरे नाम गिनाऊं देवी, भक्ति प्रदान करनी।
गण गौरव की देनी माता, शास्त्रों में वरनी॥
ॐ जय एकादशी...॥

मार्गशीर्ष के कृष्णपक्ष की उत्पन्ना, विश्वतारनी जन्मी।
शुक्ल पक्ष में हुई मोक्षदा, मुक्तिदाता बन आई॥
ॐ जय एकादशी...॥

पौष के कृष्णपक्ष की, सफला नामक है।
शुक्लपक्ष में होय पुत्रदा, आनन्द अधिक रहै॥
ॐ जय एकादशी...॥

नाम षटतिला माघ मास में, कृष्णपक्ष आवै।
शुक्लपक्ष में जया, कहावै, विजय सदा पावै॥
ॐ जय एकादशी...॥

विजया फागुन कृष्णपक्ष में शुक्ला आमलकी।
पापमोचनी कृष्ण पक्ष में, चैत्र महाबलि की॥
ॐ जय एकादशी...॥

चैत्र शुक्ल में नाम कामदा, धन देने वाली।
नाम बरुथिनी कृष्णपक्ष में, वैसाख माह वाली॥
ॐ जय एकादशी...॥

शुक्ल पक्ष में होय मोहिनी अपरा ज्येष्ठ कृष्णपक्षी।
नाम निर्जला सब सुख करनी, शुक्लपक्ष रखी॥
ॐ जय एकादशी...॥

योगिनी नाम आषाढ में जानों, कृष्णपक्ष करनी।
देवशयनी नाम कहायो, शुक्लपक्ष धरनी॥
ॐ जय एकादशी...॥

कामिका श्रावण मास में आवै, कृष्णपक्ष कहिए।
श्रावण शुक्ला होय पवित्रा आनन्द से रहिए॥
ॐ जय एकादशी...॥

अजा भाद्रपद कृष्णपक्ष की, परिवर्तिनी शुक्ला।
इन्द्रा आश्विन कृष्णपक्ष में, व्रत से भवसागर निकला॥
ॐ जय एकादशी...॥

पापांकुशा है शुक्ल पक्ष में, आप हरनहारी।
रमा मास कार्तिक में आवै, सुखदायक भारी॥
ॐ जय एकादशी...॥

देवोत्थानी शुक्लपक्ष की, दुखनाशक मैया।
पावन मास में करू विनती पार करो नैया॥

ॐ जय एकादशी...॥

परमा कृष्णपक्ष में होती, जन मंगल करनी।
शुक्ल मास में होय पद्मिनी दुख दारिद्र हरनी॥

ॐ जय एकादशी...॥

जो कोई आरती एकादशी की, भक्ति सहित गावै।
जन गुरदिता स्वर्ग का वासा, निश्चय वह पावै॥

ॐ जय एकादशी...॥



होली - पूजन विधि एवं सामग्री

होलिका दहन तो रात्रि में होता है, परन्तु महिलाओं द्वारा सामूहिक होली की पूजा दिन में दोपहर से लेकर शाम तक की जाती है ।
पहले जमीन पर गोबर और जल से चौका लगाया जाता है । चौका लगाने के बाद एक सीधी लकड़ी (डण्डा) के चारों तरफ बड़कुला (गूलरी) की माला लगा दें ।
उन मालाओं के आसपास गोबर की ढाल, तलवार, खिलौना आदि रख दें ।
फिर जो पूजन का समय निश्चत हो उस समय जल, रोली, मौली, चावल, ढाल, फूल, गुलाल, गुड़, नारियल, कच्चे सूत की पिण्डी आदि से पूजन करने के बाद ढाल, तलवार अपने घर में रख लें । चार जेलमाला (गूलेरी की माला) अपने घर में पितर जी, हनुमान जी, शीतला माता तथा घर के नाम की उठाकर अलग रख दें ।
यदि आपके घर में होली न जलती हो तो सब ओर यदि जलती हो तो एक माला, ऊख, पूजा की समस्त सामग्री, कच्चे सूत की कुकड़ी, जल का लोटा, नारियल, बूटे (हरे चने की डाली), पापड़ आदि सब सामान, जिस स्थान पर होली जलती हो वहां ले जाएं ।
वहां जाकर डंडी होली का पूजन करें । जेलमाला, नारियल आदि चढ़ा दें । फिर परिक्रमा देकर पापड़, बूटे आदि होली जलने पर भुन लें ओर बांट कर खा लें । ऊख घर पर वापस ले आएं ।
यदि घर पर होली जलाएं तो गांव या शहर वाली होली में से ही अग्नि लाकर घर होली जलाएं । घर की होली में अग्नि लगाते ही उस लकड़ी को बहार निकाल लें । इस ड़डे को भक्त प्रहलाद मानते हैं ।
स्त्रियां होली जलते ही एक लोटे से सात बार जल का अर्ध्य देकर रोली अक्षत चढायें । फिर होली के गीत तथा बधाई गाएं । पुरूष घर की होली में बूटे और जौ के बाल, पापड़ आदि भूनकर तथा उन्हे सबमें बांटकर खा लें । पूजन के बाद बच्चे और पुरूष रोली से तिलक लगाएं तथा छोटे अपने से बड़ों के पांव छूकर आर्शीवाद लें ।
इसके पूर्व सर्वप्रथम होली के दिन स्नान आदि से निवृत होकर पहले हनुमानजी, भैरोंजी आदि देवताओं की पूजा करें । फिर उन पर जल, रोली, मौली, चावल, फूल, प्रसाद, गुलाल, नारियल, चंदन आदि चढ़ाए । दीपक से आरती करके सबको दण्डवत् प्रणाम करें । फिर सबके रोली से तिलक लगा दें और जिन देवताओं को आप मानते हों उनकी पूजा करें ।
फिर थोड़े से तेल को सब बच्चों का हाथ लगाकर किसी चौराहे पर भैरोजी के नाम से एक ईंट पर चढ़ा दें ।

होली की कथा

बहुत पुरानी बात है - हिरण्यकश्यप नाम का एक राक्षस था । उसके पुत्र का नाम प्रहलाद था । प्रहलाद भगवान् का परम् भक्त था । परन्तु उसका पिता भगवान् को अपना शत्रु मानता था । वह अपने राज्य में किसी को भी ईश्वर का नाम लेने देता था ।

हिरण्यकश्यप ने घोर तपस्या से विपुल शक्ति का संग्रहकर देवताओं को कष्ट देना प्रारंम्भ किया । इंन्द्रासन पर भी अपना अधिकार कर लिया और आनंद पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगा ।

विष्णु से विशेष विद्वेष था । सम्भवत: इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप उसके पुत्र प्रहलाद में विष्णु के प्रति भक्ति की भावना जाग्रत हुई । एक बार हिरण्यकश्यप जब अपने पुत्र की शिक्षा के संबंध में जानने के लिए उसके गुरू के पास गया तप उस अपने पुत्र की भक्ति भावना का ज्ञान हुआ । उसने अपने पुत्र को ईश्वर का नाम लेने से मना किया परन्तु प्रहलाद को ईश्वर भजन से न रोक सका ।

इस पर क्रोधित होकर उसने प्रहलाद को सर्पो की कोठरी में बंद करवाया, पहाड़ से गिरवाया, हाथी के सामने डलवाया, परन्तु वह उस भक्त का कुछ ना बिगाड़ पाया । अंत मे उसने आदेश दिया कि मेरी बहन होलिका को बुलाओ और उससे कहो कि वह प्रहलाद को अग्नि मे लेकर बैठ जाए, जिससे प्रहलाद जल कर मर जाएगा । होलिका को ऐसा वरदान मिला हुआ था कि अग्नि उसको जला नही सकती । अत: भाई की आज्ञा से वह भक्त प्रहलाद को गोद में लेकर आग के ऊपर बैठ गई, लेकिन प्रहलाद का बाल भी बाँका न हुआ और होलिका जल कर भस्म हो गई ।भगवान् की कृपा से अग्नि प्रहलाद के लिए बर्फ के सामान शीतल हो गई ।

तभी से होलिका जलाई जाती है ।

इधर जब हिरण्यकश्यप को पता लगा कि प्रहलाद तो बच गया और होलिका जलकर भस्म हो गई है तो अंत में निराश हिरण्यकश्यप ने क्रोधित होकर प्रहलाद को एक लोहे के खम्भे से बाँध दिया और पूछा - 'बोल, कहां है तेरा भगवान्, जिसकी तू हमेशा रट लगाए रहता है ?' प्रहलाद ने निडर होकर जवाब दिया - 'सभी जगह तो है भगवान्।' उसके पिता ने कहा - 'क्या इस खम्भे में भी है ? यदि है तो मैं अभी तलवार से तुम्हारे दो टुकड़े करता हूं, देखूं वह तुम्हे कैसे बचाता है ?'

यह कहकर जैसे ही हिरण्यकश्यप ने प्रहलाद को मारने के लिए तलवार उठाई भगवान् विष्णु ने खम्भे को फाड़ नृसिंह रूप में अवतरित हो अपनी जांघो पर बैठाकर हिरण्यकश्यप का नखों से पेट फाड़कर वध कर दिया और प्रहलाद के प्राणो की रक्षा की ।

समाप्त

आज बिरज में होरी रे रसिया

आज बिरज में होरी रे रसिया।
होरी रे होरी रे बरजोरी रे रसिया।

घर घर से ब्रज बनिता आई,
कोई श्यामल कोई गोरी रे रसिया।
आज बिरज में... ॥१॥

इत तें आये कुंवर कन्हाई,
उत तें आईं राधा गोरी रे रसिया।
आज बिरज में... ॥२॥

कोई लावे चोवा कोई लावे चंदन,
कोई मले मुख रोरी रे रसिया ।
आज बिरज में ॥३॥

उडत गुलाल लाल भये बदरा,
मारत भर भर झोरी रे रसिया ।
आज बिरज में ॥४॥

चन्द्रसखी भज बाल कृष्ण प्रभु,
चिर जीवो यह जोडी रे रसिया ।
आज बिरज में होरी रे रसिया।
होरी रे होरी रे बरजोरी रे रसिया। ॥५॥



पूजा की विधि एवं विधान

श्री दुर्गा पूजा विशेष रूप से वर्ष में दो बार चैत्र व अश्विन मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होकर नवमी तक होती है। देवी दुर्गा के नव(९) स्वरूपों की पूजा होने के कारण 'नवदुर्गा' तथा ९ दिन में पूजा होने से नवरात्र कहा जाता है । चैत्र मास के नवरात्र "वार्षिक नवरात्र" तथा आश्विन मास के नवरात्र "शारदीय नवरात्र" कहलाते है।
भगवती दुर्गा का साधक भक्त स्नानादि से शुद्ध होकर, शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा स्थल को सजाये । मण्डप में श्री दुर्गा की मूर्ति स्थापित करें । मूर्ति के दायीं ओर कलश की स्थापन कर ठीक कलश के सामने मिट्टी और रेत मिलाकर जौं बो दें । मण्डप के पूर्व कोने में दीपक की स्थापना करे । पूजन मे सर्वप्रथम गणेश जी का पूजन करके अन्य देवी-देवताओ का पूजन करें । उसके बाद जगदम्बा का पूजन करें ।
पूजन सामग्री : जल,चन्दन, रोली, कलावा, अक्षत, पुष्प, पुष्पमाला, धूप, दीप, नेवैद्य, फल, पान, सुपारी, लौंग, इलाचयी, आसन, चौकी, पूजन पात्र, आरती कलशादि ।

कुमारी-पूजन :

आठ या नौ दिन तक इस प्रकार पूजा करने के बाद महाष्टमी या रामनवमी को पूजा करने के बाद कुमारी कन्याओ को खिलाना चाहिए । इस कुमारियों की संख्या ९ हो तो अति उत्तम, नही तो कम से कम दो होनी चाहिए । कुमारियों की आयु १ से १० वर्ष तक होनी चाहिए।
कम्रश: इन सब कुमारियों के नमस्कार मंत्र ये है :
(१) कुमार्य्यै नम: (२) त्रिमूर्त्यै नम: (३) कल्याण्यै नम: (४) रोहिण्यै नम: (५) कालिकायै नम: (६) चाण्डिकायै नम: (७) शाम्भव्यै नम: (८) दुर्गायै नम: (९) सुभाद्रायै नम: ।
पूजन करने के बाद जब कुमारी देवी भोजन कर लें तो उनसे अपने सिर पर अक्षत छुड़वायें और उन्हे दक्षिणा दें । इस तरह करने से महामाया भगवती अत्यन्त प्रसन्न होकर मनोरथ पूर्ण करती हैं।

नवरात्री व्रत कथा

प्राचीन काल में चैत्र वंशी सुरथ नामक एक राजा राज करते थे। एक बार उनके शत्रुओं ने आक्रमण कर दिया और उन्हे युद्ध में हरा दिया । राजा को बलहीन देखकर उसके दुष्ट मंत्रियों ने राजा की सेना और खजाना अपने अधिकार में कर लिया। जिसके परिणाम स्वरूप राजा सुरथ दुखी और निराश होकर वन की ओर चले गए और वहाँ महर्षि मेधा के आश्रम में रहने लगे ।
एक दिन आश्रम के निकट राजा की भेंट समाधि नामक एक वैश्य से हुई, जो अपनी स्त्री और पुत्रों के दुर्व्यवहार से अपमानित होकर वहाँ निवास कर रहा था। समाधि ने राजा को बताया कि वह अपने दुष्ट स्त्री-पुत्रादिकों से अपमानित होने के बाद भी उनका मोह नहीं छोड़ पा रहा है। उसके चित्त को शान्ति नहीं मिल पा रही है ।
इधर राजा का मन भी उसके अधीन नहीं था। राज्य, धनादिक की चिंता अभी भी उसे बनी हुई थी, जिससे वह बहुत दुखी थे । तदान्तर दोनों महर्षि मेधा के पास गए । महर्षि मेधा यथायोग्य सम्भाषण करके दोनों ने वार्ता आरम्भ की । उन्होने बताया - 'यद्यपि हम दोनों अपने स्वजनों से अत्यन्त अपमानित और तिरस्कृत होकर यहाँ आए हैं, फिर भी उनके प्रति हमारत मोह नहीं छुटता । इसका क्या कारण है ?'
महर्षि मेधा ने कहा - "मन शखित के अधीन होता है । आदिशक्ति भगवती के दो रूप है - विद्या और अविद्या । विद्या ज्ञान का स्वरूप है तथा अविद्या अज्ञान का स्वरूप है । अविद्या मोह की जननी है किंतु जो लोग मां भगवती को संसार का आदि कारण मानकर भक्ति करते है, मां भगवती उनहे जीवन मुक्त कर देती है ।"

कमशः

(१)

राजा सुरथ ने पूछा - "भगवन् ! वह देवी कौन सी है, जिसको आप महामाया कहते है ? हे ब्रह्मन्! वह कैसे उपन्न हुइ! और उसका क्या कार्य है? उसके चरित्र कौन-कौन से है? प्रभो! उसका प्रभाव, स्वरूप आदि सबके बारे में विस्तार में बताइये ।"

महर्षि मेधा बोले - राजन्! वह देवी तो नित्यास्वरूप है, उनके द्वारा यह संसार रचा गया हैं। तब भी उसकी उत्पति अनेक प्रकार से होती है, जिसे मैं बताता हूँ । संसार को जलमय करके जब भगवान् विष्णु योगनिद्रा का आश्रय लेकर, शेषशय्या पर सो रहे थे, तब मधु-कैटभ नाम के असुर उनके कानों के मैल से प्रकट हुए और वह श्री ब्रह्माजी को मारने के लिए तैयार हो गए। उनके इस भयानक रूप को देखकर ब्रह्माजी ने अनुमान लगा लिया कि भगवान विष्णु के सिवाय मेरा कोई रक्षक नहीं है । किंतु विडम्बना यह थी कि भगवान सो रहे थे ।

तब उन्होने श्री भगवान को जगाने के लिए उनके नेत्रों में निवास करने वाली योगनिद्रा की स्तुति की। परिणामत: तमोगुण अधिष्ठात्री देवी योगनिद्रा भगवान विष्णु के नेत्र, नासिका, मुख, बाहु और हृदय से निकलकर बह्माजी के सामने खड़ी हो गई। योगनिद्रा के निकलते ही श्रीहीर तुरन्त जाग उठे ।उन्हे देखकर राक्षस क्रोधित हो उठे और युद्ध के लिए उनकी तरफ दौड़े । भगवान विष्णु और उन राक्षसों में पाँच हजार वर्षों तक युद्ध हुआ। अंत में दोनों राक्षसो ने भगवान की वीरता से प्रसन्न होकर उन्हे वर माँगने को कहा ।

भगवान ने कहा - यदि तुम मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथों मर जाओ। बस, इतना ही वर मैं तुम से माँगता हूँ ।" महर्षि मेधा बोले - इस तरह से जब वह धोखे में आ गए और अपने चारों ओर जल ही जल देखा तो भगवान से कहने लगे - जहाँ पर जल न हो, उसी जगह हमारा वध कीजिए ।"तथास्तु" कहकर भगवान श्रीहरि ने उन दोनों को अपनी जांघ पर लिटा कर सिर काट डाले। महर्षि मेधा बोले - 'इस तरह से यह देवी श्री ब्रह्माजी के स्तुति करने पर प्रकट हुई थी, अब तुम से उनके प्रभाव का वर्णन करता हूँ, सो सुनो ।

(२)

क्रमश:

प्रचीन काल में देवताओं के स्वामी इंद्र और असुरों के स्वामी महिषासुर के बीच पूरे सौ वर्ष तक घोर युद्ध हुआ था। इस युद्ध में देवताओं की सेना परास्त हो गई और इस प्रकार देवताओं को जीत महिषासुर इन्द्र बन बैठा था । तब हारे हुए देवता श्री ब्रह्माजी को साथ लेकर भगवान शंकर व विष्णु जी के पास गए और अपनी हार का सारा वृत्तान्त उन्हे कह सुनाया। उन्होने महिषासुर के वध के उपाय की प्रार्थना की। साथ ही अपना राज्य वापस पाने के लिए उनकी कृपा की स्तुति की। देवताओं की बातें सुनकर भगवान विष्णु और शंकर जी को दैत्यों पर बड़ा गुस्सा आया। गुस्से मे भरे हुए भगवान विष्णु के मुख से बड़ा भारी तेज निकला और उसी प्रकार का तेज भगवान शंकर, ब्रह्माजी और इन्द्र आदि दूसरे देवताओं के मुख से प्रकट हुआ, जिससे दसों दिशाएं जलने लगी। अंत में यही तेज एक देवी के रूप में परिवर्तित हो गया।

देवी ने सभी देवताओं से आयुध, शक्ति तथा आभूषण प्राप्त कर उच्च-स्वर से गगनभेदी गर्जना की। जिससे समस्त विश्व में हलचल मच गई पृथ्वी, पर्वत आदि डोल गए। क्रोधित महिषासुर दैत्य सेना लेकर इस सिंहनाद की ओर दौड़ा। उसने देखा की देवी की प्रभा से तीनों लोक प्रकाशित हो रहे है। महिषासुर ने अपना समस्त बल और छल लगा दिया परन्तु देवी के सामने उसकी एक न चली। अंत में वह देवी के हाथों मारा गया। आगे चलकर यही देवी शुम्भ-निशुम्भ नामक असुरों का वध करने के लिए गौरी देवी के शरीर से उत्पन्न हुई।

उस समय देवी हिमालय पर विचर रही थी। जब शुम्भ-निशुम्भ के सेवकों ने उस परम मनोहर रूप वाली अम्बिका देवी को देखा और तुरन्त अपनें स्वामी के पास जाकर कहा - "महाराज! दुनिया के सारे रत्न आपके अधिकार में है। वे सब आपके यहाँ शोभा पाते है । ऐसे ही एक स्त्री रत्न को हमनें हिमालय की पहड़ियों में देखा है । आप हिमालय को प्रकाशित करने वाली दिव्य-कांति युक्त इस देवी का वरण कीजिए ।

(३)

क्रमश:

यह सुनकर दैत्यराज शुम्भ ने सुग्रीव को अपना दूत बनाकर देवी के पास अपना विवाह प्रस्ताव भेजा। देवी ने प्रस्ताव को ना मानकर कहा- "जो मुझसे युद्ध में जीतेगा । मैं उससे विवाह करूँगी ।"
यह सुनकर असुरेन्द्र के क्रोध का पारावार न रहा और उसने अपने सेनापति धूम्रलोचन को देवी को केशो से पकड़कर लाने का आदेश दिया । इस पर धूम्रलोचन साठ हजार राक्षसों की सेना साथ लेकर देवी से युद्ध के लिए वहाँ पहुंचा और देवी को ललकारनें लगा । देवी ने सिर्फ अपनी हुंकार से ही उसे भस्म कर दिया और देवी के वाहन सिंह ने बाकी असुर सेना का संहार कर डाला ।
इसके बाद चण्ड-मुण्ड नामक दैत्यों को एक बड़ी सेना के साथ युद्ध के लिए भेजा गया । जब असुर देवी को पकड़ने के लिए तलवारें लेकर उनकी ओर बढे तब देवी ने काली का विकराल रूप धारण करके उन पर टूट पड़ी । कुछ ही देर में सम्पूर्ण दैत्य सेना को नष्ट कर दिया। फिर देवी ने "हूँ" शब्द कहकर चण्ड का सिर काटकर अलग कर दिया और फिर मुण्ड को यमलोक पहुँचा दिया । तब से देवी काली की संसार में चामुण्डा के नाम से ख्याति होने लगी ।
महर्षि मेधा ने आगे बताया - चण्ड-मुण्ड और सारी सेना के मारे जाने की खबर सुनकर असरों के राजा शुम्भ ने अपनी सम्पूर्ण सेना को युद्ध के लिए तैयार होने की आज्ञा दी । शुम्भ की सेना को अपनी ओर आता देखकर देवी ने अपने धनुष की टंकोर से पृथ्वी और आकाश के बीच का भाग गुंजा दिया। ऐसे भयंकर शब्द को सुनकर राक्षसी सेना ने देवी और सिंह को चारों ओर से घेर लिया । उस समय दैत्यों के नाश के लिये और देवताओं के हित के लिए समस्त देवताओं की शक्तियाँ उनके शरीर से निकलकर उन्ही के रूप में आयुधों से सजकर दैत्यों से युद्ध करने के लिए प्रस्तुत हो गई । इन देव शक्तियों से घिरे हुए भगवान शंकर ने देवी से कहा - मेरी प्रसन्नता के लिए तुम शीघ्र ही इन असुरों को मारो । इसके पश्चात् देवी के शरीर से अत्यन्त उग्र रूप वाली और सैकड़ों गीदड़ियों के समान आवाज करने वाली चण्डिका- शक्ति प्रकट हुई । उस अपराजिता देवी ने भगवान शंकर को अपना दूत बनाकर शुम्भ-

क्रमशः

(४)

निशुम्भ के पास इस संदेश के साथ भेजा - जो तुम्हें अपने जीवित रहने की इच्छा हो तो त्रिलोकी का राज्य इन्द्र को दे दो, देवताओं को उनका यज्ञ भाग मिलना आरम्भ हो जाये और तुम पाताल को लौट जाओ, किन्तु यदि बल के गर्व से तुम्हारी लड़ने की इच्छा हो तो फिर आ जाओ, तुम्हारे माँस से मेरी योनियाँ तृप्त होंगी, चूकि उस देवी ने भगवान शंकर को दूत का कार्य में नियुक्त किया था, इसलिए वह संसार में शिवदूती के नाम से विख्यात हुई ।मगर दैत्य भला कहां मानने वाले थे । वे तो अपनी शक्ति के मद में चूर थे। उन्होने देवी की बात अनसुनी कर दी और युद्ध को तत्पर हो उठे । देखते ही देखते पुन: युद्ध छिड़ गया। किंतु देवी के समक्ष असुर कब तक ठहर सकते थे । कुछ ही वक्त में देवी ने उनके अस्त्र-शस्त्रों को काट डाला ।

जब बहुत से दैत्य काल के मुख में समा गए तो महादैत्य रक्तबीज युद्ध के लिये आगे बढ़ा । उसके शरीर से रक्त की बूंदें पृथ्वी पर जैसे ही गिरती थीं तुरन्त वैसे ही शरीर वाला तथा बलवान दैत्य पृथ्वी पर उत्पन्न हो जाता था। यह देखकर देवताओ को भय हुआ, देवताओं को भयभीत देखकर चंडिका ने काली से कहा - चामुण्डे ! तुम अपने मुख को फैलाओ और और मेरे शस्त्रघात से उत्पन्न हुए रक्त बिन्दुओं तथा रक्त बिन्दुओं से उत्पन्न हुए महा असुरों को तुम अपने इस मुख से भक्षण करती हुई तुम रणभूमि में विचरो । इस प्रकार उस दैत्य का रक्त क्षीण हो जाएगा और वह स्वयं नष्ट हो जाएगा । इस प्रकार अन्य दैत्य उत्पन्न नहीं होगें। काली से इस प्रकार कहकर चण्डिका देवी रक्तबीज पर अपने त्रिशुल से प्रहार किया और काली देवी ने अपने मुख में उसका रक्त ले लिया । काली के मुख में उस रक्त से जो असुर उत्पन्न हुए, उनको उसने भक्षण कर लिया । चण्डिका ने उस दैत्य को बज्र, बाण, खड्ग इत्यादि से मार डाला ।

महादैत्य रक्तबीज के मरते ही देवता अत्यन्त प्रसन्न हुए और माताएं उन असुरों का रक्त पीने के पश्चात् उद्धत होकर नृत्य करने लगीं ।

क्रमशः

(५)

रक्तबीज के मारे जाने पर शुम्भ व निशुम्भ को बड़ा क्रोध आया और अपनी बहुत बड़ी सेना लेकर महाशक्ति से युद्ध करने चल दिए । महापक्रामी शुम्भ भी अपनी सेना सहित मातृगणों से युद्ध करने के लिए आ पहुँचा। किंतु शीर्घ ही सभी दैत्य मारे गए और देवी ने शुम्भ-निशुम्भ का संहार कर दिया। सारे संसार में शांति हो गई और देवतागण हर्षित होकर देवी की वंदना करने लगे ।

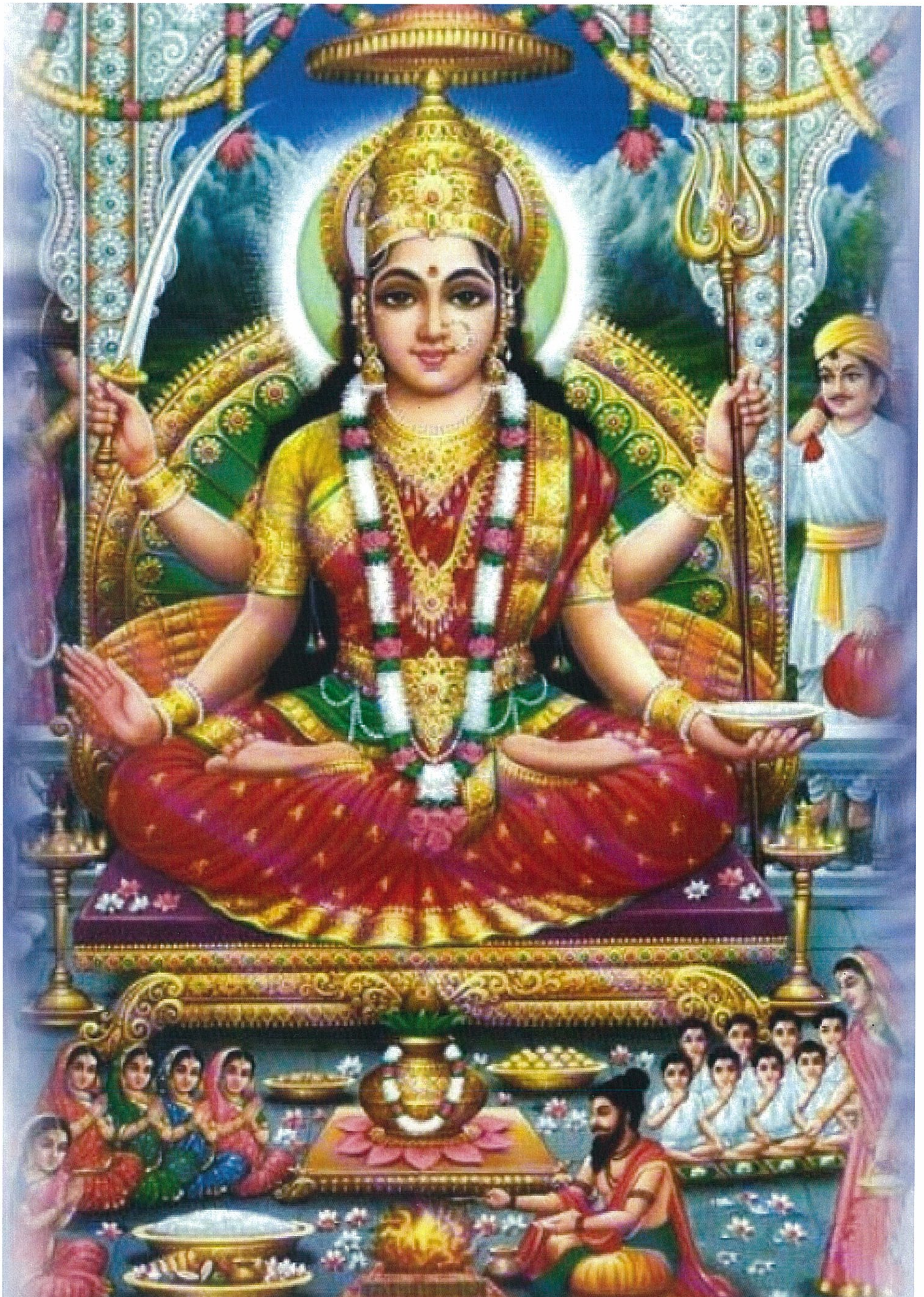
इन सब उपाख्यानों को सुनकर मेधा ऋर्षि ने राजा सुरथ तथा वणिक समाधि से देवी स्तवन की विधिवत व्याख्या की, जिसके प्रभाव से दोनों नदी तट पर जाकर तपस्या में लीन हो गए । तीन वर्ष बाद दुर्गा माता ने प्रकट होकर दोनों को आशीर्वाद दिया । इस प्रकार वणिक तो संसारिक मोह से मुक्त होकर आत्मचिंतन में लग गया तथा राजा ने शत्रुओं को पराजित कर अपना खोया हुआ राज वैभव पुन: प्राप्त कर लिया ।

समाप्त

(६)

श्री अम्बे जी की आरती

ॐ जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी । तुमको निसदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिवरी ।। जय·
मांग सिन्दूर विराजत टीको मृदमद की । उज्जवल से दोउ नैना चन्द्रवदन नीको ।। जय·
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे । रक्तपुष्प गलमाला कण्ठन पर साजे ।। जय·
केहरि वाहन राजत खड्ग खप्पर धारी । सुर-नर-मुनि-जन सेवत तिनके दु:खहारी ।। जय·
कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती । कोटिक चन्द्र दिवाकर राजत सम ज्योति ।। जय·
शुम्भ निशुम्भ विदारे मषिासुर-धाती । धूम्र विलोचन नैना निशदिन मदमाती ।। जय·
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे । मधु कैटभ दोउ मारे सुर भयहीन करे ।। जय·
ब्रह्माणी रूद्राणी, तुम कमलारानी । आगम-निगम-बखानी, तुम शिव पटरानी ।। जय·
चौसठ योगिनी गावत, नृत्य करत भैरूँ । बाजत ताल मृदगां और बाजत डमरू ।। जय·
भुजा चार अति शोभित वर मुद्रा धारी । मनवांछित फल पावत, सेवत नरनारी ।। जय·
कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती । (श्री)मालकेतु मे राजत कोटि रतन ज्योती ।। जय·
(श्री)अम्बेजी की आरती जो कोई नित गावे । कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावे ।। जय·



संतोषी माता का व्रत और पूजन विधि

हम सातो वारों की व्रत कथा के इस अंक में आपको शुक्रवार को किए जाने वाले संतोषी माता के व्रत के बारे में जानकारी दे रहे हैं. संतोषी माता को हिंदू धर्म में संतोष, सुख, शांति और वैभव की माता के रुप में पूजा जाता है. धार्मिक मान्यताओं के अनुसार माता संतोषी भगवान श्रीगणेश की पुत्री हैं. संतोष हमारे जीवन में बहुत जरूरी है. संतोष ना हो तो इंसान मानसिक और शारीरिक तौर पर बेहद कमजोर हो जाता है. संतोषी मां हमें संतोष दिला हमारे जीवन में खुशियों का प्रवाह करती हैं.

माता संतोषी का व्रत पूजन करने से धन, विवाह संतानादि भौतिक सुखों में वृद्धि होती है. यह व्रत शुक्ल पक्ष के प्रथम शुक्रवार से शुरू किया जाता है .

संतोषी माता के व्रत की पूजन विधि

सुख-सौभाग्य की कामना से माता संतोषी के 16 शुक्रवार तक व्रत किए जाने का विधान है.

* सूर्योदय से पहले उठकर घर की सफ़ाई इत्यादि पूर्ण कर लें.
स्नानादि के पश्चात घर में किसी सुन्दर व पवित्र जगह पर माता संतोषी की प्रतिमा या चित्र स्थापित करें.
* माता संतोषी के संमुख एक कलश जल भर कर रखें. कलश के ऊपर एक कटोरा भर कर गुड़ व चना रखें.
* माता के समक्ष एक घी का दीपक जलाएं.
* माता को अक्षत, फ़ूल, सुगन्धित गंध, नारियल, लाल वस्त्र या चुनरी अर्पित करें.
* माता संतोषी को गुड़ व चने का भोग लगाएँ.
* संतोषी माता की जय बोलकर माता की कथा आरम्भ करें.

इस व्रत को करने वाला कथा कहते व सुनते समय हाथ में गुड़ और भुने हुए चने रखे. सुनने वाला प्रगट 'संतोषी माता की जय' इस प्रकार जय जयकार मुख से बोलता जावे. कथा समाप्त होने पर हाथ का गुड और चना गाय को खिला देवें. कलश के ऊपर रखा गुड और चना सभी को प्रसाद के रूप में बांट देवें. कथा से पहले कलश को जल से भरे और उसके ऊपर गुड व चने से भरा कटोरा रखे. कथा समाप्त होने और आरती होने के बाद कलश के जल को घर में सब जगहों पर छिड़कें और बचा हुवा जल तुलसी की क्यारी में सींच देवें. बाज़ार से गुड मोल लेकर और यदि गुड घर में हो तो वही काम में लेकर व्रत करे. व्रत करने वाले को श्रद्धा और प्रेम से प्रसन्न मन से व्रत करना चाहिए.

विशेष: इस दिन व्रत करने वाले स्त्री-पुरुष को ना ही खट्टी चीजें हाथ लगानी चाहिए और ना ही खानी चाहिए.

संतोषी माता की व्रत कथा

एक बुढिया थी जिसके सात बेटे थे. उनमे से छः कमाते थे और एक न कमाने वाला था. वह बुढिया उन छयों को अच्छी रसोई बनाकर बड़े प्रेम से खिलाती पर सातवें को बचा-खुचा झूठन खिलाती थी. परन्तु वह भोला था अतः मन में कुछ भी विचार नहीं करता था. एक दिन वह अपनी पत्नी से बोला - देखो मेरी माता को मुझसे कितना प्रेम है? उसने कहा वह तुम्हें सभी की झूठन खिलाती है, फिर भी तुम ऐसा कहते हो चाहे तो तुम समय आने पर देख सकते हो.

एक दिन बहुत बड़ा त्यौहार आया. बुढिया ने सात प्रकार के भोजन और चूरमे के लड्डू बनाए. सातवाँ लड़का यह बात जांचने के लिए सिर दुखने का बहाना करके पतला कपडा ओढ़कर सो गया और देखने लगा माँ ने उनको बहुत अच्छे आसनों पर बिठाया और सात प्रकार के भोजन और लड्डू परोसे. वह उन्हें बड़े प्रेम से खिला रही है. जब वे छयो उठ गए तो माँ ने उनकी थालियों से झूठन इकट्ठी की और उनसे एक लड्डू बनाया. फिर वह सातवें लड़के से बोली “अरे रोटी खाले.” वह बोला ‘ माँ मैं भोजन नहीं करूँगा मैं तो परदेश जा रहा हूँ.’ माँ ने कहा - ‘कल जाता है तो आज ही

चला जा.' वह घर से निकल गया. चलते समय उसे अपनी पत्नी की याद आयी जो गोशाला में कंडे थाप रही थी. वह बोला - "हम विदेश को जा रहे है, आएंगे कछु काल. तुम रहियो संतोष से, धरम अपनों पाल."

इस पर उसकी पत्नी बोली

जाओ पिया आनन्द से, हमारी सोच हटाए.
राम भरोसे हम रहे, ईश्वर तुम्हें सहाय.
देहु निशानी आपणी, देख धरूँ मैं धीर.
सुधि हमारी ना बिसारियो, रखियो मन गंभीर.

इस पर वह लड़का बोला - 'मेरे पास कुछ नहीं है. यह अंगूठी है सो ले और मुझे भी अपनी कोई निशानी दे दे. वह बोली मेरे पास क्या है? यह गोबर भरे हाथ है. यह कहकर उसने उसकी पीठ पर गोबर भरे हाथ की थाप मार दी. वह लड़का चल दिया. ऐसा कहते है, इसी कारण से विवाह में पत्नी पति की पीठ पर हाथ का छापा मारती है.

चलते समय वह दूर देश में पहुँचा. वह एक व्यापारी की दुकान पर जाकर बोला ' भाई मुझे नौकरी पर रख लो.' व्यापारी को नौकर की जरुरत थी. अतः बोला तन्ख्वाह काम देखकर देंगे. तुम रह जाओ. वह सवेरे ७ बजे से रात की १२ बजे तक नौकरी करने लगा. थोड़े ही दिनों में सारा लेन देन और हिसाब - किताब करने लगा. सेठ के ७ - ८ नौकर चककर खाने लगे. सेठ से उसे दो तीन महीने ने आधे मुनाफे का हिस्सेदार बना दिया. बारह वर्ष में वह नामी सेठ बन गया और उसका मालिक उसके भरोसे काम छोड़कर कहीं बाहर चला गया.

उधर उसकी औरत को सास और जिठानियाँ बड़ा कष्ट देने लगी. वे उसे लकडी लेने जंगल में भेजती. भूसे की रोटी देती, फूटे नारियल में पानी देती. वह बड़े कष्ट से जीवन बिताती थी. एक दिन जब वह लकडी लेने जा रही थी तो रास्ते में उसने कई औरतों को व्रत करते देखा. वह पूछने लगी - 'बहनों यह किसका व्रत है, कैसे करते है

और इससे क्या फल मिलता है ? तो एक स्त्री बोली ‘ यह संतोषी माता का व्रत है इसके करने से मनोवांछित फल मिलता है, इससे गरीबी, मन की चिंताएँ, राज के मुकद्दमे. कलह, रोग नष्ट होते है और संतान, सुख, धन, प्रसन्नता, शांति, मन पसंद वर मिले व बाहर गये हुए पति के दर्शन होते है.’ उसने उसे व्रत करने की विधि बता दी.

उसने रास्ते में सारी लकडियाँ बेच दी व गुड और चना ले लिया. उसने व्रत करने की तैयारी की. उसने सामने एक मंदिर देखा तो पूछने लगी ‘ यह मंदिर किसका है ?’ वह कहने लगे ‘ यह संतोषी माता का मंदिर है.’ वह मंदिर में गई और माता के चरणों में लोटने लगी. वह दुखी होकर विनती करने लगी ‘माँ ! मैं अज्ञानी हूँ. मैं बहुत दुखी हूँ. मैं तुम्हारी शरण में हूँ. मेरा दुःख दूर करो.’ माता को दया आ गयी. एक शुक्रवार को उसके पति का पत्र आया और अगले शुक्रवार को पति का भेजा हुआ धन मिला. अब तो जेठ जेठानी और सास नाक सिकोड़ के कहने लगे ‘ अब तो इसकी खातिर बढेगी, यह बुलाने पर भी नहीं बोलेगी.’

वह बोली ‘ पत्र और धन आवे तो सभी को अच्छा हैं.’ उसकी आँखों में आंसू आ गये. वह मंदिर में गई और माता के चरणों में गिरकर बोली हे माँ ! मैंने तुमसे पैसा कब माँगा था ? मुझे तो अपना सुहाग चाहिये. मैं तो अपने स्वामी के दर्शन और सेवा करना मांगती हूँ. तब माता ने प्रसन्न होकर कहा - ‘जा बेटी तेरा पति आवेगा.’ वह बड़ी प्रसन्नता से घर गई और घर का काम काज करने लगी. उधर संतोषी माता ने उसके पति को स्वप्न में घर जाने और पत्नी की याद दिलाई. उसने कहा माँ मैं कैसे जाऊँ, परदेश की बात है, लेन - देन का कोई हिसाब नहीं है.’ माँ ने कहा मेरी बात मान सवेरे नहा - धोकर मेरा नाम लेकर घी का दीपक जलाकर दंडवत करके दुकान पर बैठना. देखते देखते सारा लेन - देन साफ़ हो जायेगा. धन का ढेर लग जायेगा.

सवेरे उसने अपने स्वप्न की बात सभी से कही तो सब दिल्लगी उडाने लगे. वे कहने लगे कि कही सपने भी सत्य होते है. पर एक बूढे ने कहा ‘ भाई ! जैसे माता ने कहा है वैसे करने में का डर है ?’ उसने नहा धोकर, माता को दंडवत करने घी का दीपक जलाया और दुकान पर जाकर बैठ जाया. थोडी ही देर में सारा लेन देन साफ़ हो गया,

सारा माल बिक गया और धन का ढेर लग गया. वह प्रसन्न हुआ और घर के लिए गहने और सामान वगेरह खरीदने लगा| वह जल्दी ही घर को रवाना हो गया.

उधर बेचारी उसकी पत्नी रोज़ लकडियाँ लेने जाती और रोज़ संतोषी माता की सेवा करती. उसने माता से पूछा - हे माँ ! यह धूल कैसी उड़ रही है ? माता ने कहा तेरा पति आ रहा है. तूं लकडियों के तीन बोझ बना लें. एक नदी के किनारे रख, एक यहाँ रख और तीसरा अपने सिर पर रख ले. तेरे पति के दिल में उस लकडी के गट्ठे को देखकर मोह पैदा होगा. जब वह यहाँ रुक कर नाश्ता पानी करके घर जायेगा, तब तूँ लकडियाँ उठाकर घर जाना और चोक के बीच में गट्ठर डालकर जोर जोर से तीन आवाजें लगाना, " सासूजी ! लकडियों का गट्ठा लो, भूसे की रोटी दो और नारियल के खोपडे में पानी दो. आज मेहमान कौन आया है ?" इसने माँ के चरण छूए और उसके कहे अनुसार सारा कार्य किया.

वह तीसरा गट्ठर लेकर घर गई और चोक में डालकर कहने लगी "सासूजी ! लकडियों का गट्ठर लो, भूसे की रोटी दो, नारियल के खोपडे में पानी दो, आज मेहमान कौन आया है ?" यह सुनकर सास बाहर आकर कपट भरे वचनों से उसके दिए हुए कष्टों को भुलाने ले लिए कहने लगी ' बेटी ! तेरा पति आया है. आ, मीठा भात और भोजन कर और गहने कपडे पहन.' अपनी माँ के ऐसे वचन सुनकर उसका पति बाहर आया और अपनी पत्नी के हाथ में अंगूठी देख कर व्याकुल हो उठा. उसने पूछा ' यह कौन है ?' माँ ने कहा ' यह तेरी बहू है आज बारह बरस हो गए, यह दिन भर घूमती फिरती है, काम - काज करती नहीं है, तुझे देखकर नखरे करती है. वह बोला ठीक है. मैंने तुझे और इसे देख लिया है, अब मुझे दुसरे घर की चाबी दे दो, मैं उसमे रहूँगा.

माँ ने कहा ' ठीक है, जैसी तेरी मरजी.' और उसने चाबियों का गुच्छा पटक दिया. उसने अपना सामान तीसरी मंजिल के ऊपर के कमरे में रख दिया. एक ही दिन में वे राजा के समान ठाठ - बाठ वाले बन गये. इतने में अगला शुक्रवार आया. बहू ने अपनी पति से कहा - मुझे संतोषी माता के व्रत का उद्यापन करना है. वह बोला बहुत अच्छा ख़ुशी से कर ले. जल्दी ही उद्यापन की तैयारी करने लगी. उसने जेठ के लड़कों को जीमने के लिए कहा. उन्होंने मान लिया. पीछे से जिठानियों ने अपने

बच्चों को सिखादिया ' तुम खटाई मांगना जिससे उसका उद्यापन पूरा न हो.' लड़कों ने जीम कर खटाई मांगी. बहू कहने लगी ' भाई खटाई किसी को नहीं दी जायेगी. यह तो संतोषी माता का प्रसाद है.' लडके खड़े हो गये और बोले पैसा लाओ| वह भोली कुछ न समझ सकी उनका क्या भेद है| उसने पैसे दे दिये और वे इमली की खटाई मंगाकर खाने लगे. इस पर संतोषी माता ने उस पर रोष किया. राजा के दूत उसके पति को पकड़ कर ले गये. वह बेचारी बड़ी दुखी हुई और रोती हुई माताजी के मंदिर में गई और उनके चरणों में गिरकर कहने लगी ' हे ! माता यह क्या किया ? हँसाकर अब तूँ मुझे क्यों रुलाने लगी ?' माता बोली पुत्री मुझे दुःख है कि तुमने अभिमान करके मेरा व्रत तोडा है और इतनी जल्दी सब बातें भुला दी. वह कहने लगी - ' माता ! मेरा कोई अपराध नहीं है. मुझे तो लड़को ने भूल में दल दिया. मैंने भूल से ही उन्हें पैसे दे दिये. माँ मुझे क्षमा करो मैं दुबारा तुम्हारा उद्यापन करुँगी.' माता बोली ' जा तेरा पति रास्ते में आता हुआ ही मिलेगा.' उसे रास्ते में उसका पति मिला. उसके पूछने पर वह बोला ' राजा ने मुझे बुलाया था ' मैं उससे मिलने गया था. वे फिर घर चले गये.

कुछ ही दिन बाद फिर शुक्रवार आया. वह दुबारा पति की आज्ञा से उद्यापन करने लगी. उसने फिर जेठ के लड़को को बुलावा दिया. जेठानियों ने फिर वहीं बात सिखा दी. लड़के भोजन की बात पर फिर खटाई माँगने लगे. उसने कहा ' खटाई कुछ भी नहीं मिलेगी आना हो तो आओ.' यह कहकर वह ब्राहमणों के लड़को को लाकर भोजन कराने लगी. यथाशक्ति उसने उन्हें दक्षिणा दी. संतोषी माता उस पर बड़ी प्रसन्न हुई, माता की कृपा से नवमे मास में उसके एक चंद्रमा के समान सुन्दर पुत्र हुआ. अपने पुत्र को लेकर वह रोजाना मंदिर जाने लगी.
एक दिन संतोषी माता ने सोचा कि यह रोज़ यहाँ आती है. आजमैं इसके घर चलूँ. इसका सासरा देखूं. यह सोचकर उसने एक भयानक रूप बनाया. गुड व् चने से सना मुख, ऊपर को सूँड के समान होठ जिन पर मक्खियां भिनभिना रही थी. इसी सूरत में वह उसके घर गई. देहली में पाँव रखते ही उसकी सास बोली ' देखो कोई डाकिन आ रही है, इसे भगाओ नहीं तो किसी को खा जायेगी.' लड़के भागकर खिड़की बन्द करने लगे. सातवे लड़के की बहु खिड़की से देख रही थी. वह वही से चिल्लाने लगी "

आज मेरी माता मेरे ही घर आई है.' यह कहकर उसने बच्चे को दूध पीने से हटाया. इतने में सास बोली ' पगली किसे देख कर उतावली हुई है, बच्चे को पटक दिया है.'

इतने में संतोषी माता के प्रताप से वहाँ लड़के ही लड़के नज़र आने लगे. बहू बोली " सासूजी मैं जिसका व्रत करती हूँ, यह वो ही संतोषी माता हैं. यह कह कर उसने सारी खिड़कियां खोल दी. सबने संतोषी माता के चरण पकड़ लिए और विनती कर कहने लगे - "हे माता ! हम मूर्ख हैं, अज्ञानी है, पापिनी है, तुम्हारे व्रत की विधि हम नहीं जानती, तुम्हारा व्रत भंग कर हमने बहुत बड़ा अपराध किया है. हे जगत माता ! आप हमारा अपराध क्षमा करो." इस पर माता उन पर प्रसन्न हुई. बहू को जैसा फल दिया वैसा माता सबको दें.

।। भोग लगाने के समयकी आरती ।।

भोग लगाओ मैया संतोषी ।

भोग लगाओ मैया भुवनेश्वरी ॥

भोजन को जलदी आना, संतोषी मैया ।

मैं तो देख रही तुम्हारी राह.... !

मैया जलदी से आना !

खाजा-खीर प्रेमसे बनाया,

चने का शोक अनोखा बनाया,

मैया उमंगसे आना !

भक्त जनों को शुक्रवार प्यारा ।

कथा श्रवण नामस्मरण है प्यारा !

मैया दर्शन देना रे !

संतोषी मैया, जलदी से आना ।

संतोषी माता जी की आरती

जय संतोषी माता जय संतोषी माता। अपने सेवक जन की सुख सम्पति दाता ।। जय॰

सुन्दर चीर सुनहरी मां धारण कीन्हों । हीरा पन्ना दमके तन सिंगार लीन्हों ।। जय॰

गेरू लाल छटा छवि बदन कमल सोहे । मन्द हंसत करूणामयी त्रिभुवनजन मोहे ।। जय॰

स्वर्ण सिंहासन बैठी चंवर दुरे प्यारे । धूप, दीप, नैवेध, मधुमेवा भोग धरे न्यारे ।। जय॰

गुड़ अरू चना परमप्रिय तामें संतोष कियो । संतोषी कहलाई भक्तन वैभव दियो ।। जय॰

शुक्रवार प्रिय मानत आज दिवस सोही । भक्त मण्डली आई कथा कथा सुनत मोसी ।। जय॰

मंदिर जगमग ज्योति मंगल ध्वनि छाई । विनय करे हम बालक चरनन सिर नाई ।। जय॰

भक्ति भावमय पूजा अंगीकृत कीजे । बहु धन धान्य भरे घर सुख सौभाग्य दिये ।। जय॰

ध्यान धरो जाने तेरो मनवांछित फल पायो । पूजा कथा श्रवण कर घर आन्नद आयो ।। जय॰

शरण गहे की लज्जा रखियो जगदम्बे । संकट तू ही निवारे दयामयी माँ अम्बे ।। जय॰

संतोषी माँ की आरती जो कोई नर गावे । दि सिद्धि सुख सम्पति जी भरके पावे ।। जय॰



पूजन सामाग्री :

केले के खंम्बे (कदलीस्तम्भ), कलश, चावल, धूप, पुष्पो की माला, पान के पत्ते, तुलसी, दीप, नैवेद्य, गुलाब के फूल, वस्त्र, आम के पत्तो का बन्धनवार, पाँच रत्न, कपूर, रोली, फल, स्वर्ण प्रतिमा, जल, पंचअमृत – शकर, दही, घी, शहद और तुलसी ।

प्रसाद :

आटा, शुद्ध घी और शकर से बना ।

विधि :

व्रत करने वाले पूर्णिमा, संक्रान्ति या एकादशी के दिन सांयकाल स्नान आदि से निवृत होकर, पूजा स्थान में आसन पर बैठकर श्री गणेश, गौरी, वरुण, विष्णु आदि सब देवताओ का ध्यान करके पूजन करे और संकल्प करे कि मै श्री सत्यनारायण स्वामी का पूजन व कथा श्रवण सदैव करूंगा । पुष्प हाथ मे लेकर श्री सत्यनारायण का ध्यान करे । यज्ञोपवीत पुष्प, नैवेद्य आदि से युक्त होकर स्तुति करे । हे भगवान् , मैने श्रद्धा पूर्वक फल, जल आदि सब सामाग्री आपके अर्पण की है, इसे स्वीकार कीजिए। मेरा उपको बारम्बार नमस्कार है इसके बाद श्री सत्यनारायण की कथा पढ़े अथवा श्रवण करें ।

श्री सत्यनारायण भगवान् की कथा

।। पहला आध्याय ।।

एक समय नैमिषारण्य तीर्थ मे शोनकादि अट्ठासी हजार ऋषियों ने श्रीसूत जी से पूछा- "हे प्रभु ! इस कलियुग मे वेद-विद्या रहित मनुष्यो को प्रभु भक्ति किस प्रकार मिलेगी तथा उनका उद्धार कैसे होगा ? हे मुनि श्रेष्ठ ! कोई ऐसा तप कहिए जिस मे थोड़े समय मे पुण्य प्राप्त हो तथा मनवांछित फल भी मिले, वह कथा सुनने की हमारी प्रबल इच्छा है ।"

सर्वशास्त्र ज्ञाता श्रीसूत जी बोले- "हे वैष्णवों में पूज्य ! आप सब ने प्राणियो के हित की बात पूछी है । अब मै उस श्रेष्ठ व्रत को आप लोगो से कहूंगा जिस व्रत को नारद जी ने श्री लक्ष्मीनारायण भगवान् से पूछा था और श्री लक्ष्मीपति ने मुनि श्रेष्ठ नारद जी से कहा था। यह कथा ध्यान से सुनो -

क्रमशः

(१)

एक समय, योगीराज नारद जी दूसरो के हित की इच्छा से, अनेक लोकों मे घूमते हुए मृत्युलोक मे आ पहुँचे। वहाँ बहुत योनियो मे जनमे हुए मनुष्यो को अपने कर्मो के द्वारा अनेक दु:खो से पीड़ित देखकर, किस यत्न को करने से निश्चय ही इनके दु:खो का अन्त हो सकेगा, ऐसा मन मे सोच कर इन्द्र लोक को गए । वहाँ श्वेत वर्ण : और चार भुजाओ वाले देवो के ईश: नारायण को (जिनके हाथो में शंख, चक्र, गदा और पदम् थे तथा वरमाला पहने हुए थे) देखकर स्तुति करने लगे। "हे भगवान् ! आप अत्यन्त शक्ति से सम्पन्न है। मन तथा वाणी भी आपको नही पा सकती । आपका आदि मध्य अन्त नही है । निर्गुण स्वरूप सृष्टि के कारण भक्तो के दु:खो को नष्ट करने वाले हो । आपको मेरा नमस्कार है ।"

" हे मुनि ! श्रेष्ठ आपके मन मे क्या है ? आपका किस काम के लिए आगमन हुआ है ? नि:संकोच कहो ।" तब नारद मुनि बोले- "मृत्युलोक मे सब मनुष्य जो अनेक योनियो मे पैदा हुए है, अपने-अपने कर्मो के द्वारा अनेक दु:खो से दुखी हो रहे है । हे नाथ मुझ पर दया रखते हो तो बताइये कि उन मनुष्यो के सब दु:ख थोड़े से ही प्रयत्न से कैसे दूर हो सकते है ।" श्री भगवान् जी बोले- हे नारद ! मनुष्यों की भलाई के लिए तुमने बहुत अच्छी बात पूछी है। जिस काम के करने से मनुष्य मोह से छुट जाता है वह मै कहता हूं । सुनो- बहुत पुण्य देने वाला स्वर्ग तथा मृत्युलोक दोनो मे दुर्लभ यह उत्तम व्रत अच्छी तरह विधानपूर्वक सम्पन्न करके मनुष्य मोह से छूट जाता है वह मै कहता हूं । सुनो- बहुत पुण्य देने वाला स्वंग तथा मृत्युलोक दोनो में दुर्लभ यह उत्तम व्रत है । आज मै प्रेमवश होकर तुमसे कहता हूं । श्री सत्यनारायण भगवान् का यह व्रत अच्छी तरह विधानपूर्वक सम्पन्न करके मनुष्य तुरन्त ही यहाँ सुख भोगकर मरने पर मोक्ष को प्राप्त होता है ।" श्री भगवान् के वचन सुनकर

(२) क्रमश:

नारद मुनि बोले कि उस व्रत का फल क्या है ? क्या विधान है ? किसने यह व्रत किया है और किस दिन यह व्रत करना चाहिए ? हे भगवान् मुझसे विस्तार से कहो । भगवान् बोले- दु:ख शोक आदि को दूर करने वाला, यह व्रत सब स्थानो पर विजयी करने वाला है। भक्ति और श्रद्धा के साथ किसी भी दिन मनुष्य श्री सत्यनारायण की शाम के समय ब्राह्मणो और बन्धुओ के साथ धर्म परायण होकर पूजा करें । भक्तिभाव ससे नैवेद्य, केले का फल, घी, दूध और गेंहू का चूर्ण सवाया लेवे । गेहूं के अभाव में साठी का चूर्ण, शक्कर अथवा गुड़ लें तथा भक्ति-भाव से भगवान् का स्मरण करता हुआ समय व्यतीत करे । इस तरह इत करने पर मनुष्यो की इच्छा निश्चय पूरी होती है । विशेष खर कलि-काल में मृत्युलोक पर यही मोक्ष का सरल उपाय है।

।। इति श्री सत्यनारायण व्रतकथा का प्रथम अध्याय सम्पूर्ण ।।

(३)

।। दूसरा आध्याय ।।

सूतजी बोले- हे ऋषियो ! जिसने पहले समय मे इस व्रत को किया है उसका इतिहास कहता हूं ध्यान से सुनो । सुन्दर काशी पुरी नगरी मे एक अत्यन्त निर्धन ब्राह्मण रहता था । वह भूख और प्यास से बेचैन हुआ पृथ्वी पर घुमता था । ब्राह्मणों से प्रेम करने वाले श्री भगवान् ने ब्राह्मण को दु:खी देखकर बूढ़े ब्राह्मण का रूप धारण कर उसके पास जा आदर के साथ पूछा- हे विप्र ! तुम नित्य ही दु:खी होकर पृथ्वी पर क्यो घुमते हो ? हे श्रेष्ठ ब्राह्मण यह सब मुझसे कहो, मै सुनना चाहता हूं । ब्राह्मण बोला- मै निर्धन ब्राह्मण हूं, भिक्षा के लिये पृथ्वी पर फिरता हूं । हे भगवान ! यदि आप इससे छुटकारे का उपाय जानते हो तो कृपा कर कहो वृद्ध ब्राह्मण बोला कि श्री सत्यनारायण भगवान् मनवांछित फल देने वाले है । इसलिए हे ब्राह्मण तू उनका पूजन कर जिसके करने से मनुष्य सब दु:खो से मुक्त होता है । ब्राह्मण को व्रत का सारा विधान बतला कर बूढ़े ब्राह्मण का रूप धारण करने वाले श्री सत्यनारायण भगवान अन्तर्धान हो गए। जिस व्रत को वृद्ध ब्राह्मण ने बतलाया है, मै उसको करूंगा, यह निश्चय करने पर उस वृद्ध ब्राह्मण को रात मे नींद नही आई। वह सवेरे उठ कर श्री सत्यनारायण भगवान के व्रत का निश्चय कर भिक्षा के लिये चल दिया। उस दिन उसको भिक्षा मे बहुत धन मिला जिससे बन्धु-बांधवों के साथ उसने श्री सत्यनारायण का व्रत किया। इसके करने से विप्र सब दुखो से छुटकर अनेक प्रकार की सम्पत्तियो से युक्त हुआ। उस समय से वह विप्र हर मास व्रत करने लगा। इस तरह सत्यनारायण भगवान् के व्रत को जो करेगा। वह सब पापों से छुटकर

क्रमश:

(४)

क्या कहूँ ? ऋषि बोले- हे मुनीश्वर ! संसार मे इस विप्र से सुनकर किस-किस ने इस व्रत को किया हम सब सुनना चाहते है। इसके लिए हमारे मन मे श्रद्धा है । सूतजी बोले- हे मुनियों ! जिस-जिस ने इस व्रत को किया वो सब सुनो। एक समय यह वृद्ध ब्राह्मण धन और एश्वर्य के अनुसार बन्धु-बान्धवो के साथ व्रत करने को तैयार हुआ। उसी समय एक लकड़ी बेचने वाला बूढ़ा आदमी आया और बाहर लकड़ियो को रखकर विप्र के मकान मे गया। प्यास से दु:खी होकर लकड़हारा उनको व्रत करते देखकर विप्र को नमस्कार कर कहने लगा कि आप यह किसका पूजन कर रहे है और इस व्रत को करने से क्या फल मिलता है ? कृपा करके मुझसे कहो ।

ब्राह्मण ने कहा- सब मनोकामनाओं को पूरा करने वाला यह श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत है, इनकी ही कृपा से मेरे यहां धन-धान्य आदि की वृद्धि हुई है, विप्र से इस बारे मे जानकर लकड़हारा बहुत प्रसन्न हुआ। भगवान् का चरणामृत ले और भोजन करने के बाद अपने घर को गया।

क्रमश:

(५)

लकड़हारे ने अपने मन मे इस प्रकार का संकल्प किया कि आज ग्राम मे लकड़ी बेचने से जो धन मिलेगा उसी से सत्यनारायण देव का उत्तम व्रत करूँगा। यह मन मे विचार कर वह बूढ़ा आदमी लकड़ियां अपने सिर पर रखकर जिस नगर में धनवान लोग रहते थे, वह ऐसे सुन्दर नगर में गया। उस रोज वहां पर उसे उन लकड़ियों का दाम पहले दिनों से चौगना मिला। तब वह बूढ़ा आदमी लकड़ियां अपने सिर पर रखकर जिस नगर में धनवान लोग रहते थे, वह ऐसे सुन्दर नगर मे गया । उस रोज वहां पर उसे उन लकड़ियो का दाम ले और प्रसन्न होकर पके केले की फली, शक्कर, घी, दुग्ध, दही और गेंहू का चूरन इत्यादि श्री सत्यनारायण भगवान् के व्रत की कुल सामग्रियों को लेकर अपने घर गया। फिर उसने अपने भाइयों को बुलाकर विधि के साथ भगवान् जी का पूजन और व्रत किया। उस व्रत के प्रभाव से वह बूढ़ा लकड़हारा धन, पुत्र आदि से युक्त हुआ और संसार के समस्त सुख भोग कर बैकुण्ठ को चला गया।

।। इति श्री सत्यनारायण व्रतकथा का दूसरा अध्याय सम्पूर्ण ।।

(६)

तृतीय अध्याय

श्री सूतजी बोले, 'हे ऋषि-मुनियो! अब मैं आपको आगे की कथा सुनाता हूं। प्राचीन समय में कनकपुर में उल्कामुख नामक एक बुद्धिमान् तथा सत्यवादी राजा राज करता था। वह प्रतिदिन मंदिर में जाकर श्री सत्यनारायण भगवान् की पूजा करता था और निर्धनों को खूब अन्न, वस्त्र और धन दान करता था। उसकी पत्नी सुभद्रा बहुत सुशील थी। वे दोनों हर महीने श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत करते थे। श्री सत्यनारायण की अनुकम्पा से उनके महल में धन-सम्पत्ति के भण्डार भरे थे। उनकी सारी प्रजा बहुत आनंद से जीवन-यापन कर रही थी। एक बार राजा और रानी बहुत-से लोगों के साथ जब भद्रशीला नदी के किनारे श्री सत्यनारायण भगवान् की पूजा कर रहे थे, तो नदी के किनारे एक बड़ी नौका आकर ठहरी। उस नाव में एक धनी व्यापारी यात्रा कर रहा था। वह बहुत-सा धन कमाकर अपने नगर को लौट रहा था। उसका सारा धन उस नाव में रखा हुआ था।

नाव से उतरकर व्यापारी राजा के समीप पहुंचा। राजा को पूजा करते देख उसने कहा, 'हे राजन्! आप इन सब लोगों के साथ मिलकर किसकी पूजा कर रहे हैं? इस पूजा के करने से मनुष्य को क्या लाभ होता है?' राजा ने व्यापारी से कहा, 'हम हर

पूर्णिमा को सत्यनारायण भगवान् का व्रत करते हैं और फिर पूजा-अर्चना के बाद भगवान् का प्रसाद लोगों को बांटकर स्वयं भी प्रसाद ग्रहण करते हैं। सत्यनारायण भगवान् की पूजा से निस्सन्तान को सन्तान प्राप्त होती है। दुखियों के दुःख दूर होते हैं। राजा की बात सुनकर व्यापारी ने कहा, 'हे राजन्! मैं भी सत्यनारायण भगवान् का व्रत करना चाहता हूं। कृपया मुझे इस व्रत को करने की विधि बतलाएं।' राजा ने व्यापारी को सत्यनारायण व्रत की पूरी विधि बताई। राजा ने व्रतकथा सुनने के बाद व्यापारी को भी प्रसाद दिया। श्री सत्यनारायण भगवान् का स्मरण करते हुए व्यापारी ने प्रसाद ग्रहण किया और वापस लौटकर अपनी पत्नी लीलावती से कहा, 'हमारी कोई सन्तान नहीं है। कनकपुर के राजा उल्कामुख ने मुझे बताया है कि श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत करने और उनकी कथा सुनने से सभी मनोकामनाएं पूरी होती हैं। यदि सत्यनारायण भगवान् की अनुकम्पा से हमारे कोई सन्तान हुई तो मैं श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत अवश्य करूंगा।' व्यापारी के ऐसा निश्चय करने के कुछ समय बाद

(८)

लीलावती गर्भवती हुई। दसवें महीने में उसने एक सुंदर कन्या को जन्म दिया। व्यापारी ने पुत्री जन्म पर बहुत खुशियां मनाईं, लेकिन सत्यनारायण भगवान् का व्रत नहीं किया। जब उसकी पत्नी लीलावती ने अपने पति से श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत करने के लिए कहा तो वह बोला, 'अभी क्या जल्दी है। मैं इधर व्यापार में बहुत व्यस्त हूं। मुझे अभी फुर्सत नहीं है। जब अपनी बेटी बड़ी हो जाएगी और इसका विवाह करूंगा तो मैं अवश्य श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत करूंगा।' अपने पति के वचन सुनकर लीलावती चुप रह गई। व्यापारी की कन्या कलावती शुक्लपक्ष के चंद्रमा की तरह तेजी से बड़ी होने लगी। पलक झपकते ही 16 वर्ष बीत गए। एक दिन व्यापार में बहुत-सा धन कमाकर घर लौटे व्यापारी ने अपनी बेटी को सहेलियों के साथ उपवन में घूमते देखा तो उसे उसके विवाह की चिन्ता होने लगी। व्यापारी ने कलावती के लिए सुयोग्य वर ढूंढ़ने के लिए अपने सेवकों को दूर-दूर के नगरों में भेजा। व्यापारी के सेवक कंचनपुर नगर में पहुंचे। उस नगर में उन्होंने एक वणिक-पुत्र को देखा। वणिक का बेटा अत्यंत सुन्दर और गुणवान् था। सेवकों ने वापस लौटकर व्यापारी को उस वणिक के बेटे के बारे में बताया। व्यापारी उस सुंदर लड़के को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और कलावती का विवाह बहुत धूमधाम से उसके साथ कर दिया। दहेज में उसने वणिक-पुत्र को बहुत-सा धन दिया। कलावती का विवाह भी हो गया, लेकिन व्यापारी

ने श्री सत्यनारायण का व्रत नहीं किया। लीलावती ने अपने पति से कहा, 'नाथ! आपने कलावती के विवाह पर श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत करने का निश्चय किया था। अब तो आपको व्रत कर लेना चाहिए।' पत्नी की बात सुनकर व्यापारी ने कहा, 'अभी तो मैं अपने दामाद के साथ व्यापार के लिए जा रहा हूं। व्यापार से लौटने पर श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत-पूजा अवश्य करूंगा।' यह कहकर व्यापारी ने कई नावों में सामान भरा और अपने दामाद तथा सेवकों के साथ व्यापार के लिए निकल पड़ा। उस व्यापारी द्वारा बार-बार व्रत का निश्चय करने और फिर व्रत न करने से सत्यनारायण भगवान् क्रोधित हो गए और व्यापारी को दण्ड देने का निश्चय किया।

व्यापारी अपने दामाद के साथ रत्नसारपुर में पहुंचकर व्यापार करने लगा। एक दिन कुछ चोर महल में चोरी करके भाग रहे थे। सैनिक उनका पीछा कर रहे थे। भागते हुए चोरों ने सैनिकों से बचने के लिए चोरी का धन अवसर पाकर व्यापारी की नावों में छिपा दिया। खाली हाथ चोर आराम से भाग गए। चोरों का

पीछा करते हुए सैनिक व्यापारी के पास पहुंचे। उन्होंने व्यापारी की नावों की तलाशी ली तो उन्हें राजा का चोरी गया धन मिल गया। तब सैनिक व्यापारी और उसके दामाद को बंदी बनाकर राजा के पास ले गए। राजा ने उन दोनों को बंदीगृह में डाल दिया और उनका सारा धन ले लिया। श्री सत्यनारायण के प्रकोप से उधर लीलावती पर भी मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। उसके घर में चोरी हो गई और चोर सारा धन चुराकर ले गए। घर में खाने के लिए भी अन्न नहीं बचा। भूख-प्यास से व्याकुल होकर व्यापारी की बेटी कलावती एक ब्राह्मण के घर गई। उस ब्राह्मण के घर में श्री सत्यनारायण भगवान् की व्रतकथा हो रही थी। उसने भी वहां बैठकर व्रतकथा सुनी और प्रसाद लिया। घर लौटकर कलावती ने अपनी मां लीलावती को सारी बात बताई। कलावती से श्री सत्यनारायण भगवान् की व्रतकथा की बात सुनकर लीलावती ने भी व्रत करने का निश्चय किया। अगले दिन लीलावती ने अपने परिवार और आसपास के लोगों के साथ श्री सत्यनारायण भगवान् की पूजा की। पूजा के बाद सबको प्रसाद बांटकर स्वयं भी प्रसाद ग्रहण किया। लीलावती ने अपने पति और दामाद के घर लौट आने की मनोकामना से श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत किया था। लीलावती के विधिपूर्वक व्रत करने और प्रसाद ग्रहण करने से श्री सत्यनारायण भगवान् ने प्रसन्न होकर उसकी मनोदःःपना पूरी की। उन्होंने राजा चंदकेतु को स्वप्न में दर्शन देकर कहा, 'हे राजन्!

व्यापारी और उसका दामाद बिल्कुल निर्दोष हैं। सुबह उठते ही दोनों को मुक्त कर दो। उन दोनों का सारा धन भी वापस लौटा दो। यदि तुमने ऐसा नहीं किया तो मैं तुम्हारा सारा वैभव नष्ट कर दूंगा। इतना कहकर श्री सत्यनारायण भगवान् अंतर्धान हो गए। प्रातः होते ही राजा चंदकेतु ने अपने मंत्रियों और राजज्योतिषी को रात के स्वप्न की बात बताई तो सबने व्यापारी और उसके दामाद को छोड़ देने के लिए कहा। राजा चंदकेतु ने तुरन्त उस व्यापारी और उसके दामाद को छोड़ दिया। उनका सारा धन भी वापस कर दिया। इस प्रकार श्री सत्यनारायण भगवान् की अनुकम्पा से व्यापारी और उसका दामाद दोनों खुशी-खुशी अपने नगर की ओर चल दिए।

॥ इति तृतीय अध्यायः ॥

(१२)

चतुर्थ अध्याय

श्री सूतजी बोले, 'उस व्यापारी ने अपने दामाद के साथ शुभमुहूर्त में नावों द्वारा रत्नसारपुर से प्रस्थान किया। लंबी यात्रा करने के बाद व्यापारी ने एक नगर के किनारे नावों को रोककर भोजन किया और फिर दोनों विश्राम करने लगे। तभी श्री सत्यनारायण भगवान् साधु के रूप में व्यापारी के पास पहुंचे और पूछा, 'हे वणिक! तेरी नावों में क्या सामान लदा हुआ है?' व्यापारी ने मन-ही-मन सोचा, दण्डी साधु अवश्य ही कुछ मांगने की इच्छा से सामान के बारे में पूछ रहा है। यह सोचकर व्यापारी ने झूठ बोला, 'हे दण्डी स्वामी! मेरी नावों में तो बेल और पत्र (पत्ते) भरे हुए हैं।' व्यापारी के झूठे वचन सुनकर सत्यनारायण भगवान् ने क्रोधित होते हुए कहा, 'हे वैश्य! जो तुमने कहा है, वही सत्य होगा।' इतना कहकर सत्यनारायण भगवान् कुछ दूर जाकर अंतर्धान हो गए। उधर व्यापारी दण्डी साधु को वहां से खाली हाथ लौटाकर बहुत प्रसन्न हुआ। लेकिन जब व्यापारी ने अपनी नावों में बेल और पत्र (पत्ते) भरे हुए देखे तो वह जोर-जोर से विलाप करने लगा और मन-ही-मन अपने झूठ बोलने पर प्रायश्चित्त करने लगा। रोते-रोते व्यापारी मूर्च्छित हो गया। कुछ देर बाद जब उसकी मूर्च्छा नष्ट हुई तो वह फिर विलाप करने लगा। तब उसके दामाद ने कहा, 'आप इतना दुखी मत

होइए। यह सब उस दण्डी साधु के शाप के कारण हुआ है। अतः वही दण्डी महाराज हमें इस विपत्ति से छुटकारा दिला सकते हैं। दामाद के वचन सुनकर व्यापारी दण्डी साधु की तलाश में चल दिया। कुछ देर ढूंढ़ने पर उसे एक वृक्ष के नीचे दण्डी साधु के रूप में सत्यनारायण भगवान् मिल गए। व्यापारी ने दण्डी साधु के चरणों पर गिरकर झूठ बोलने की क्षमा मांगी। दण्डी स्वरूप सत्यनारायण भगवान् बोले, 'हे वणिक-पुत्र! तेरे बार-बार झूठ बोलने के कारण ही मैंने तुझे इतना दण्ड दिया है। तूने बार-बार सत्यनारायण भगवान् अर्थात् मेरी पूजा करने के लिए कहा, लेकिन कभी पूजा की नहीं।' व्यापारी ने तब हाथ जोड़कर कहा, 'हे भगवन्! आप तो दीन-दुखियों के कष्ट दूर करनेवाले हैं। सबकी मनोकामनाएं पूरी करते हैं। मेरी इस गलती को भी क्षमा करें। आपके रूप को तो ब्रह्मा भी नहीं जान पाते। फिर भला मैं अज्ञानी कैसे आपकी लीला को समझ पाता। अब मैं जीवन में कभी झूठ नहीं बोलूंगा। सदैव श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत और पूजा किया करूंगा। आप मुझ पर अनुकम्पा

करें।' व्यापारी की क्षमा-याचना सुनकर दण्डी साधु ने उसे क्षमा कर दिया। उसी समय व्यापारी की नावों में भरे हुए बेल और पत्ते धन-धान्य में परिवर्तित हो गए। व्यापारी ने अपने सेवकों के साथ अगले दिन श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत करके उनकी पूजा की। सबको प्रसाद वितरित करके स्वयं भी प्रसाद ग्रहण किया। उसके बाद व्यापारी ने अपने नगर की ओर प्रस्थान किया।

अपने नगर में पहुंचकर व्यापारी ने एक सेवक को अपने घर भेजा। सेवक ने उसके घर पहुंचकर लीलावती को सूचित किया। उस समय लीलावती और कलावती दोनों श्री सत्यनारायण भगवान् की पूजा कर रही थीं। पति और दामाद के लौट आने का समाचार सुनकर लीलावती ने पूजा पूरी करके प्रसाद ग्रहण करने के बाद कलावती से कहा, 'बेटी! मैं नदी किनारे जा रही हूं। तू घर का काम पूरा करके आ जाना।' कहकर लीलावती नदी की ओर चल पड़ी। परन्तु कलावती पति से मिलने की खुशी में प्रसाद ग्रहण किए बिना ही घर से निकलकर नदी किनारे जा पहुंची। उसके प्रसाद ग्रहण न करने के कारण सत्यनारायण भगवान् क्रोधित हो उठे। उन्होंने व्यापारी की नावों को नदी में डुबो दिया। अपने पति को वहां न देख कलावती ने जोर-जोर से रोना शुरू कर दिया। तब व्यापारी ने कहा, 'पुत्री! अवश्य ही तुझसे कोई भूल हुई है। उस भूल के कारण श्री सत्यनारायण भगवान् ने तुझे यह दण्ड दिया है।' तब व्यापारी ने सत्यनारायण

भगवान् से प्रार्थना की, 'हे भगवन्! मेरे परिवार के किसी स्त्री-पुरुष से कोई भूल हुई हो तो उसे अवश्य क्षमा कर देना।' तभी आकाशवाणी हुई, 'हे वणिक-पुत्र! तेरी कन्या मेरा प्रसाद ग्रहण किए बिना ही चली आई है। यदि अब घर पहुंचकर तेरी कन्या प्रसाद ग्रहण करके वापस आए तो उसे पति के दर्शन होंगे और डूबी हुई नावें भी जल के ऊपर आ सकेंगी।' कलावती ने वैसा ही किया। उसके प्रसाद ग्रहण करके वापस लौटने पर नावें जल के ऊपर आ गईं। दामाद भी सुरक्षित नदी से निकल आया। घर लौटकर व्यापारी ने अपने परिवार और बंधु-बांधवों के साथ मिलकर विधिनुसार श्री सत्यनारायण भगवान् की पूजा की। उसकी सभी मंगलकामनाएं पूरी हुईं और वह आनंदपूर्वक जीवन-यापन करता हुआ विष्णुलोक को चला गया।

॥ इति चतुर्थ अध्याय:॥

(१६)

पंचम अध्याय

श्री सूतजी बोले, 'हे ऋषि-मुनियो! मैं और भी कथा सुनाता हूं। कौशलपुर में एक राजा था–तुंगध्वज। उसकी प्रजा उसकी छत्रछाया में आनंदपूर्वक रह रही थी। राजा तुंगध्वज अपनी प्रजा के सुख-दु:ख का बहुत ध्यान रखता था। लेकिन एक बार उसने भी सत्यनारायण भगवान् का प्रसाद ग्रहण नहीं किया। तब सभी को चिन्ताओं से मुक्त करके, धन-सम्पत्ति से भण्डार भरकर प्राणियों को जीवन के सभी सुख देनेवाले श्री सत्यनारायण भगवान् ने राजा को प्रसाद ग्रहण न करने का दण्ड दिया।

एक दिन राजा तुंगध्वज जंगल में हिंसक पशुओं का शिकार करने निकला था। तेजी से घोड़ा दौड़ाकर शिकार का पीछा करते हुए वह अपने सैनिकों से अलग हो गया और देर तक हिंसक जानवरों का शिकार किया। अत: कुछ देर विश्राम करने की इच्छा से वह एक बड़े वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गया। समीप ही कुछ चरवाहे श्री सत्यनारायण भगवान् की पूजा कर रहे थे। राजा ने उनके पास से गुजरते हुए सत्यनारायण भगवान् को नमस्कार नहीं किया। चरवाहों ने राजा को पूजा के बाद प्रसाद दिया, तो राजा ने उन्हें छोटे लोग समझकर प्रसाद ग्रहण नहीं किया और घोड़े पर सवार हो अपने नगर की ओर चल दिया। राजा जब नगर में पहुंचा तो देखा कि उसका सारा वैभव तथा

धन-सम्पत्ति आदि नष्ट हो गया है। श्री सत्यनारायण के प्रकोप से राजा निर्धन हो गया। तब राजज्योतिषी ने राजा से कहा, 'महाराज! आपसे अवश्य ही कोई भूल हुई है। अगर आप उस भूल का प्रायश्चित्त कर लें तो सबकुछ पहले जैसा हो जाएगा।' राजा को तुरन्त अपनी भूल का स्मरण हो आया। अतः मंदिर में जाकर राजा ने श्री सत्यनारायण भगवान् से क्षमा मांगी और उनकी पूजा की। पूजा के बाद प्रसाद ग्रहण करने से श्री सत्यनारायण भगवान् की अनुकम्पा से चमत्कार हुआ। राजा का खोया वैभव पुनः लौट आया। श्री सत्यनारायण भगवान की अनुकम्पा से जीवन के सभी सुखों का भोग करते हुए अंत में राजा तुंगध्वज वैकुण्ठ धाम को गया और मोक्ष को प्राप्त किया। श्री सत्यनारायण भगवान् के व्रत-पूजा को जो भी मनुष्य करता है, उसके सभी दुःख, चिन्ताएं नष्ट होती हैं। उसके घर में धन-धान्य के भण्डार भरे रहते हैं। निस्संतानों को सन्तान की प्राप्ति होती है और सभी मनोकामनाओं को प्राप्त कर मनुष्य अंत में मोक्ष को प्राप्त कर सीधे वैकुण्ठ धाम को जाता है।

(१८)

श्री सूतजी ने कुछ पल रुककर कहा, 'हे श्रेष्ठ मुनियो! श्री सत्यनारायण भगवान् के व्रत को पूर्व जन्म में जिन लोगों ने किया उन्हें दूसरे जन्म में भी सभी तरह के सुख प्राप्त हुए। वृद्ध शतानंद ब्राह्मण ने पूर्वजन्म में सत्यनारायण का विधिवत् व्रत किया, तो दूसरे जन्म में सुदामा के रूप में भगवान् की पूजा करते हुए अंत में मोक्ष को प्राप्त कर वैकुण्ठ धाम को चला गया। उल्कामुख राजा अगले जन्म में राजा दशरथ के रूप में मोक्ष को प्राप्त करके वैकुण्ठ को गए। व्यापारी ने मोरध्वज के रूप में जन्म लिया और अपने पुत्र को आरे से चीरकर भगवान् की अनुकम्पा से वैकुण्ठ को प्राप्त किया। राजा तुंगध्वज अगले जन्म में मनु के रूप में जन्म लेकर भगवान् का पूजा-पाठ करते हुए, लोकप्रिय होकर सद्कर्म करते हुए मोक्ष को प्राप्त कर वैकुण्ठ धाम को चले गए। हे ऋषि-मुनियो! श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत और पूजा मनुष्य को सभी चिन्ताओं से मुक्त करके, धन-सम्पत्ति के भण्डार भरकर अंत में जन्म-जन्मान्तर के चक्रव्यूह से मुक्ति दिलाकर मोक्ष प्रदान करता है।

॥ इति पंचम अध्याय ॥

(१६)

श्री सत्यनारायण जी की आरती

जय लक्ष्मी रमणा, स्वामी जय लक्ष्मी रमणा
सत्यनारायण स्वामी, जन पातक हरना
जय लक्ष्मी रमणा .....

रतन जड़त सिंहासन, अद्भुत छबी राजे
नारद् कहत निरंजन, घंटा धुन बाजे
जय लक्ष्मी रमणा....

प्रगट भए कलि कारण द्विज को दर्श दियो
बूढ़ो ब्राह्मण बनकर कंचन महल कियो
जय लक्ष्मी रमणा....

दुर्बल भील कठारो इन पर कृपा करी
चन्द्रचूड़ एक राजा जिनकी विपति हरी
जय लक्ष्मी रमणा....

वैश्य मनोरथ पायो श्रद्धा तज दीनी
सो फल भोग्यो प्रभुजी फिर स्तुति कीनी
जय लक्ष्मी रमणा....

भाव भक्ति के कारण छिन-छिन रूप धरयो
श्रद्धा धारण कीनी तिनको काज सरयो
जय लक्ष्मी रमणा....

ग्वाल बाल संग राजा वन में भक्ति करी
मनवांछित फल दीन्हा दीनदयाल हरी
जय लक्ष्मी रमणा....

चढ़त प्रसाद सवायो कदली फल मेवा
धूप दीप तुलसी से राजी सत्यदेवा
जय लक्ष्मी रमणा....

श्रीसत्यनारायण जी की आरती जो कोई गावे
कहत शिवानन्द स्वामी मनवांछित फल पावे
जय लक्ष्मी रमणा....




drikPanchang.com

वट सावित्री व्रत

यह व्रत सौभाग्यवती स्त्रियों का मुख्य त्यौहार माना जाता है । यह व्रत मुख्यत: ज्येष्ठ कृष्ण की अमावस्या को किया जाता है । इस दिन वट (बरगद) के वृक्ष की पूजा होती है । इस दिन सत्यवान-सावित्री और यमराज की पूजा की जाती है। स्त्रियाँ इस व्रत को अखण्ड़ सौभाग्यवती अर्थात अपने पति की लम्बी आयु, सेहत तथा तरक्की के लिए करती हैं । सावित्री ने इसी व्रत के द्वारा अपने पति सत्यवान को धर्मराज से छीन लिया था ।

व्रत का विधि-विधान

इस दिन स्त्रियाँ सुबह-सवेरे केशों सहित स्नान करें । तत्पश्चात् एक बांस की टोकरी में रेत भरकर ब्रह्मा की मूर्ति की स्थापना करनी चाहिए । ब्रह्मा के वाम-पार्श्व में सावित्री की मूर्ति स्थापित करनी चाहिए । इसी प्रकार दूसरी टोकरी में सत्यवान तथा सावित्री की मूर्तियाँ स्थापित करके दोनों टोकरियाँ वट वृक्ष के नीचे रखनी चाहिए । सर्व प्रथम ब्रह्मा और सावित्री का पूजन करना चाहिए, उसके बाद सत्यवान तथा सावित्री की पूजा करें तथा वट के पेड़ को पानी दें । जल, फूल, मौली, रोली, कच्चा सूत, भिगोया चना, गुड़ तथा धीप-दीप से वट वृक्ष की पूजा करी जाती है । वट वृक्ष को जल चढ़ा कर उसके तने के चारों ओर कच्चा धागा लपेटकर तीन बार परिक्रमा करें । वट के पत्तों के गहने पहनकर वट-सावित्री की कथा सुननी चाहिए । भीगे हुए चने का बायना निकालकर उस पर रुपये रखकर अपनी सास को दें तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त करें । यदि सास दूर हो तो बायना बनाकर वहाँ भेज दें । वट तथा सावित्री की पूजा के बाद प्रतिदिन पान, सिंदूर तथा कुंकुम से सुहागिन स्त्री की पूजा का भी विधान है । पूजा के समाप्त होने पर ब्राह्मणों को वस्त्र तथा फल आदि बांस के पत्ते में रखकर दान करनी चाहिए ।

यदि आपके आस-पास कोई वट वृक्ष नहीं हो तो दिवार पर वट वृक्ष की तस्वीर लगा कर पूरी श्रद्धा और आस्था से पूजा करें ।

इसके पश्चात् वट-सावित्री की कथा सुननी चाहिए ।

वट-सावित्री व्रत कथा

एक समय मद्र देश में अश्वपति नामक परम ज्ञानी राजा राज करता था । उन्होने संताप प्राप्ति के लिए अपनी पत्नि के साथ सावित्री देवी का विधिपूर्वक व्रत तथा पूजन किया और पूत्री होने का वर प्राप्त किया । इस पूजा के फल से उनके यहाँ सर्वगुण सम्पन्न सावित्री का जन्म हुआ ।

सावित्री जब विवाह योग्य हुई तो राजा ने उसे स्वयं अपना वर चुनने को कहा । अश्वपति ने उसे अपने पति के साथ वर का चुनाव करने के लिए भेज दिया ।

एक दिन महार्षि नारद जी राजा अश्वपति के यहाँ आए हुए थे तभी सावित्री अपने वर का चयन करके लौटी । उसने आदरपूर्वक नारद जी को प्रणाम किया । नारद जी के पूछने पर सावित्री ने कहा -" राजा द्युमत्सेन, जिनका राज्य हर लिया गया है, जो अन्धे होकर अपनी पत्नी के साथ वनों में भटक रहे है, उन्ही के इकलौते आज्ञाकारी पुत्र सत्यवान को मैने अपने पतिरूप में वरण किया है ।"

तब नारद जी ने सत्यवान तथा सावित्री के ग्रहों की गणना करके उसके भूत, वर्तमान तथा भविष्य को देखकर राजा से कहा - " राजन् ! तुम्हारी कन्या ने नि:सन्देह बहुत योग्य वर काचुनाव किया है । सत्वान गुणी तथा धर्मत्मा है । वह सावित्री के लिए सब प्रकार से योग्य है परन्तु एक भारी दोष है। वह अल्पायु है और एक वर्ष के बाद अर्थात जब सावित्री बारह वर्ष की हो जाएगी उसकी मृत्यु हो जाएगी ।

नारदजी की ऐसी भविष्यवाणी सुनकरराजा ने अपनी पुत्री को कोई अन्य वर खोजने के लिए कहा ।इस पर सावित्री के कहा -"पिताजी ! आर्य कन्याएं जीवन में एक ही बार अपने पति का चयन करती है। मैने भी सत्यवान को मन से अपना पति स्वीकार कर लिया है, अब चाहे वह अल्पायु हो या दीर्घायु, मैं किसी अन्य को अपने हृदय में स्थान नही दे सकती ।"

सावित्री ने आगे कहा -"पिताजी, आर्य कन्याएँ अपना पति एक बार चुनती है । राजा एक बार ही आज्ञा देते है, पण्डित एक बार प्रतिज्ञा करते है तथा कन्यादान भी एक बार किया जाता है । अब चाहे जो हो सत्यवान ही मेरा पति होगा ।"

सावित्री के ऐसे दृढ़ वचन सुनकर राजा अश्वपति ने उसका विवाह सत्यवान से कर दिया। सावित्री ने नारद जी से अपने पति की मृत्यु का समय ज्ञात कर लिया था । सावित्री अपने पति और सास-ससुर की सेवा करती हुई वन में रहने लगी ।

समय बीतता गया और सावित्री बारह वर्ष की हो गयी । नारद जी के वचन उसको दिन-प्रतिदिन परेशान करते रहे । आखिर जब नारदजी के कथनानुसार उसके पति के जविन के तीन दिन बचें, तभी से वह उपवास करने लगी । नारद जी द्वारा

(१)

कम्रश:

कथित निश्चित तिथि पर पितरों का पूजन किया । प्रतिदिन की भांति उस दिन भी सत्यवान लकड़ियाँ काटने के लिए चला तो सास-ससुर से आज्ञा लेकर वह भी उसके साथ वन में चल दी ।
वन में सत्यवान ने सावित्री को मीठे-मीठे फल लाकर दिये और स्वयं एक वृक्ष पर लकड़ियाँ काटने के लिए चढ़ गया । वृक्ष पर चढ़ते ही सत्यवान के सिर में असहनीय पीड़ा होने लगी । वह वृक्ष से नीचे उतर आया । सावित्री ने उसे पास के बड़ के वृक्ष के नीचे लिटाकर सिर अपनी गोद में रख लिया । सावित्री का हृदय कांप रहा था । तभी उसने दक्षिण दिशा से यमराज को आते देखा । यमराज और उसके दूत धर्मराज सत्यवान के जीव को लेकर चल दिये तो सावित्री भी उनके पीछे चल पड़ी । पीछा करती सावित्री को यमराज ने समझाकर वापस लौट जाने को कहा । परन्तु सावित्री ने कहा - "हे यमराज ! पत्नी के पत्नीत्व की सार्थकता इसी में है कि वह पति का छाया के समान अनुसरण करे । पति के पीछे जाने जाना ही स्त्री धर्म है । पतिव्रत के प्रभाव से और आपकी कृपा से कोई मेरी गति नही रोक सकता यह मेरी मर्यादा है । इसके विरूद्ध कुछ भी बोलना आपके लिए शोभनीय नहीं हैं ।"
सावित्री के धर्मयुक्त वचनों से प्रसन्न होकर यमराज ने उससे उसके पति के प्राणों के अतिरिक्त कोई भी वरदान माँगने को कहा । सावित्री ने यमराज से अपने सास-ससुर की आँखो की खोई हुई ज्योति तथा दीर्घायु माँग ली । यमराज "तथास्तु" कहकर आगे बढ़ गए । फिर भी सावित्री ने यमराज का पीछा नहीं छोड़ा । यमराज ने उसे फिर वापस जाने के लिए कहा । इस पर सावित्री ने कहा - " हे धर्मराज ! मुझे अपने पति के पीछे चलने में कोई परेशानी नहीं हैं । पति के बिना नारी जीवन की कोई सार्थकता नहीं है । हम पति-पत्नि भिन्न-भिन्न मार्ग कैसे जा सकते है । पति का अनुगमन मेरा कर्तव्य है ।"
यमराज ने सावित्री के पतिव्रत धर्म की निष्ठा देख कर पुन: वर मांगने के लिए कहा । सावित्री ने अपने सास-ससुर के खोये हुए राज्य की प्राप्ति तथा सौ भाइयों की बहन होने का वर मांगा । यमराज पुन: "तथास्तु" कहकर आगे बढ़ गए । परन्तु सावित्री अब भी यमराज का पीछा किए जा रही थी । यमराज ने फिर से उसे वापस लौट जाने को कहा, किंतु सावित्री अपने प्रण पर अडिग रही ।
तब यमराज ने कहा - " हे देवी ! यदि तुम्हारे मन में अब भी कोई कामना है तो कहो । जो माँगोगी वही मिलेगा ।" इस पर सावित्री ने कहा - "यदि आप सच में मुझ पर प्रसन्न है और सच्चे हृदय से वरदानदेना चाहते है तो मुझे सौ पुत्रों की माँ बनने का वरदान दें ।" यमराज "तथास्तु" कहकर आगे बढ़ गए ।

(२)

क्रमश:

यमराज ने पीछे मुड़कर देखा और सावित्री से कहा - " अब आगे मत बढ़ो । तुम्हे मुंहमाँगा वर दे चुका हूं, फिर भी मेरा पीछा क्यों कर रही हो ?
सावित्री बोली - "धर्मराज ! आपने मुझे सौ पुत्रों की माँ होने का वरदान तो दे दिया, पर क्या मैं पति के बिना संतान को जन्म दे सकती हूँ ? मुझे मेरा पति वापस मिलना ही चाहिए, तभी मैं आपका वरदान पूरा कर सकूँगी ।"
सावित्री की धर्मनिष्ठा, पतिभक्ति और शुक्तिपूर्ण वचनों को सुनकर यमराज नें सत्यवान के जीव को मुक्त कर दिया । सावित्री को वर देकर यमराज अंर्तध्यान हो गए ।
सावित्री उसी वट वृक्ष के नीचे पहुंची जहाँ सत्यवान का शरीर पड़ा था । सावित्री ने प्रणाम करके जैसे ही वट वृक्ष की परिक्रमा पूर्ण की वैसे ही सत्यवान के मृत शरीर जीवित हो उठा । दोनों हर्षातुर से घर की ओर चल पड़े ।
प्रसन्नचित सावित्री अपने पति सहित सास-ससुर के पास गई । उनकी नेत्र ज्योति वापस लौट आई थी । उनके मंत्री उन्हे खोज चुके थे । द्युमत्सेन ने पुन: अपना राज सिंहासन संभाल लिया था ।
उधर महाराज अश्वसेन सौ पुत्रों के पिता हुए और सावित्री सौ भाइयों की बहन । यमराज के वरदान से सावित्री सौ पुत्रों की माँ बनी । इस प्रकार सावित्री ने अपने पतिव्रत का पालन करते हुए अपने पति के कुल एवं पितृकुल दोनों का कल्याण कर दिया । सत्यवान और सावित्री चिरकाल तक राज सुख भोगते रहे और चारों दिशाओं में सावित्री के पतिव्रत धर्म के पालन की कीर्ति गूंज उठी ।

समाप्त

(३)

श्री वट सावित्री आरती

अश्वपती पुसता झाला।। नारद सांगताती तयाला ।।
अल्पायुषी सत्यवंत।। सावित्री ने कां प्रणीला ।।
आणखी वर वरी बाळे।। मनी निश्चय जो केला ।।
आरती वडराजा ।। १।।
दयावंत यमदूजा। सत्यवंत ही सावित्री।
भावे करीन मी पूजा। आरती वडराजा ।।धृ०।।
ज्येष्ठमास त्रयोदशी। करिती पूजन वडाशी ।।
त्रिरात व्रत करूनीया। जिंकी तू सत्यवंताशी।
आरती वडराजा ।।२।।
स्वर्गावारी जाऊनिया। अग्निखांब कचळीला।।
धर्मराजा उचकला। हत्या घालिल जीवाला।
येश्र गे पतिव्रते। पती नेई गे आपुला।।
आरती वडराजा।।३।।
जाऊनिया यमापाशी। मागतसे आपुला पती। चारी वर देऊनिया।
दयावंता द्यावा पती।।
आरती वडराजा।।४।।
पतिव्रते तुझी कीर्ती। ऐकुनि ज्या नारी।।
तुझे व्रत आचरती। तुझी भुवने पावती।।
आरती वडराजा।।५।।
पतिव्रते तुझी स्तुती। त्रिभुवनी ज्या करिती।। स्वर्गी पुष्पवृष्टी करूनिया।
आणिलासी आपुला पती।। अभय देऊनिया। पतिव्रते तारी त्यासी।।
आरती वडराजा।।६।।

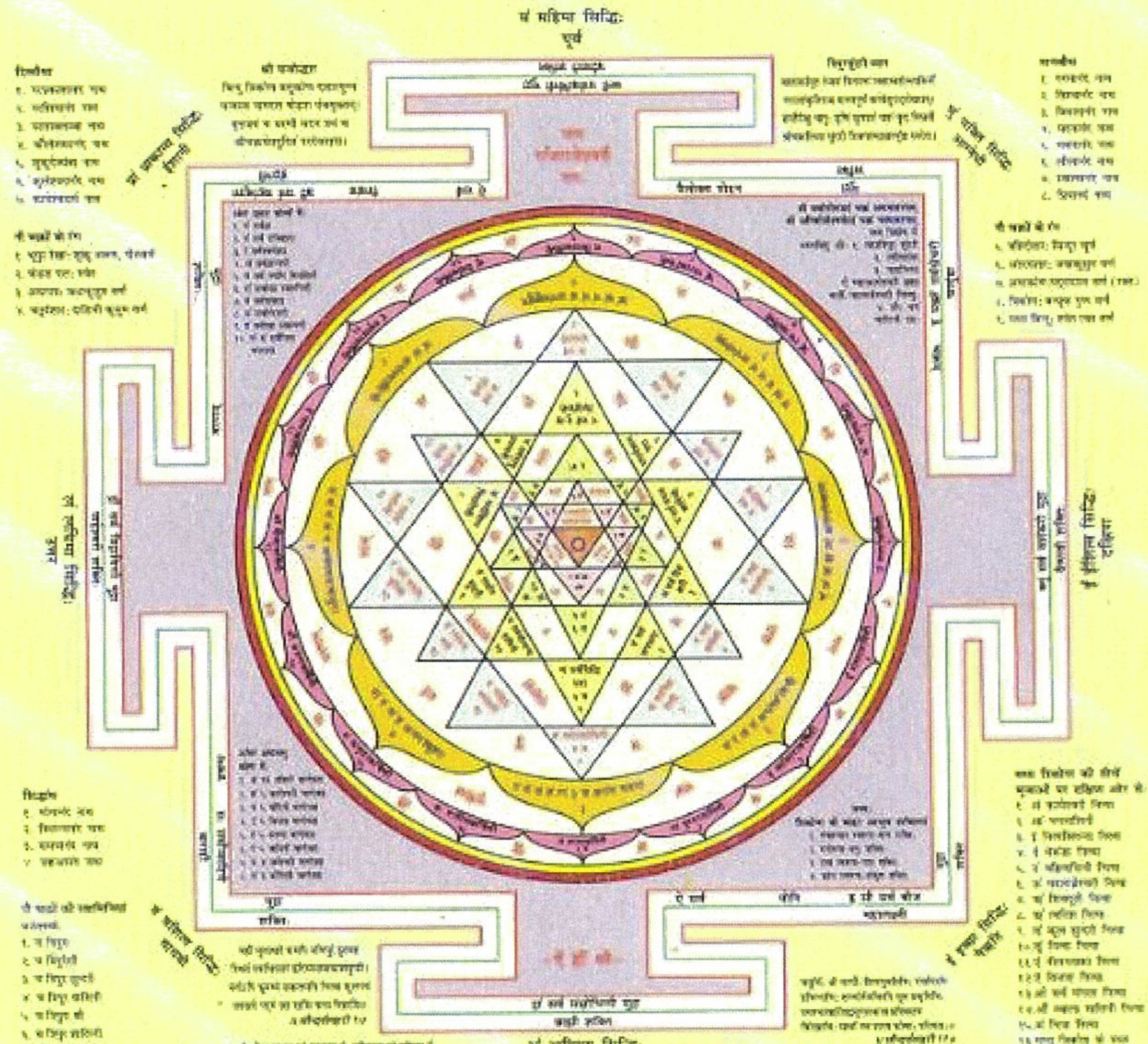
श्री मां वैभव लक्ष्मी



हे मां वैभव लक्ष्मी! सभी की मनोकामनाएं शीघ्र पूर्ण कर जगत का कल्याण करें-यही हमारी प्रार्थना है।

मां वैभव लक्ष्मी को प्रसन्न करने तथा धन-धान्य, सुख-सम्पत्ति, ऐश्वर्य-वैभव को बढ़ाने और समृद्धि प्रदान करने वाला अद्भुत चमत्कारी असली

श्रीयंत्र



सर्वसिद्धिकारी मां वैभव लक्ष्मी की इस व्रतकथा को आरंभ करने से पहले इस श्रीयंत्र को पूर्ण श्रद्धा सहित नमन करें।

पूजन सामग्री

रोली, मौली, धूप, अगरबत्ती, ऋतुफल, पान, पुष्प, पुष्पमाला, दूब, दही, शहद, घी, मेहंदी, सिंदूर, गुड़, बताशे, श्वेत वस्त्र, रक्त वस्त्र (लाल कपड़ा), हल्दी, चावल, पंचमेवा, लौंग, इलायची, श्रीफल, दीपक, रूई, माचिस, पंचपल्लव, सुपारी, समिधा (हवन हेतु लकड़ियां), हवन सामग्री, लोटा (पानी का बरतन), कटोरी, चम्मच।

वैभव लक्ष्मी पूजन मंत्र

नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते।
शंखचक्र गदाहस्ते महालक्ष्मी नमोऽस्तुते।।
पद्मासन स्थिते देवि वैभवलक्ष्मि स्वरूपिणि।
सर्वपाप हरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तुते।।
श्वेतांबर धरे देवि नाना अलंकार भूषिते।
जगत् स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तुते।।

वैभव लक्ष्मी का ध्यान मंत्र

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजौर्विभृती,
दानं पद्म युगाभये च वपुषा सौदामिनी सन्निभा।।
मुक्ताहार विराजमान पृथुलोत्तुंगस्यनोद्भासिनी।
वायाद्धः कमल कटाक्ष विभवैरानंदयंती हरिम्।।

माता वैभव लक्ष्मी व्रत विधि |

माता लक्ष्मी की कृपा पाने के लिये शुक्रवार के दिन माता वैभव लक्ष्मी का व्रत किया जाता है. शुक्रवार के दिन माता संतोषी का व्रत भी किया जाता है. दोनों व्रत एक ही दिनवार में किये जाते है. परन्तु दोनों व्रतों को करने का विधि-विधान अलग- अलग है. और दोनों के व्रत का उद्देश्य भी भिन्न है. आईये माता वैभव लक्ष्मी के व्रत को करने की विधि जानें.
माता वैभव लक्ष्मी के व्रत की यह खूबी है कि, इस व्रत को स्त्री और पुरुष दोनों में से कोई भी कर सकता है. इस व्रत कि एक और विशेषता है कि इस व्रत को करने से उपवासक को धन और सुख-समृद्धि दोनों की प्राप्ति होती है. घर-परिवार में स्थिर लक्ष्मी का वास बनाये रखने में यह व्रत विशेष रुप से शुभ माना जाता है.
अगर कोई व्यक्ति माता वैभव लक्ष्मी का व्रत करने के साथ साथ लक्ष्मी श्री यंत्र को स्थापित कर उसकी भी नियमित रुप से पूजा-उपासना करता है, तो उसके व्यापार में वृद्धि ओर धन में बढोतरी होती है. व्यापारिक क्षेत्रों में दिन दुगुणी रात चौगुणी वृद्धि करने में माता वैभव लक्ष्मी व्रत और लक्ष्मी श्री यंत्र कि पूजा विश्लेष लाभकारी रहती है. इस व्रत को करने का उद्देश्य दौलतमंद होना है. श्री लक्ष्मी जी की पूजा में विशेष रुप से श्वेत वस्तुओं का प्रयोग करना शुभ कहा गया है. पूजा में श्वेत वस्तुओं का प्रयोग करने से माता शीघ्र प्रसन्न होती है.
इस व्रत को करते समय शास्त्रों में कहे गये व्रत के सभी नियमों का पालन करना चाहिए. और व्रत का पालन भी पूर्ण विधि-विधान से करना चाहिए. व्रत करते समय ध्यान देने योग्य कुछ सामान्य नियम निम्नलिखित है.
इस व्रत को यूं तो स्त्री और पुरुष दोनों ही कर सकते है. इसमें भी कन्याओं से अधिक सुहागिन स्त्रियों को इस व्रत के शुभ फल प्राप्त होने के विषय में कहा गया है. इस व्रत को प्रारम्भ करने के बाद नियमित रुप से 11 या 21 शुक्रवारों तक करना चाहिए.
व्रत का प्रारम्भ करते समय व्रतों की संख्या का संकल्प अवश्य लेना चाहिए. और संख्या पूरी होने पर व्रत का उद्यापन अवश्य करना चाहिए. उध्यापन न करने पर व्रत का फल समाप्त होता है.

व्रत के दिन माता लक्ष्मी जी की पूजा उपासना करने के साथ साथ पूरे दिन माता का ध्यान और स्मरण करना चाहिए. व्रत के दिन की अवधि में दिन के समय में सोना नहीं चाहिए. और न ही अपने दैनिक कार्य छोडने चाहिए. आलसी भाव को स्वयं से दूर रखना चाहिए. आलसी व्यक्तियों के पास लक्ष्मी जी कभी नहीं आती है.
साथ ही प्रात: जल्दी उठकर पूरे घर की सफाई करनी चाहिए. जिस घर में साफ-सफाई का ध्यान नहीं रखा जाता है, उस घर-स्थान में देवी लक्ष्मी निवास नहीं करती है.
लक्ष्मी पूजा में दक्षिणा और पूजा में रखने के लिये धन के रुप में सिक्कों का प्रयोग करना चाहिए. नोटों का प्रयोग करना शुभ नहीं माना जाता है.

माता वैभव लक्ष्मी व्रत विधि

व्रत को शुरु करने से पहले प्रात:काल में शीघ्र उठकर, नित्यक्रियाओं से निवॄत होकर,. पूरे घर की सफाई कर, घर को गंगा जल से शुद्ध करना चाहिए. और उसके बाद ईशान कोण की दिशा में माता लक्ष्मी कि चांदी की प्रतिमा या तस्वीर लगानी चाहिए. साथ ही श्री यंत्र भी स्थापित करना चाहिए श्री यंत्र को सामने रख कर उसे प्रणाम करना चाहिए. और अष्टलक्ष्मियों का नाम लेते हुए, उन्हें प्रणाम करना चहिए. अष्टलक्ष्मी नाम इस प्रकार है.
1 श्री धनलक्ष्मी व वैभव लक्ष्मी, गजलक्ष्मी, अधिलक्ष्मी, विजयालक्ष्मी,ऎश्वर्यलक्ष्मी, वीरलक्ष्मी, धान्यलक्ष्मी, संतानलक्ष्मी आदि. इसके पश्चात मंत्र बोलना चाहिए.

मंत्र

या रक्ताम्बुजवासिनी विलासिनी चण्डांशु तेजस्विनी ।
या रक्ता रुधिराम्बरा हरिसखी या श्री मनोल्हादिनी ॥
या रत्नाकरमन्थनात्प्रगटिता विष्णोस्वया गेहिनी ।
सा मां पातु मनोरमा भगवती लक्ष्मीश्च पद्मावती ॥
जो उपवासक मंत्र बोलने में असमर्थ हों, वे इसका अर्थ बोल सकते है.

उपरोक्त मंत्र का अर��थ

जो लाल कमल में रहती है, जो अपूर्व कांतिवाली है, जो असह्य तेजवाली है, जो पूर्ण रूप से लाल है, जिसने रक्तरूप वस्त्र पहने है, जो भगवान विष्णु को अति प्रिय है, जो लक्ष्मी मन को आनंद देती है, जो समुद्रमंथन से प्रकत हुई है, जो विष्णु भगवान की पत्नी है, जो कमल से जन्मी है और जो अतिशय पूज्य है, वैसी हे लक्ष्मी देवी! आप मेरी रक्षा करें.
इसके बाद पूरे दिन व्रत कर दोपहर के समय चाहें, तो फलाहार करना चाहिए और रात्रि में एक बार भोजन करना चाहिए. सायं काल में सूर्यास्त होने के बाद प्रदोषकाल समय स्थिर लग्न समय में माता लक्ष्मी का व्रत समाप्त करना चाहिए.
पूजा करने के बाद मात वैभव लक्ष्मी जी कि व्रत कथा का श्रवण करना चाहिए. व्रत के दिन खीर से माता को भोग लगाना चाहिए. और धूप, दीप, गंध
और श्वेत फूलों से माता की पूजा करनी चाहिए. सभी को खीर का प्रसाद बांटकर स्वयं खीर जरूर ग्रहण करनी चाहिए.

श्री माँ वैभव लक्ष्मी माता व्रत कथा

एक समय की बात है कि एक शहर में एक शीला नाम की स्त्री अपने पति के साथ रहती थी. शीला स्वभाव से धार्मिक प्रवृति की थी. और भगवान की कृपा से उसे जो भी प्राप्त हुआ था, वह उसी में संतोष करती थी. शहरी जीवन वह जरूर व्यतीत कर रही थी, परन्तु शहर के जीवन का रंग उसपर नहीं चढा था. भजन-कीर्तन, भक्ति-भाव और परोपकार का भाव उसमें अभी भी था.

वह अपने पति और अपनी ग्रहस्थी में प्रसन्न थी. आस-पडौस के लोग भी उसकी सराहना किया करते थें. देखते ही देखते समय बदला और उसका पति कुसंगति का शिकार हो गया. वह शीघ्र अमीर होने का ख्वाब देखने लगा. अधिक से अधिक धन प्राप्त करने के लालच में वह गलत मार्ग पर चल पडा, जीवन में रास्ते से भटकने के कारण उसकी स्थिति भिखारी जैसी हो गई. बुरे मित्रों के साथ रहने के कारण उसमें शराब, जुआ, रेस और नशीले पदार्थों का सेवन करने की आदत उसे पड गई. इन गंदी आदतों में उसने अपना सब धन गंवा

दिया.

अपने घर और अपने पति की यह स्थिति देख कर शीला बहुत दु:खी रहने लगी. परन्तु वह भगवान पर आस्था रखने वाली स्त्री थी. उसे अपने देव पर पूरा विश्वास था. एक दिन दोपहर के समय उसके घर के दरवाजे पर किसी ने आवाज दी. दरवाजा खोलने पर सामने पडौस की माता जी खडी थी. माता के चेहरे पर एक विशेष तेज था. वह करूणा और स्नेह कि देवी नजर आ रही थ. शीला उस मांजी को घर के अन्दर ले आई. घर में बैठने के लिये कुछ खास व्यवस्था नहीं थी. शीला ने एक फटी हुई चादर पर उसे बिठाया. माँजी बोलीं- क्यों शीला! मुझे पहचाना नहीं? हर शुक्रवार को लक्ष्मीजी के मंदिर में भजन-कीर्तन के समय मैं भी वहाँ आती हूँ.' इसके बावजूद शीला कुछ समझ नहीं पा रही थी, फिर माँजी बोलीं- 'तुम बहुत दिनों से मंदिर नहीं आईं अतः मैं तुम्हें देखने चली आई.'

माँजी के अति प्रेमभरे शब्दों से शीला का हृदय पिघल गया.माँजी के व्यवहार से शीला को काफी संबल मिला और सुख की आस में उसने माँजी को अपनी सारी कहानी कह सुनाई। कहानी सुनकर माँजी ने कहा- माँ लक्ष्मीजी तो प्रेम और करुणा की अवतार हैं. वे अपने भक्तों पर हमेशा ममता रखती हैं. इसलिए तू धैर्य रखकर माँ लक्ष्मीजी का व्रत कर. इससे सब कुछ ठीक हो जाएगा.' शीला के पूछने पर माँजी ने उसे व्रत की सारी विधि भी बताई. माँजी ने कहा- 'बेटी! माँ लक्ष्मीजी का व्रत बहुत सरल है. उसे 'वरदलक्ष्मी व्रत' या 'वैभवलक्ष्मी व्रत' कहा जाता है. यह व्रत करने वाले की सब मनोकामना पूर्ण होती है. वह सुख-संपत्ति और यश प्राप्त करता है.'

शीला यह सुनकर आनंदित हो गई. शीला ने संकल्प करके आँखें खोली तो सामने कोई न था. वह विस्मित हो गई कि माँजी कहाँ गईं? शीला को तत्काल यह समझते देर न लगी कि माँजी और कोई नहीं साक्षात् लक्ष्मीजी ही थीं.

दूसरे दिन शुक्रवार था. सबेरे स्नान करके स्वच्छ कपड़े पहनकर शीला ने माँजी द्वारा बताई विधि से पूरे मन से व्रत किया. आखिरी में प्रसाद वितरण हुआ. यह प्रसाद पहले पति को खिलाया. प्रसाद खाते ही पति के स्वभाव में फर्क पड़ गया. उस दिन उसने शीला को मारा नहीं, सताया भी नहीं. उनके मन में 'वैभवलक्ष्मी व्रत' के लिए श्रद्धा बढ़ गई.

शीला ने पूर्ण श्रद्धा-भक्ति से इक्कीस शुक्रवार तक 'वैभवलक्ष्मी व्रत' किया. इक्कीसवें शुक्रवार को माँजी के कहे मुताबिक उद्यापन विधि कर के सात स्त्रियों को 'वैभवलक्ष्मी व्रत' की सात पुस्तकें उपहार में दीं. फिर माताजी के 'धनलक्ष्मी स्वरूप' की छबि को वंदन करके भाव से मन ही मन प्रार्थना करने लगीं- 'हे माँ धनलक्ष्मी! मैंने आपका 'वैभवलक्ष्मी व्रत' करने की मन्नत मानी थी, वह व्रत आज पूर्ण किया है. हे माँ! मेरी हर विपत्ति दूर करो. हमारा सबका कल्याण करो. जिसे संतान न हो, उसे संतान देना. सौभाग्यवती स्त्री का सौभाग्य अखंड रखना. कुँआरी लड़की को मनभावन पति देना. जो आपका यह चमत्कारी वैभवलक्ष्मी व्रत करे, उनकी सब विपत्ति दूर करना. सभी को सुखी करना. हे माँ! आपकी महिमा अपार है.' ऐसा बोलकर लक्ष्मीजी के 'धनलक्ष्मी स्वरूप' की छबि को प्रणाम किया.

व्रत के प्रभाव से शीला का पति अच्छा आदमी बन गया और कड़ी मेहनत करके व्यवसाय करने लगा. उसने तुरंत शीला के गिरवी रखे गहने छुड़ा लिए. घर में धन की बाढ़ सी आ गई. घर में पहले जैसी सुख-शांति छा गई. 'वैभवलक्ष्मी व्रत' का प्रभाव देखकर मोहल्ले की दूसरी स्त्रियाँ भी विधिपूर्वक 'वैभवलक्ष्मी व्रत' करने लगीं.


VEERA LAKSHMI
GAJA LAKSHMI
SANTHANA LAKSHMI
शुभ
लाभ
VIJAYA LAKSHMI
DHANYA LAKSHMI
ADHI LAKSHMI
DHANA LAKSHMI
AISHWARYA LAKSHMI

श्री अष्टलक्ष्मी स्ओत्रम्

श्री आदिलक्ष्मी

सुमनसवंदित सुंदरि माधवि
चंद्र सहोदरि हेममये
मुनिगणवंदित मोक्ष प्रदायिनि
मंजुळभाषिणि वेदनुते
पंकज वासिनि देवसुपूजित
सद्गुणवष्रिणि शांतियुते
जय जय हे ! मधुसूदनकामिनि
आदिलक्ष्मी सदा पालयमां

श्री धान्यलक्ष्मी

अयिकलि कल्मषनाशिनि कामिनि
वैदिक रौपिणि वेदमये
क्षीर समुद्बव मंगळ रौपिणि
मंत्र निवासिनि मंत्रनुते
मंगळदायिनि अंबुजवासिनि
देवगणाश्रित पादयुते
जय जय हे ! मधुसौदनकामिनि
धान्यलक्ष्मी सदा पालयमां

श्री धैर्य लक्ष्मी

जयवरवर्णिनि वैष्णवि भार्गवि
मंत्र स्वरौपिणि मंत्रमये
सुरगण पौजित शीघ्रफलप्रद
ज्ञानविकासिनि शास्त्रनुते
भवभयहारिणि पाप विमोचनि
साधु जानाश्रित पादयुते
जय जय हे ! मधुसौदनकामिनि
धैर्यलक्ष्मी सदा पालयमां

श्री गजलक्ष्मी

जय जय दुर्गति नाशिनि कामिनि
सर्वफलप्रद शास्त्रमये

रथ गज तुरगपदाति समावृत
परिजन मंडित लोकनुते
हरिहरब्रह्म सुपोजित सेवित
तापनिवारिणि पादयुते
जय जय हे ! मधुसोदन कामिनि
गजलक्ष्मी रोपेण सदा पालयमां
श्री संतान लक्ष्मी
अयिखगवाहिनि मोहिनि चक्रिणि
रागविवर्दिनि ज्ञानमये
गुणगण वारिधि लोकहितैषिणि
स्वर सप्त भोषित गाननुते
सकल सुरासुर देव मुनीस्वर
मानव वंदित पादयुते
जय जय हे ! मधुसोदन कामिनि
संतानलक्ष्मी सदापालयमां
श्री विजयलक्ष्मी
जय कमलासिनि सद्गुणदायिनि
ज्ञान विकासिनि ज्ञानमये
अनुदिनमर्चित कुंकुमधोसर
भोषित वासित वाद्यनुते
कनकधारास्तुति वैभव वंदित
शंकर देशिक मान्यपदे
जय जय हे मधुसोदन कामिनि
विजयलक्ष्मी सदा पालयमां
श्री विद्यालक्ष्मी
प्रणत सुरेश्वरि ! भारति भार्गवि
शोकविनाशिनि रत्नमये
मणिमय भोषित कर्णविभूषण
शांति समावृत हास्यमुखे
नवनिधि दायिनि कलिमलहारिणि
कामित फलप्रद हस्तयुते

जय जय हे ! मधुसौदन कामिनि
विद्यालक्ष्मी सदा पालयमां
श्री धनलक्ष्मी
धिमि धिमि धिंदिमि धिंदिमि
दुंदुभि नाद संपूर्णमये
घम घम घुंघम घुंघम घुंघम
शंखनिनाद सुव्यादनुते
वेद पुराणेतिहास सुपौजित
वैदिकमार्ग प्रदर्शयुते
जय जय हे ! मधुसौदन कामिनि
धनलक्ष्मी रौपेण सदा पालयमां


श्री तुलसी देवी

।। श्री तुलसी विवाह कथा ।।

प्राचीन काल में जालंधर नामक राक्षस ने चारों तरफ़ बड़ा उत्पात मचा रखा था। वह बड़ा वीर तथा पराक्रमी था। उसकी वीरता का रहस्य था, उसकी पत्नी वृंदा का पतिव्रता धर्म। उसी के प्रभाव से वह सर्वजंयी बना हुआ था। जालंधर के उपद्रवों से परेशान देवगण भगवान विष्णु के पास गये तथा रक्षा की गुहार लगाई। उनकी प्रार्थना सुनकर भगवान विष्णु ने वृंदा का पतिव्रता धर्म भंग करने का निश्चय किया। उधर, उसका पति जालंधर, जो देवताओं से युद्ध कर रहा था, वृंदा का सतीत्व नष्ट होते ही मारा गया। जब वृंदा को इस बात का पता लगा तो क्रोधित होकर उसने भगवान विष्णु को शाप दे दिया, 'जिस प्रकार तुमने छल से मुझे पति वियोग दिया है, उसी प्रकार तुम भी अपनी स्त्री का छलपूर्वक हरण होने पर स्त्री वियोग सहने के लिए मृत्यु लोक में जन्म लोगे ।' यह कहकर वृंदा अपने पति के साथ सती हो गई। जिस जगह वह सती हुई वहाँ तुलसी का पौधा उत्पन्न हुआ। एक अन्य प्रसंग के अनुसार वृंदा ने विष्णु जी को यह शाप दिया था कि तुमने मेरा सतीत्व भंग किया है। अतः तुम पत्थर के बनोगे। विष्णु बोले, 'हे वृंदा! यह तुम्हारे सतीत्व का ही फल है कि तुम तुलसी बनकर मेरे साथ ही रहोगी। जो मनुष्य तुम्हारे साथ मेरा विवाह करेगा, वह परम धाम को प्राप्त होगा।' बिना तुलसी दल के शालिग्राम या विष्णु जी की पूजा अधूरी मानी जाती है। शालिग्राम और तुलसी का विवाह भगवान विष्णु और महालक्ष्मी के विवाह का प्रतीकात्मक विवाह है।

तुलसी विवाह व्रत कथा

प्राचीन ग्रंथों में तुलसी विवाह व्रत की अनेक कथाएं दी हुई हैं. उन कथाओं में से एक कथा निम्न है. इस कथा के अनुसार एक कुटुम्ब में ननद तथा भाभी साथ रहती थी. ननद का विवाह अभी नहीं हुआ था. वह तुलसी के पौधे की बहुत सेवा करती थी. लेकिन उसकी भाभी को यह सब बिलकुल भी पसन्द नहीं था. जब कभी उसकी भाभी को अत्यधिक क्रोध आता तब वह उसे ताना देते हुए कहती कि जब तुम्हारा विवाह होगा तो मैं तुलसी ही बारातियों को खाने को दूंगी और तुम्हारे दहेज में भी तुलसी ही दूंगी.

कुछ समय बीत जाने पर ननद का विवाह पक्का हुआ. विवाह के दिन भाभी ने अपनी कथनी अनुसार बारातियों के सामने तुलसी का गमला फोड़ दिया और खाने के लिए कहा. तुलसी की कृपा से वह फूटा हुआ गमला अनेकों स्वादिष्ट पकवानों में बदल गया. भाभी ने गहनों के नाम पर तुलसी की मंजरी से बने गहने पहना दिए. वह सब भी सुन्दर सोने – जवाहरात में बदल गए. भाभी ने वस्त्रों के स्थान पर तुलसी का जनेऊ रख दिया. वह रेशमी तथा सुन्दर वस्त्रों में बदल गया.

ननद की ससुराल में उसके दहेज की बहुत प्रशंसा की गई. यह बात भाभी के कानों तक भी पहुंची. उसे बहुत आश्चर्य हुआ. उसे अब तुलसी माता की पूजा का महत्व समझ आया. भाभी की एक लड़की थी. वह अपनी लड़की से कहने लगी कि तुम भी तुलसी की सेवा किया करो. तुम्हें भी बुआ की तरह फल मिलेगा. वह जबर्दस्ती अपनी लड़की से सेवा करने को कहती लेकिन लड़की का मन तुलसी सेवा में नहीं लगता था.

लड़की के बडी़ होने पर उसके विवाह का समय आता है. तब भाभी सोचती है कि जैसा व्यवहार मैने अपनी ननद के साथ किया था वैसा ही मैं अपनी लड़की के साथ भी करती हूं तो यह भी गहनों से लद जाएगी और बारातियों को खाने में पकवान मिलेंगें. ससुराल में इसे भी बहुत इज्जत मिलेगी. यह सोचकर वह बारातियों के सामने तुलसी का गमला फोड़ देती है. लेकिन इस बार गमले की मिट्टी, मिट्टी ही रहती है. मंजरी तथा पत्ते भी अपने रुप में ही रहते हैं. जनेऊ भी अपना रुप नहीम बदलता है. सभी लोगों तथा बारातियों द्वारा भाभी की बुराई की जाती है. लड़की के ससुराल वाले भी लड़की की बुराई करते हैं.

भाभी कभी ननद को नहीं बुलाती थी. भाई ने सोचा मैं बहन से मिलकर आता हूँ. उसने अपनी पत्नी से कहा और कुछ उपहार बहन के पास ले जाने की बात कही. भाभी ने थैले में ज्वार भरकर कहा कि और कुछ नहीं है तुम यही ले जाओ. वह दुखी मन से बहन के पास चल दिया. वह सोचता रहा कि कोई भाई अपने बहन के घर जुवार कैसे ले जा सकता है. यह सोचकर वह एक गौशला के पास रुका और जुवार का थैला गाय के सामने पलट दिया. तभी गाय पालने वाले ने कहा कि आप गाय के सामने हीरे-मोती तथा सोना क्यों डाल रहे हो. भाई ने सारी बात उसे बताई और धन लेकर खुशी से अपनी बहन के घर की ओर चल दिया. दोनों बहन-भाई एक-दूसरे को देखकर अत्यंत प्रसन्न होते हैं.

तुलसी विवाह की पूजन विधि :

कार्तिक मास के शुक्लपक्ष की एकादशी को तुलसी विवाह का उत्सव मनाया जाता है। तुलसी के पौधे को पवित्र और पूजनीय माना गया है। तुलसी की नियमित पूजा से हमें सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है। कार्तिक शुक्ल एकादशी पर तुलसी विवाह का विधिवत पूजन करने से भक्तों की सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

तुलसी विवाह की पूजन विधि

तुलसी विवाह के लिए तुलसी के पौधे का गमले को गेरु आदि से सजाकर उसके चारों ओर ईख (गन्ने) का मंडप बनाकर उसके ऊपर ओढ़नी या सुहाग की प्रतीक चुनरी ओढ़ाते हैं। गमले को साड़ी में लपेटकर तुलसी को चूड़ी पहनाकर उनका श्रृंगार करते हैं। श्री गणेश सहित सभी देवी-देवताओं का तथा श्री शालिग्रामजी का विधिवत पूजन करें। पूजन के करते समय तुलसी मंत्र (तुलस्यै नम:) का जप करें। इसके बाद एक नारियल दक्षिणा के साथ टीका के रूप में रखें। भगवान शालिग्राम की मूर्ति का सिंहासन हाथ में लेकर तुलसीजी की सात परिक्रमा कराएं। आरती के पश्चात विवाहोत्सव पूर्ण किया जाता है।

जैसे विवाह में जो सभी रीति-रिवाज होते हैं उसी तरह तुलसी विवाह के सभी कार्य किए जाते हैं। विवाह से संबंधित मंगल गीत भी गाए जाते हैं।

श्री तुलसी जी की आरती

तुलसी महारानी नमो-नमो, हरि की पटरानी नमो-नमो ।
धन तुलसी पूरन तप कीनो, शालिग्राम बनी पटरानी ।
जाके पत्र मंजर कोमल, श्रीपति कमल चरण लपटानी ।।
धूप-दीप-नैवेद्य आरती, पुष्पन की वर्षा बरसानी ।
छप्पन भोग छत्तीसों व्यंजन, बिन तुलसी हरि एक ना मानी ।।
सभी सखी मैया तेरो यश गावें, भक्तिदान दीजै महारानी ।
नमो-नमो तुलसी महारानी, नमो-नमो तुलसी महारानी ।।

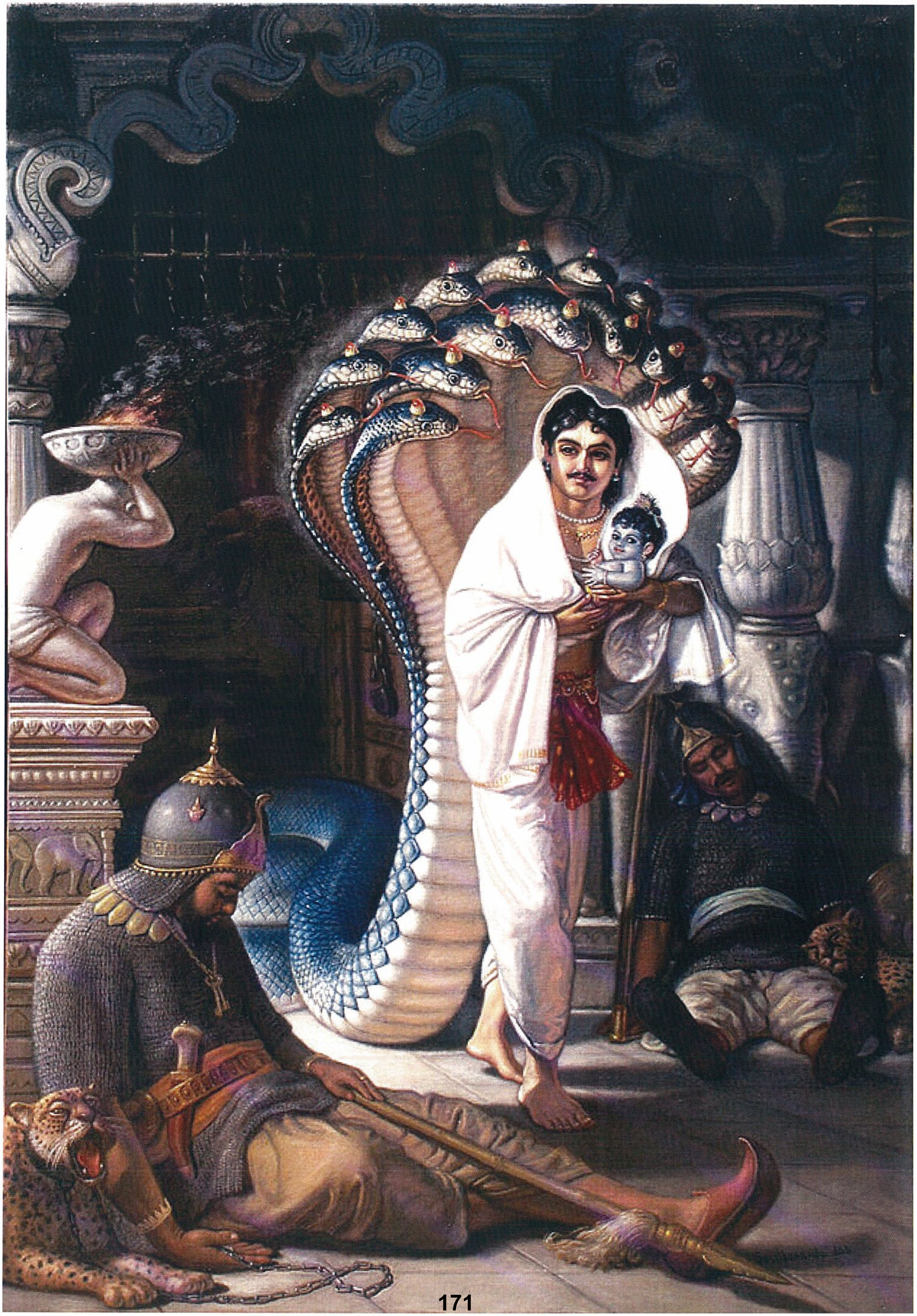

drikPanchang.com

गोवर्धन कथा प्रारम्भ

कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा के दिन गोवर्धन पूजा का विधान किया गया है। इसे अन्नकूट के नाम से भी अभिहित किया जाता है । उस दिन सभी देव-मन्दिरो मे अन्नकूट की सजावट की जाती है, जिसमे देवमूर्ति के समक्ष नाना प्रकार के पकवान बनाकर नैवेद्य के रूप मे अर्पित किए जाते है । इस श्रृंगार को देखने के लिए मन्दिरो मे उस दिन भारी भीड़ उमड़ पड़ती है।

पौराणिकमान्यता के अनुसार उस दिन ब्रजवासी नन्द बाबा के नेतृत्व मे इन्द्र की पूजा किया करते थे। जिसे इन्द्रयाग कहा जाता है । एक बार भगवान् श्री कृष्ण ने नन्दबाबा को इन्द्र की पूजा करने से रोक दिया । उन्होने कहा कि, सब लोग मिलकर गोवर्धन नाथ की पूजा करे तो विशेष लाभ होगा। उनके कथनानुसार सभी ब्रजवासियो ने वैसा ही किया और छप्पन भोग लगाकर गोवर्धन नाथ की पूजा की। इसके फल स्वरूप इन्द्र देव कुपित हो गए और उन्होने अपने मेघो को आदेश दिया कि, तुम लोग मूसलाधार वृष्टि करके समस्त ब्रजमण्डल को बहा दिया। मेघो ने लगातार सात दिनो तक ब्रज पर घनघोर वर्षा की ।
इस प्रकार का दृष्य देखकर भगवान् श्रीकृण ने गोवर्धन पर्वत को अपने हाथ की कानी उँगली पर धारण कर लिया। उस विशालकाय पर्वत के नीचे सभी गोपो को सुरक्षित रखा। भगवान् की इस अद्भुत लीला को देखकर आश्चर्यचकित हो इन्द्र घबरा उठा। इन्द्र को श्रीकृष्ण मे ईश्वरत्व का भान हुआ। उसने श्रीकृष्ण से क्षमा-याचना की और उनका दुग्धाभिषेक किया । वह अधिक दूध जिस स्थान मे बहकर एकत्रित हुआ, उसे सुरभि-कुण्ड के नाम से जाना जाता है । इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा इन्द्र का मान-मर्दन किये जाने पर अन्नकूट का त्योहार विजय-पर्व के रूप मे मनाया जाता है।

।। समाप्त ।।



कथा

इंद्र ने कहा- 'हे मुनियों में श्रेष्ठ! उस व्रत को बताएँ, जिस व्रत से मनुष्यों को मुक्ति, लाभ प्राप्त हो तथा भोग व मोक्ष भी प्राप्त हो जाए। इंद्र की बातों को सुनकर नारद जी ने कहा- 'त्रेता युग के अन्त में और द्वापर युग के प्रारंभ समय में निन्दित कर्म को करने वाला कंस नाम का एक अत्यंत पापी दैत्य हुआ। उस दुष्ट व दुराचारी कंस की देवकी नाम की एक सुंदर बहन थी। देवकी के गर्भ से उत्पन्न आठवाँ पुत्र कंस का वध करेगा।'

नारद जी की बातें सुनकर इंद्र ने कहा- 'उस दुराचारी कंस की कथा का विस्तारपूर्वक वर्णन करने की कृपा कीजिए। इंद्र की सन्देह भरी बातों को सुनकर नारदजी ने कहा - हे अदिति पुत्र इंद्र! एक बार उस दुष्ट कंस ने एक ज्योतिषी से पूछा - 'मेरी मृत्यु किस प्रकार और किसके द्वारा होगी।' ज्योतिषी बोले - 'हे दानवों में श्रेष्ठ कंस! वसुदेव की पत्नी देवकी जो वाकपटु है और आपकी बहन भी है। उसी के गर्भ से उत्पन्न उसका आठवां पुत्र जो कि शत्रुओं को भी पराजित कर इस संसार में 'कृष्ण' के नाम से विख्यात होगा, वही एक समय सूर्योदय काल में आपका वध करेगा।' ज्योतिषी की बातों को सुनकर कंस ने कहा - 'हे दैवज, अब आप यह बताएं कि देवकी का आठवां पुत्र किस मास में किस दिन मेरा वध करेगा।' ज्योतिषी बोले - 'हे महाराज! माघ मास की शुक्ल पक्ष की तिथि को सोलह कलाओं से पूर्ण श्रीकृष्ण से आपका युद्ध होगा। उसी युद्ध में वे आपका वध करेंगे। इसलिए हे महाराज! आप अपनी रक्षा करने का प्रबन्ध करें।' इतना बताने के पश्चात नारद जी ने इंद्र से कहा- 'ज्योतिषी द्वारा बताए गए समय पर ही कंस की मृत्यु कृष्ण के हाथ निःसंदेह होगी।' तब इंद्र ने कहा- 'हे मुनि! उस दुराचारी कंस की कथा का वर्णन कीजिए, और बताइए कि कृष्ण का जन्म कैसे होगा तथा कंस की मृत्यु कृष्ण द्वारा किस प्रकार होगी।'

नारदजी ने पुनः कहना प्रारंभ किया- 'उस दुराचारी कंस ने अपने एक द्वारपाल से कहा- 'मेरी इस प्राणों से प्रिय बहन की पूर्ण सुरक्षा करना।' द्वारपाल ने कहा- 'ऐसा ही होगा।' कंस के जाने के पश्चात उसकी छोटी बहन दुःखित होते हुए जल लेने के बहाने घड़ा लेकर तालाब पर गई। उस तालाब के किनारे एक वृक्ष के नीचे बैठकर देवकी रोने लगी। उसी समय यशोदा नामक एक सुंदर स्त्री ने देवकी से प्रिय वाणी में कहा- 'हे देवी! इस प्रकार तुम क्यों विलाप कर रही हो।' तब दुखी देवकी ने यशोदा से कहा- 'हे बहन! नीच कर्मों में आसक्त दुराचारी मेरा ज्येष्ठ भ्राता कंस है। उस दुष्ट भ्राता ने मेरे कई पुत्रों का वध कर दिया। इस समय मेरे गर्भ में आठवाँ पुत्र है। वह इसका भी वध कर डालेगा, क्योंकि मेरे ज्येष्ठ भ्राता को यह भय है कि मेरे अष्टम पुत्र से उसकी मृत्यु अवश्य होगी।'

तब यशोदा ने कहा- 'हे बहन! विलाप मत करो। मैं भी गर्भवती हूँ। यदि मुझे कन्या हुई तो तुम अपने पुत्र के बदले उस कन्या को ले लेना। इस प्रकार तुम्हारा पुत्र कंस के हाथों मारा नहीं जाएगा।'

तदनन्तर कंस ने अपने द्वारपाल से पूछा- 'देवकी कहाँ है? इस समय वह दिखाई नहीं दे रही है।' तब द्वारपाल ने कंस से नम्रवाणी में कहा- 'हे महाराज! आपकी बहन जल लेने तालाब पर गई हुई हैं।' यह सुनते ही कंस क्रोधित हो उठा और उसने द्वारपाल को उसी स्थान पर जाने को कहा जहां वह गई हुई है। द्वारपाल की दृष्टि तालाब के पास देवकी पर पड़ी। तब उसने कहा कि 'आप किस कारण से यहाँ आई हैं।' उसकी बातें सुनकर देवकी ने कहा कि 'मेरे घर में जल नहीं था, मैं जल लेने जलाशय पर

आई हूँ।' इसके पश्चात देवकी अपने घर की ओर चली गई।
कंस ने पुनः द्वारपाल से कहा कि इस घर में मेरी बहन की तुम पूर्णतः रक्षा करो। अब कंस को इतना भय लगने लगा कि घर के भीतर दरवाजों में विशाल ताले बंद करवा दिए और दरवाजे के बाहर दैत्यों और राक्षसों को पहरेदारी के लिए नियुक्त कर दिया। कंस हर प्रकार से अपने प्राणों को बचाने के प्रयास कर रहा था। एक समय सिंह राशि के सूर्य में आकाश मंडल में जलाधारी मेघों ने अपना प्रभुत्व स्थापित किया। भादों मास की कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि को घनघोर अर्द्धरात्रि थी। उस समय चंद्रमा भी वृष राशि में था, रोहिणी नक्षत्र बुधवार के दिन सौभाग्ययोग से संयुक्त चंद्रमा के आधी रात में उदय होने पर आधी रात के उत्तर एक घड़ी जब हो जाए तो 'श्रुति-स्मृति पुराणोक्त' फल निःसंदेह प्राप्त होता है।

नारदजी ने पुनः इंद्र से कहा- 'ऐसे 'विजय' नामक शुभ मुहूर्त में श्रीकृष्ण का जन्म हुआ और श्रीकृष्ण के प्रभाव से ही उसी क्षण बन्दीगृह के दरवाजे स्वयं खुल गए। द्वार पर पहरा देने वाले पहरेदार राक्षस सभी मूर्च्छित हो गए। देवकी ने उसी क्षण अपने पति वसुदेव से कहा-'हे स्वामी! आप निद्रा का त्याग करें और मेरे इस पुत्र को गोकुल में ले जाएँ, वहाँ इस पुत्र को नंद गोप की धर्मपत्नी यशोदा को दे दें। उस समय यमुनाजी पूर्णरूप से बाढ़ग्रस्त थीं, किन्तु जब वसुदेवजी बालक कृष्ण को सूप में लेकर यमुनाजी को पार करने के लिए उतरे उसी क्षण बालक के चरणों का स्पर्श होते ही यमुनाजी अपने पूर्व स्थिर रूप में आ गई। किसी प्रकार वसुदेवजी गोकुल पहुँचे और नंद के घर में प्रवेश कर उन्होंने अपना पुत्र तत्काल उन्हें दे दिया और उसके बदले में उनकी कन्या ले ली। वे तत्काल वहां से वापस आकर कंस के बंदी गृह में पहुँच गए।

प्रातःकाल जब सभी राक्षस पहरेदार निद्रा से जागे तो कंस ने द्वारपाल से पूछा कि अब देवकी के गर्भ से क्या हुआ? इस बात का पता लगाकर मुझे बताओ। द्वारपालों ने महाराज की आज्ञा को मानते हुए कारागार में जाकर देखा तो वहाँ देवकी की गोद में एक कन्या थी। जिसे देखकर द्वारपालों ने कंस को सूचित किया, किन्तु कंस को तो उस कन्या से भय होने लगा। अतः वह स्वयं कारागार में गया और उसने देवकी की गोद से कन्या को झपट लिया और उसे एक पत्थर की चट्टान पर पटक दिया किन्तु वह कन्या विष्णु की माया से आकाश की ओर चली गई और अंतरिक्ष में अदृश्य हो गई।
उसने आकाशवाणी कर कंस से कहा कि 'हे दुष्ट! तुझे मारने वाला गोकुल में नंद के घर में उत्पन्न हो चुका है और उसी से तेरी मृत्यु सुनिश्चित है। मेरा नाम तो वैष्णवी है, मैं संसार के कर्ता भगवान विष्णु की माया से उत्पन्न हुई हूँ।' उस आकाशवाणी को सुनकर कंस क्रोधित हो उठा। उसने नंद के घर में पूतना राक्षसी को कृष्ण का वध करने के लिए भेजा किन्तु जब वह राक्षसी कृष्ण को स्तनपान कराने लगी तो कृष्ण ने उसके स्तन से उसके प्राणों को खींच लिया और वह राक्षसी कृष्ण-कृष्ण कहते हुए मृत्यु को प्राप्त हुई।

जब कंस को पूतना की मृत्यु का समाचार प्राप्त हुआ तो उसने कृष्ण का वध करने के कई दैत्यों को भेजा, किन्तु सभी कृष्ण के हाथों मृत्यु को प्राप्त हुए। इसके पश्चात कंस ने काल्याख्य नामक दैत्य को कौवे के रूप में भेजा, किन्तु वह भी कृष्ण के हाथों मारा गया। अपने बलवान राक्षसों की मृत्यु के आघात से कंस अत्यधिक भयभीत हो गया। उसने द्वारपालों को आज्ञा दी कि नंद को तत्काल मेरे समक्ष उपस्थित करो। द्वारपाल नंद को लेकर जब उपस्थित हुए तब कंस ने नंद से कहा कि यदि तुम्हें अपने प्राणों को बचाना है तो पारिजात के पुष्प ले लाओ। यदि तुम नहीं ला पाए तो तुम्हारा वध निश्चित है।

कंस की बातों को सुनकर नंद ने 'ऐसा ही होगा' कहा और अपने घर की ओर चले गए। घर आकर उन्होंने संपूर्ण वृत्तांत अपनी पत्नी यशोदा को सुनाया, जिसे श्रीकृष्ण भी सुन रहे थे। एक दिन श्रीकृष्ण अपने मित्रों के साथ यमुना नदी के किनारे गेंद खेल रहे थे और अचानक स्वयं ने ही गेंद को यमुना में फेंक दिया। यमुना में गेंद फेंकने का मुख्य उद्देश्य यही था कि वे किसी प्रकार पारिजात पुष्पों को ले आएँ। अतः वे कदम्ब के वृक्ष पर चढ़कर यमुना में कूद पड़े।

यह समाचार 'श्रीधर' नामक गोपाल ने यशोदा को सुनाया। यह सुनकर यशोदा भागती हुई यमुना नदी के किनारे आ पहुँची और उसने यमुना नदी की प्रार्थना करते हुए कहा- 'हे यमुना! यदि मैं बालक को देखूँगी तो भाद्रपद मास की रोहिणी युक्त अष्टमी का व्रत अवश्य करूंगी।
हज़ारों अश्वमेध यज्ञ, सहस्रों राजसूय यज्ञ, दान तीर्थ और व्रत करने से जो फल प्राप्त होता है, वह सब कृष्णाष्टमी के व्रत को करने से प्राप्त हो जाता है। यह बात नारद ऋषि ने इंद्र से कही। इंद्र ने कहा- 'हे मुनियों में श्रेष्ठ नारद! यमुना नदी में कूदने के बाद उस बालरूपी कृष्ण ने पाताल में जाकर क्या किया?' नारद ने कहा- 'हे इंद्र! पाताल में उस बालक से नागराज की पत्नी ने कहा कि तुम यहाँ क्या कर रहे हो, कहाँ से आए हो और यहाँ आने का क्या प्रयोजन है?'

नागपत्नी बोली- 'हे कृष्ण! क्या तूने द्यूतक्रीड़ा की है, जिसमें अपना समस्त धन हार गया है। यदि यह बात ठीक है तो कंकड़, मुकुट और मणियों का हार लेकर अपने घर में चले जाओ क्योंकि इस समय मेरे स्वामी शयन कर रहे हैं। यदि वे उठ गए तो वे तुम्हारा भक्षण कर जाएँगे।' नागपत्नी की बातें सुनकर कृष्ण ने कहा- 'हे कान्ते! मैं किस प्रयोजन से यहाँ आया हूँ, वह वृत्तांत मैं तुम्हें बताता हूँ। समझ लो मैं कालिय नाग के मस्तक को कंस के साथ द्यूत में हार चुका हू और वही लेने मैं यहाँ आया हूँ।' बालक कृष्ण की इस बात को सुनकर नागपत्नी अत्यंत क्रोधित हो उठी और अपने सोए हुए पति को उठाते हुए उसने कहा- 'हे स्वामी! आपके घर यह शत्रु आया है। अतः आप इसका हनन कीजिए।'
अपनी स्वामिनी की बातों को सुनकर कालिया नाग निन्द्रावस्था से जाग पड़ा और बालक कृष्ण से युद्ध करने लगा। इस युद्ध में कृष्ण को मूर्च्छा आ गई, उसी मूर्छा को दूर करने के लिए उन्होंने गरुड़ का स्मरण किया। स्मरण होते ही गरुड़ वहाँ आ गए। श्रीकृष्ण अब गरुड़ पर चढ़कर कालिया नाग से युद्ध करने लगे और उन्होंने कालिय नाग को युद्ध में पराजित कर दिया।

कालिया को यह ज्ञात ह गया की श्रीकृष्ण भगवान विष्णु का ही अवतार हैं। अतः उन्होंने कृष्ण के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया और पारिजात से उत्पन्न बहुत से पुष्पों को मुकुट में रखकर कृष्ण को भेंट किया। जब कृष्ण चलने को हुए तब कालिया नाग की पत्नी ने कहा- 'हे स्वामी! मैं कृष्ण को नहीं जान पाई। हे जनार्दन मंत्र रहित, क्रिया रहित, भक्तिभाव रहित मेरी रक्षा कीजिए। हे प्रभु! मेरे स्वामी मुझे वापस दे दें।' तब श्रीकृष्ण ने कहा- 'हे सर्पिणी! दैत्यों में जो सबसे बलवान हैं, उस कंस के सामने मैं तेरे पति को ले जाकर छोड़ दूँगा अन्यथा तुम अपने घर को चली जाओ।' अब श्रीकृष्ण कालिया नाग के फन पर नृत्य करते हुए यमुना के ऊपर आ गए।

तदनन्तर कालिया की फुंकार से तीनों लोक कम्पायमान हो गए। अब कृष्ण कंस की मथुरा नगरी को चल दिए। वहां कमलपुष्पों को देखकर यमुना के मध्य जलाशय में वह कालिया सर्प भी चला गया।

इधर कंस भी विस्मित हो गया तथा कृष्ण प्रसन्नचित्त होकर गोकुल लौट आए। उनके गोकुल आने पर उनकी माता यशोदा ने विभिन्न प्रकार के उत्सव किए। अब इंद्र ने नारदजी से पूछा- 'हे महामुने! संसार के प्राणी बालक श्रीकृष्ण के आने पर अत्यधिक आनंदित हुए। आखिर श्रीकृष्ण ने क्या-क्या चरित्र किया? वह सभी आप मुझे बताने की कृपा करें।' नारद ने इंद्र से कहा- 'मन को हरने वाला मथुरा नगर यमुना नदी के दक्षिण भाग में स्थित है। वहां कंस का महाबलशाली भाई चाणूर रहता था। उस चाणूर से श्रीकृष्ण के मल्लयुद्ध की घोषणा की गई। हे इंद्र! कृष्ण एवं चाणूर का मल्लयुद्ध अत्यंत आश्चर्यजनक था। चाणूर की अपेक्षा कृष्ण बालरूप में थे। भेरी, शंख और मृदंग के शब्दों के साथ कंस और केशी इस युद्ध को मथुरा की जनसभा के मध्य में देख रहे थे। रंगशाला के अखाड़े में चाणूर, मुष्टिक, शल, तोषल आदि बड़े-बड़े भयंकर पहलवान दंगल के लिए प्रस्तुत थे। महाराज कंस अपने बड़े-बड़े नागरिकों तथा मित्रों के साथ उच्च मञ्च पर विराजमान यह सब दृश्य देख रहा था।

रंगशाला में प्रवेश करते ही श्रीकृष्ण ने अनायास ही धनुष को अपने बायें हाथ से उठा लिया। पलक झपकते ही सबके सामने उसकी डोरी चढ़ा दी तथा डोरी को ऐसे खींचा कि वह धनुष भयंकर शब्द करते हुए टूट गया। धनुष की रक्षा करने वाले सारे सैनिकों को दोनों भाईयों ने ही मार गिराया। कुवलयापीड़ का वध कर श्रीकृष्ण ने उसके दोनों दाँतों को उखाड़ लिया और उससे महावत एवं अनेक दुष्टों का संहार किया। कुछ सैनिक भाग खड़े हुए और महाराज कंस को सारी सूचनाएँ दीं, तो कंस ने क्रोध से दाँत पीसते हुए चाणूर मुष्टिक को शीघ्र ही दोनों बालकों का वध करने के लिए कहा। इतने में श्रीकृष्ण एवं बलदेव अपने अंगों पर खून के कुछ छींटे धारण किये हुए हाथी के विशाल दांतों को अपने कंधे पर धारण कर मुसकुराते हुए अखाड़े के समीप पहुँचे। चाणूर और मुष्टिक ने उन दोनों भाईयों को मल्लयुद्ध के लिए ललकारा। नीति विचारक श्रीकृष्ण ने अपने समान आयु वाले मल्लों से लड़ने की बात कही। किन्तु चाणूर ने श्रीकृष्ण को और मुष्टिक ने बलराम जी को बड़े दर्प से, महाराज कंस का मनोरंजन करने के लिए ललकारा। श्रीकृष्ण–बलराम तो ऐसा चाहते ही थे। इस प्रकार मल्लयुद्ध आरम्भ हो गया।

श्रीकृष्ण ने चाणूर और बलरामजी ने मुष्टिक को पछाड़कर उनका वध कर दिया। तदनन्तर कूट, शल, तोषल आदि भी मारे गये। इतने में कंस ने क्रोधित होकर श्रीकृष्ण–बलदेव और नन्द–वसुदेव सबको बंदी बनाने के लिए आदेश दिया। किन्तु, सबके देखते ही देखते बड़े वेग से उछलकर श्रीकृष्ण उसके मञ्च पर पहुँच गये और उसकी चोटी पकड़कर नीचे गिरा दिया तथा उसकी छाती के ऊपर कूद गये, जिससे उसके प्राण पखेरू उड़ गये। इस प्रकार कंस मारा गया। श्रीकृष्ण ने रंगशाला में अनुचरों के साथ कंस का उद्धार किया। कंस के पूजित शंकर जी इस रंग को देखकर कृत-कृत्य हो गये। इसलिए उनका नाम श्रीरंगेश्वर हुआ। यह स्थान आज भी कृष्ण की इस रंगमयी लीला की पताका फहरा रहा है। श्रीमद्भागवत के अनुसार तथा श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती पाद के विचार से कंस का वध शिवरात्रि के दिन हुआ था। क्योंकि कंस ने अक्रूर को एकादशी की रात अपने घर बुलाया तथा उससे मन्त्रणा की थी।

श्रीकृष्ण ने अपने पैरों को चाणूर के गले में फँसाकर उसका वध कर दिया। चाणूर की मृत्यु के पश्चात उनका मल्लयुद्ध केशी के साथ हुआ।

हे इंद्र! उसी क्षण श्रीकृष्ण ने गरुड़, बलराम तथा सुदर्शन चक्र का ध्यान किया, जिसके परिणामस्वरूप बलदेवजी सुदर्शन चक्र लेकर गरुड़ पर आरूढ़ होकर आए। उन्हें आता देख बालक कृष्ण ने सुदर्शन चक्र को उनसे लेकर स्वयं गरुड़ की पीठ पर बैठकर न जाने कितने ही राक्षसों और दैत्यों का वध कर दिया, कितनों के शरीर अंग-भंग कर दिए। बलरामजी ने अपने आयुध शस्त्र हल से और कृष्ण ने सुदर्शन चक्र से माघ मास की शुक्ल पक्ष की सप्तमी को विशाल दैत्यों के समूह का सर्वनाश किया।

उपवास और पूजन विधि

इस कथा को सुनने के पश्चात इंद्र ने नारदजी से कहा- हे ऋषि इस कृष्ण जन्माष्टमी का पूर्ण विधान बताएं एवं इसके करने से क्या पुण्य प्राप्त होता है, इसके करने की क्या विधि है?

नारदजी ने कहा- हे इंद्र! भाद्रपद मास की कृष्णजन्माष्टमी को इस व्रत को करना चाहिए। उस दिन ब्रह्मचर्य आदि नियमों का पालन करते हुए श्रीकृष्ण का स्थापन करना चाहिए। सर्वप्रथम श्रीकृष्ण की मूर्ति स्वर्ण कलश के ऊपर स्थापित कर चंदन, धूप, पुष्प, कमलपुष्प आदि से श्रीकृष्ण प्रतिमा को वस्त्र से वेष्टित कर विधिपूर्वक अर्चन करें। गुरुचि, छोटी पीतल और सौंठ को श्रीकृष्ण के आगे अलग-अलग रखें। इसके पश्चात भगवान विष्णु के दस रूपों को देवकी सहित स्थापित करें।

हरि के सान्निध्य में भगवान विष्णु के दस अवतारों, गोपिका, यशोदा, वसुदेव, नंद, बलदेव, देवकी, गायों, वत्स, कालिया, यमुना नदी, गोपगण और गोपपुत्रों का पूजन करें। इसके पश्चात आठवें वर्ष की समाप्ति पर इस महत्त्वपूर्ण व्रत का उद्यापन कर्म भी करें।

यथाशक्ति विधान द्वारा श्रीकृष्ण की स्वर्ण प्रतिमा बनाएँ। इसके पश्चात 'मत्स्य कूर्म' इस मंत्र द्वारा अर्चनादि करें। आचार्य ब्रह्मा तथा आठ ऋत्विजों का वैदिक रीति से वरण करें। प्रतिदिन ब्राह्मण को दक्षिणा और भोजन देकर प्रसन्न करें।

पूर्ण विधि

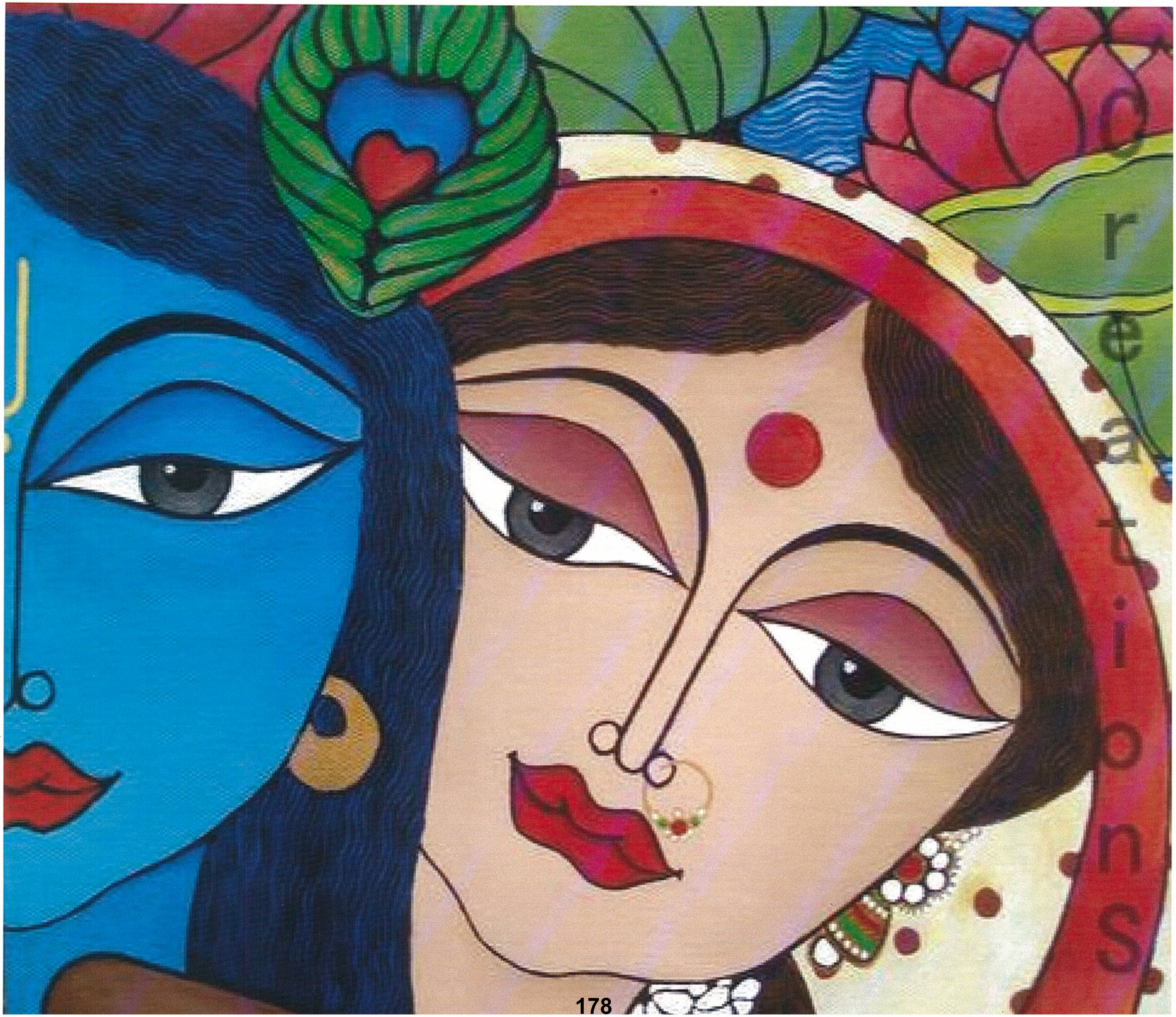
उपवास की पूर्व रात्रि को हल्का भोजन करें और ब्रह्मचर्य का पालन करें। उपवास के दिन प्रातःकाल स्नानादि नित्यकर्मों से निवृत्त हो जाएँ। पश्चात सूर्य, सोम, यम, काल, संधि, भूत, पवन, दिक्‌पति, भूमि, आकाश, खेचर, अमर और ब्रह्मादि को नमस्कार कर पूर्व या उत्तर मुख बैठें। इसके बाद जल, फल, कुश और गंध लेकर संकल्प करें- ममखिलपापप्रशमनपूर्वक सर्वाभीष्ट सिद्धये श्रीकृष्ण जन्माष्टमी व्रतमहं करिष्ये॥

अब मध्याह्न के समय काले तिलों के जल से स्नान कर देवकी जी के लिए 'सूतिकागृह' नियत करें। तत्पश्चात भगवान श्रीकृष्ण की मूर्ति या चित्र स्थापित करें। मूर्ति में बालक श्रीकृष्ण को स्तनपान कराती हुई देवकी हों और लक्ष्मीजी उनके चरण स्पर्श किए हों अथवा ऐसे भाव हो। इसके बाद विधि-विधान से पूजन करें। पूजन में देवकी, वसुदेव, बलदेव, नंद, यशोदा और लक्ष्मी इन सबका नाम क्रमशः निर्दिष्ट करना चाहिए। फिर निम्न मंत्र से पुष्पांजलि अर्पण करें- 'प्रणमे देव जननी त्वया जातस्तु वामनः। वसुदेवात तथा कृष्णो नमस्तुभ्यं नमो नमः। सुपुत्रार्घ्यं प्रदत्तं में गृहाणेमं नमोऽस्तु ते।'

अंत में प्रसाद वितरण कर भजन-कीर्तन करते हुए रतजगा करें।

पूजन फल

जो व्यक्ति जन्माष्टमी के व्रत को करता है, वह ऐश्वर्य और मुक्ति को प्राप्त करता है। आयु, कीर्ति, यश, लाभ, पुत्र व पौत्र को प्राप्त कर इसी जन्म में सभी प्रकार के सुखों को भोग कर अंत में मोक्ष को प्राप्त करता है। जो मनुष्य भक्तिभाव से श्रीकृष्ण की कथा को सुनते हैं, उनके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। वे उत्तम गति को प्राप्त करते हैं।



Radhashtami Vrat Vidhi (Radha Ashtami Janaam Katha)

भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी श्री कृष्ण जन्माष्टमी कहलाती है और भाद्रपद माह के शुक्ल पक्ष की अष्टमी राधा अष्टमी के नाम से विख्यात है(Ashtami of Bhadrapad Krishna Paksha is called Shri Krishna Janmashtami and Ashtami of Bhadrapad Shukla Paksha is called Radha Ashtami). वर्ष 2011 में यह राधा अष्टमी व्रत 4 सितम्बर की रहेगी. इसी दिन श्री महालक्ष्मी जी का व्रत भी प्रारम्भ होता है.

भगवान श्री कृष्ण के विषय में यह कहा जाता है, कि जो राधा का स्मरण करता है. भगवान श्री कृष्ण उससे स्वत: प्रसन्न होते है. प्राचीन पुराण श्री मदभागवत के अनुसार भगवान श्री कृष्ण ही एकमात्र भगवान है, बाकि सभी उनके अंश मात्र है. श्री राधा अष्टमी व्रत भादों मास के शुक्ल पक्ष की अष्टम को किया जाता है.

इस दिन राधा जी का जन्म हुआ था. इसलिए इसलिए यह दिन राधा के जन्मोत्सव के रुप में मनाया जाता है. व्रत के दिन राधा-कृष्ण जी की विशेष पूजा की जाती है. और राधा जी को पंचामृत से स्नान कराया जाता है. इस दिन पूजा करने और व्रत करने से मनुष्य को सभी पापों से मुक्ति मिलती है. और वह इस लोक के साथ साथ परलोक में भी सुख भोगता है.

राधा अष्टमी जन्मस्थली वृंदावन | Radha Ashtami Birth Place: Vrindavan

भारत के सभी क्षेत्रों में भगवान श्री कृष्ण की किसी न किसी रुप में पूजा की जाती है. भगवान श्री कृष्ण के कई रुप है. भगवान श्री कृष्ण का 16 हजार गोपियों से विवाह हुआ है(Lord Shri Krishna was married to 16000 Gopis). परन्तु श्री कृष्ण प्रिया केवल एक ही है. जिन्हें राधा के नाम से जाना जाता है. राधा का जन्म उत्तर प्रदेश के वृंदावन गांव में हुआ था. राधा अष्टमी का दिन एक धार्मिक पर्व के रुप में मनाया जाता है. इस दिन उत्सव और व्रत दोनों एक साथ होने के कारण श्रद्वा और हर्ष का माहौळ होता है. वृंदावन क्योकि राधा की जन्म स्थली रही है, इसलिये इस अवसर पर यहां विशेष धूमधाम देखने को मिलती है. ऐसे में यहां पर कई मेलों का आयोजन किया जाता है. और रास-रंग के कार्यक्रम आयोजित किये जाते है. भजन, कीर्तन और संगीत के कार्यक्रम भी अनायास ही मनमोह लेते है.

महर्षि वेद व्यास जी के अनुसार श्री राधा जी भगवान श्री कृष्ण की आत्मा है. राधा का निवास भगवान श्री कृष्ण के हृदय में है. वे भगवान कृष्ण कि प्रियसी भी है, नायिका भी है, और आराध्या भी है. यहां तक की देवी राधा को ब्रह्मा जी व भगवान शिव के लिये भी वंदनीय कहा गया है.

राधा जन्म कथा | Radha Janam Katha in Hindi

राधा जन्म के विषय में के पौराणिक कथा प्रसिद्ध है, कि एक बार राधा के पिता वृषभानु भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी के दिन एक सरोवर के निकट से गुजर रहे थें, कि उन्हें एक बालिका कमल के फूल पर तैरती हुई मिली, जिसे उन्होनें पुत्री के रुप में अपना लिया. कहा जाता है, कि राधा आयु में श्री कृष्ण से ग्यारह माह बडी थी. वे बचपन से ही भगवान श्री कृष्ण की अनन्य भक्त थी.
श्री राधा का जन्म दिवस बरसाने के ब्रहोश्वरगिरी मंदिर में सैंकडों वर्षों से प्रत्येक वर्ष बडी धूमधाम से मनाया जाता है. इस स्थान पर भाद्रपद एकादशी से लेकर भाद्रपद की चतुर्दशी के मध्य की अवधि में एक आध्यात्मिक मेले का आयोजन किया जाता है. राधा और कृष्ण से जुडे अन्य स्थलों में भी समारोह व मेलों का आयोजन किया जाता है.
बरसाने के अलावा श्री राधा अष्टमी वृन्दावन में भी धूमधाम से मनाई जाती है. यहां राधा रानी के जन्म की खुशी में नृत्य और संगीत का आयोजन किया जाता है. इस दिन यह शहर एक दुल्हन सा सुंदर प्रतीत होता है. श्री राधा अष्टमी के दिन बरसाने का राधा मंदिर फूलों से सजाया जाता है. राधा जी को लड्डूओं का भोग लगाया जाता है. छप्पन भोग बनाकर राधा जी को नैवेद्ध अर्पित किया जाता है. भोग लगाने के बाद यह प्रसाद मोर को खिला दिया जाता है.

राधाष्टमी आरती

भाद्रपद माह की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को कृष्ण प्रिया राधा जी का जन्म हुआ था।इसलिए यह दिन राधाष्टमी के रुप में मनाया जाता है।इस दिन राधा कृष्ण की पूजा करनी चाहिए।राधा जी को पंचामृत से स्नान कराकर उनका शृगांर करें।भोग लगाए फिर धूप दीप फूल आदि से आरती करें।

आरती राधा जी की

आरती राधा जी की कीजै।टेक

कृष्ण सगं जो करे निवासा, कृष्ण करें जिन पर विश्वासा।

आरती वृषभानु लली की कीजै।

कृष्णचन्द्र की करी सहाई, मुहँ में आनि रुप दिखाई।

उस शक्ति की आरती कीजै।आरती....

नन्द पुत्र से प्रीति बढाई, जमुना तट पर रास रचाई।

आरती उस रास रचाई की कीजै।आरती....

प्रेम राह जिसने बतलाई, निर्गुण भक्ति नहीं अपनाई।

आरती राधा जी की कीजै।आरती....

दुनिया की जो रक़्शा करती,भक्तजनों के दुख सब हरती।आरती दुःख हरणी जी की कीजै।आरती....

कृष्णचन्द्र ने प्रेम बढाया,विपिन बीच में रास रचाया।

आरती कृष्ण प्रिया की कीजै।आरती....

दुनिया की जो जननी कहावे,निज पुत्रों को धीर बंधावे।

आरती जगत मात की कीजै।आरती....

निज पुत्रों के काज संवारे,भक्त जनों के कष्ट निवारे।

आरती विश्वमात की कीजै।आरती....

श्री कुंज बिहारी जी की आरती

आरती कुंज बिहारी की, श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की ।
गले मे वैजन्ती माला, बजावै मुरली मधुर बाला ।
श्रवण मे कुण्डल झलकता, नन्द के आनन्द नन्दलाला,
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की ।।
गगन सम अंग कान्ति काली, श्रीराधा चमक रही आली ।
भ्रमर सम अलक, कस्तुरी तिलक, चन्द्र सी झलक ।।
अमित छवि श्यामा प्यारी की, श्रीगिरधर कृष्णमुरारी की ।
कनकमय मोर मुकुट बिलसै, देवता दर्शन को तरसै ।।
गगन सूं सुमन बहुत बरसै ।
बजे मुखहचंग, और मृदंग, ग्वालिनि संग,
लाज रख गोपकुमारी की, श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की ।
जहाँ सूं निकली भव गंगा, या कलि मल हरनी श्री गंगा ।
सोई युग चरन, कमल के वरन, लही हम शरन ।
राधिका गौर श्याम पद की, कि छवि निरखूं बनवारी की ।
आरती कुंज बिहारी की, श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की ।

आरती श्री कृष्ण जी की

ओउम् जय श्री कृष्ण हरे,
प्रभू जय श्री कृष्ण हरे।
भक्तन के दुख सारे पल में दूर करे।
परमानन्द मुरारी मोहन गिरधारी।
जय रस रास बिहारी जय जय गिरधारी।
कर कंकन कटि सोहत कानन में बाला।
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे बनमाला।
दीन सुदामा तारे दरिद्रों के दुख टारे।
गज के फन्द छुड़ाए भव सागर तारे।
हिरण्यकश्यप संहारे नरहरि रूप धरे।
पाहन से प्रभू प्रगटे जम के बीच परे।
केशी कंस विदारे नल कूबर तारे।
दामोदार छवि सुन्दर भगतन के प्यारे।
काली नाग नथैया नटवर छवि सोहे।
फन–फन नाचा करते नागन मन मोहे।
राज्य उग्रसेन पाये माता शोक हरे।
द्रुपद सुता पत राखी करुणा लाज भरे।
ओउम् जय श्री कृष्ण हरे,

श्री युगलकिशोर की आरती

आरती युगल किशोर की कीजै,
तन मन धन न्यौछावर कीजै। आरती...

गौर श्याम मुख निरखत रीझे,
हरि को स्वरूप नयन भरि पीजै। आरती...

रवि शशि कोटि बदन की शोभा,
ताहि निरखि मेरा मन लोभा। आरती...

ओढे नील पीत पट सारी,
कुंज बिहारी गिरवर धारी। आरती...

फूलन की सेज फूलन की माला,
रत्न सिंहासन बैठे नन्दलाला। आरती...

मोर मुकुट मुरली कर सोहै,
नटवर कला देखि मन मोहै। आरती...

कंचन थार कपूर की बाती,
हरि आये निर्मल भई छाती। आरती...

श्री पुरुषोत्तम गिरवरधारी,
आरती करें सकल ब्रजनारी। आरती...

नन्द नन्दन वृषभानु किशोरी,
परमानन्द स्वामी अविचल जोरी। आरती...



महाशिवरात्रि की व्रत-कथा

एक बार पार्वती ने भगवान शिवशंकर से पूछा, 'ऐसा कौन सा श्रेष्ठ तथा सरल व्रत-पूजन है, जिससे मृत्यु लोक के प्राणी आपकी कृपा सहज ही प्राप्त कर लेते हैं?'

उत्तर में शिवजी ने पार्वती को 'शिवरात्रि' के व्रत का विधान बताकर यह कथा सुनाई- 'एक गाँव में एक शिकारी रहता था। पशुओं की हत्या करके वह अपने कुटुम्ब को पालता था। वह एक साहूकार का ऋणी था, लेकिन उसका ऋण समय पर न चुका सका। क्रोधवश साहूकार ने शिकारी को शिवमठ में बंदी बना लिया। संयोग से उस दिन शिवरात्रि थी।

शिकारी ध्यानमग्न होकर शिव संबंधी धार्मिक बातें सुनता रहा। चतुर्दशी को उसने शिवरात्रि की कथा भी सुनी। संध्या होते ही साहूकार ने उसे अपने पास बुलाया और ऋण चुकाने के विषय में बात की। शिकारी अगले दिन सारा ऋण लौटा देने का वचन देकर बंधन से छूट गया।

अपनी दिनचर्या की भाँति वह जंगल में शिकार के लिए निकला, लेकिन दिनभर बंदीगृह में रहने के कारण भूख-प्यास से व्याकुल था। शिकार करने के लिए वह एक तालाब के किनारे बेल वृक्ष पर पड़ाव बनाने लगा। बेल-वृक्ष के नीचे शिवलिंग था जो बिल्वपत्रों से ढँका हुआ था। शिकारी को उसका पता न चला।

पड़ाव बनाते समय उसने जो टहनियाँ तोड़ीं, वे संयोग से शिवलिंग पर गिरीं। इस प्रकार दिनभर भूखे-प्यासे शिकारी का व्रत भी हो गया और शिवलिंग पर बेलपत्र भी चढ़ गए।

एक पहर रात्रि बीत जाने पर एक गर्भिणी मृगी तालाब पर पानी पीने पहुँची। शिकारी ने धनुष पर तीर चढ़ाकर ज्यों ही प्रत्यंचा खींची, मृगी बोली, 'मैं गर्भिणी हूँ। शीघ्र ही प्रसव करूँगी। तुम एक साथ दो जीवों की हत्या करोगे, जो ठीक नहीं है। मैं अपने बच्चे को जन्म देकर शीघ्र ही तुम्हारे सामने प्रस्तुत हो जाऊँगी, तब तुम मुझे मार लेना।' शिकारी ने प्रत्यंचा ढीली कर दी और मृगी झाड़ियों में लुप्त हो गई।

कुछ ही देर बाद एक और मृगी उधर से निकली। शिकारी की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। समीप आने पर उसने धनुष पर बाण चढ़ाया। तब उसे देख मृगी ने विनम्रतापूर्वक निवेदन किया, 'हे पारधी ! मैं थोड़ी देर पहले ही ऋतु से निवृत्त हुई हूँ। कामातुर विरहिणी हूँ। अपने प्रिय की खोज में भटक रही हूँ। मैं अपने पति से मिलकर शीघ्र ही तुम्हारे पास आ जाऊँगी।'

शिकारी ने उसे भी जाने दिया। दो बार शिकार को खोकर उसका माथा ठनका। वह चिंता में पड़ गया। रात्रि का आखिरी पहर बीत रहा था। तभी एक अन्य मृगी अपने बच्चों के साथ उधर से निकली शिकारी के लिए यह स्वर्णिम अवसर था। उसने धनुष पर तीर चढ़ाने में देर न लगाई, वह तीर छोड़ने ही वाला था कि मृगी बोली, 'हे पारधी! मैं इन बच्चों को पिता के हवाले करके लौट आऊँगी। इस समय मुझे मत मार।'

शिकारी हँसा और बोला, 'सामने आए शिकार को छोड़ दूँ, मैं ऐसा मूर्ख नहीं। इससे पहले मैं दो बार अपना शिकार खो चुका हूँ। मेरे बच्चे भूख-प्यास से तड़प रहे होंगे।'

उत्तर में मृगी ने फिर कहा, 'जैसे तुम्हें अपने बच्चों की ममता सता रही है, ठीक वैसे ही मुझे भी, इसलिए सिर्फ बच्चों के नाम पर मैं थोड़ी देर के लिए जीवनदान माँग रही हूँ। हे पारधी! मेरा विश्वास कर मैं इन्हें इनके पिता के पास छोड़कर तुरंत लौटने की प्रतिज्ञा करती हूँ।'

मृगी का दीन स्वर सुनकर शिकारी को उस पर दया आ गई। उसने उस मृगी को भी जाने दिया। शिकार के आभाव में बेलवृक्ष पर बैठा शिकारी बेलपत्र तोड़-तोड़कर नीचे फेंकता जा रहा था। पौ फटने को हुई तो एक हृष्ट-पुष्ट मृग उसी रास्ते पर आया। शिकारी ने सोच लिया कि इसका शिकार वह अवश्व करेगा।

शिकारी की तनी प्रत्यंचा देखकर मृग विनीत स्वर में बोला,' हे पारधी भाई! यदि तुमने मुझसे पूर्व आने वाली तीन मृगियों तथा छोटे-छोटे बच्चों को मार डाला है तो मुझे भी मारने में विलंब न करो, ताकि उनके वियोग में मुझे एक क्षण भी दुःख न सहना पड़े। मैं उन मृगियों का पति हूँ। यदि तुमने उन्हें जीवनदान दिया है तो मुझे भी कुछ क्षण जीवनदान देने की कृपा करो। मैं उनसे मिलकर तुम्हारे सामने उपस्थित हो जाऊँगा।'

मृग की बात सुनते ही शिकारी के सामने पूरी रात का घटना-चक्र घूम गया। उसने सारी कथा मृग को सुना दी। तब मृग ने कहा, 'मेरी तीनों पत्नियाँ जिस प्रकार प्रतिज्ञाबद्ध होकर गई हैं, मेरी मृत्यु से अपने धर्म का पालन नहीं कर पाएँगी। अतः जैसे तुमने उन्हें विश्वासपात्र मानकर छोड़ा है, वैसे ही मुझे भी जाने दो। मैं उन सबके साथ तुम्हारे सामने शीघ्र ही उपस्थित होता हूँ।'

उपवास, रात्रि जागरण तथा शिवलिंग पर बेलपत्र चढ़ाने से शिकारी का हिंसक हृदय निर्मल हो गया था। उसमें भगवद् शक्ति का वास हो गया था। धनुष तथा बाण उसके हाथ से सहज ही छूट गए। भगवान शिव की अनुकम्पा से उसका हिंसक हृदय कारुणिक भावों से भर गया। वह अपने अतीत के कर्मों को याद करके पश्चाताप की ज्वाला में जलने लगा।

थोड़ी ही देर बाद मृग सपरिवार शिकारी के समक्ष उपस्थित हो गया, ताकि वह उनका शिकार कर सके, किंतु जंगली पशुओं की ऐसी सत्यता, सात्विकता एवं सामूहिक प्रेमभावना देखकर शिकारी को बड़ी ग्लानि हुई। उसके नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई। उस मृग परिवार को न मारकर शिकारी ने अपने कठोर हृदय को जीव हिंसा से हटा सदा के लिए कोमल एवं दयालु बना लिया।

देव लोक से समस्त देव समाज भी इस घटना को देख रहा था। घटना की परिणति होते ही देवी-देवताओं ने पुष्प वर्षा की। तब शिकारी तथा मृग परिवार मोक्ष को प्राप्त हुए।'

आरती श्री शिवरात्री की

आ गई महाशिवरात्रि पधारो शंकरजी ।
हो पधारो शंकर जी आरती उतारें ।
पार उतारो शंकरजी हो उतारो शंकर जी । ।
तुम नयन–नयन मे हो,मन धाम तेरा ।
हे निलकंठ है कंठ, कंठ मे नाम तेरा ।
हो देवों के देव,जगत में प्यारे शंकर जी ।
तुम राज महल में , तुम्हीं भिखारी के घर में ।
धरती पर तेरा चरण,मुकट है अम्बर में ।
संसार तुम्हारा एक हमारे शंकर जी ।
तुम दुनिया बसाकर,भस्म रमाने वाले हो ।
पापी के भी रखवाले,भोले भाले हो ।
दुनिया में भी दो दिन तो गुजारो शंकर जी ।
क्या भेट चढाये, तन मैला घर सुना
ले लो आँसू के गंगाजल का है नमूना
आ करके नयन में चरण पखारो शंकर जी । ।



शरद पूर्णिमा व्रत

इस दिन प्रात: काल स्नान करके आराध्य देव को सुंदर वस्त्राभूषणों से सुशोभित करके आवाहन, आसान, आचमन, वस्त्र, गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, सुपारी, दक्षिणा आदि से उनका पूजन करना चाहिए। रात्रि के समय गाय के दूध से बनी खीर में घी तथा चीनी मिलाकर अर्द्धरात्रि के समय भगवान को भोग लगाना चाहिए। पूर्ण चंद्रमा के आकाश के मध्य स्थित होने पर उनका पूजन करें तथा खीर का नैवेद्य अर्पण करके, रात को खीर से भरा बर्तन खुली चांदनी में रखकर दूसरे दिन उसका भोजन करें तथा सबको उसका प्रसाद दें।

पूर्णिमा का व्रत करके कथा सुनानी चाहिए। कथा सुनने से पहले एक लोटे में जल तथा गिलास में गेहूं, पत्ते के दोनों में रोली तथा चावल रखकर कलश की वंदना करके दक्षिणा चढ़ाए। फिर तिलक करने के बाद गेहूं के 13 दाने हाथ में लेकर कथा सुनें। फिर गेहूं के गिलास पर हाथ फेरकर मिश्राणी के पांव स्पर्श करके गेहूं का गिलास उन्हें दे दें। लोटे के जल का रात को चंद्रमा को अर्घ्य दें। शरद पूर्णिमा से ही स्नान और व्रत प्रारम्भ हो जाता है। माताएं अपनी संतान की मंगल कामना से देवी-देवताओं का पूजन करती हैं। इस दिन चंद्रमा पृथ्वी के अत्यंत समीप आ जाता है। कार्तिक का व्रत भी शरद पूर्णिमा से ही प्रारम्भ होता है। विवाह होने के बाद पूर्णिमा (पूर्णमासी) के व्रत का नियम शरद पूर्णिमा से लेना चाहिए। प्रति पूर्णिमा को व्रत करने वाले इस दिन भी चंद्रमा का पूजन करके भोजन करते हैं। इस दिन शिव-पार्वती और कार्तिकेय की भी पूजा की जाती है। यही पूर्णिमा कार्तिक स्नान के साथ, राधा-दामोदर पूजन व्रत धारण करने का भी दिन है।

शरद पूर्णिमा कथा

एक साहूकार की दो पुत्रियां थीं। वे दोनों पूर्णमासी का व्रत करती थीं। बड़ी बहन तो पूरा व्रत करती थी पर छोटी बहन अधूरा व्रत करती थी। छोटी बहन के जो भी संतान होती, वह जन्म लेते ही मर जाती। परन्तु बड़ी बहन की सारी संतानें जीवित रहतीं। एक दिन छोटी बहन ने बड़े-बड़े पण्डितों को बुलाकर अपना दुख बताया तथा उनसे कारण पूछा। पण्डितों ने बताया-'तुम पूर्णिमा का अधूरा व्रत करती हो, इसीलिए तुम्हारी संतानों की अकाल मृत्यु हो जाती है। पूर्णिमा का विधिपूर्वक पूर्ण व्रत करने से तुम्हारी संतानें जीवित रहेंगी।'

उसने पंडितों की सलाह पर पूर्णिमा का पूरा व्रत विधिपूर्वक किया। कुछ समय बाद उसके लड़का हुआ, लेकिन वह भी शीघ्र ही मर गया। तब उसने लड़के को पीढ़े पर लेटाकर उसके ऊपर कपड़ा ढक दिया। फिर बडी बहन को बुलाकर लाई और बैठने के लिए वही पीढा दे दिया। बडी बहन जब पीढे पर बैठने लगी जो उसका वस्त्र बच्चे को छू गया। बच्चा वस्त्र छुते ही रोने लगा। तब गुस्सा होकर बड़ी बहन बोली- 'तू मुझ पर कलंक लगाना चाहती थी। यदि मैं बैठ जाती तो बच्चा मर जाता।

तब छोटी बहन उससे शांत कराते हुए बोली- ' यह तो पहले से ही मरा हुआ था। तेरे भाग्य से जीवित हुआ है। हम दोनों बहनें पूर्णिमा का व्रत करती हैं, तू पूरा करती है और मैं अधूरा, जिसके दोष से मेरी संतानें मर जाती हैं। लेकिन तेरे पुण्य से यह बालक जीवित हुआ है। इसके बाद उसने पूरे नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि आज से सभी पूर्णिमा का पूरा व्रत करें, यह संतान सुख देने वाला है।


SANTABANTA.COM
SANTABANTA.COM
SANTABANTA.COM
SANTABANTA.COM

सावन के सोमवार
(शिवजी के व्रत)

श्रावण मास के प्रत्येक सोमवार को शिवजी के व्रत किये जाते है। श्रावण मास में शिवजी के व्रत एवं पूजा का विशेष महत्व हैं। शिवजी के यह व्रत बहुत फलदायी माने जाते हैं। इन व्रतों को करने वाले भक्तों से शिवजी बहुत प्रसन्न होते हैं। यह व्रत शिव जी को प्रसन्न करने के लिये किए जाते हैं।

इन व्रतों में शिव जी का पूजन करके एक समय भोजन किया जाता है। इस व्रत में भगवान् शिव और माता पार्वती का ध्यान करते हुए पूजन करना चाहिए। इससे भगवान् शिव प्रसन्न होकर मनवांछित फल देते हैं। सावन के प्रत्येक सोमवार को गणेशजी, शिवजी, पार्वती जी और नन्दी की पूजा करने का विधान है।

शिवजी की पूजा में जल, दूध, दही, चीनी, घी, शहद, पंचामृत, कलावा, वस्त्र, चंदन, रोली, चावल, फूल, विजया, आक, बेल पात्र, धतूरा, कमलगट्टा, पान, सुपारी, लौंग, इलायची, पंचमेवा, धूप, दीप, दक्षिणा सहित पूजा होती है। साथ ही कपूर से आरती करके भजन-कीर्तन और जागरण करना चाहिए। पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए और किसी ब्राह्मण से रूद्राभिषेक करना चाहिए। ऐसा करने से भगवान् शिव शीघ्र ही प्रसन्न होकर सभी मनोकामनाएं पूर्ण कर देते हैं। सोमवार का व्रत करने से पुत्र, धन, विद्या आदि मनवांछित फल की प्राप्ति होती है।

इस दिन सोलह सोमवार व्रत कथा का माहात्म्य सुनना चाहिए।

सावन के सोमवार-व्रत की कथा और पूजन विधि

सावन का पूरा महीना यूं तो भगवान शिव को अर्पित होता ही है पर सावन के पहले सोमवार को भगवान शिव की पूजा करने से विशेष फल मिलता है. भारत के सभी द्‌वादश शिवलिंगों पर इस दिन विशेष पूजा-अर्चना की जाती है. आदिकाल से ही इस दिन का विशेष महत्व रहा है. कहा जाता है सावन के सोमवार का व्रत करने से मनचाहा जीवनसाथी मिलता है और दूध की धार के साथ भगवान शिव से जो मांगो वह वर मिल जाता है.

सावन के सोमवार की महिमा अपार है और इसीलिए हम आपके लिए सोमवार के व्रत की कथा और उसके पूजन की विधि को लेकर आएं हैं.

पिछले कुछ ब्लॉगों में हमने आपको कई अहम चालिसाओं, आरतियों और अन्य धार्मिक चीजों से रूबरू करवाया और अब हमारा प्रयास है कि हम उन सभी लोगों की मदद करें जो व्रत रखते हैं.

आइए जानें सावन के सोमवार के व्रत की कथा

एक कथा के अनुसार जब सनत कुमारों ने महादेव से उन्हें सावन महीना प्रिय होने का कारण पूछा तो महादेव भगवान शिव ने बताया कि जब देवी सती ने अपने पिता दक्ष के घर में योगशक्ति से शरीर त्याग किया था, उससे पहले देवी सती ने महादेव को हर जन्म में पति के रूप में पाने का प्रण किया था. अपने दूसरे जन्म में देवी सती ने पार्वती के नाम से हिमाचल और रानी मैना के घर में पुत्री के रूप में जन्म लिया. पार्वती ने सावन के महीने में निराहार रह कर कठोर व्रत किया और उन्हें प्रसन्न कर विवाह किया, जिसके बाद ही महादेव के लिए यह विशेष हो गया. यही कारण है कि सावन के महीने में सुयोग्य वर की प्राप्ति के लिए कुंवारी लड़कियों व्रत रखती हैं.

सोमवार व्रत विधि

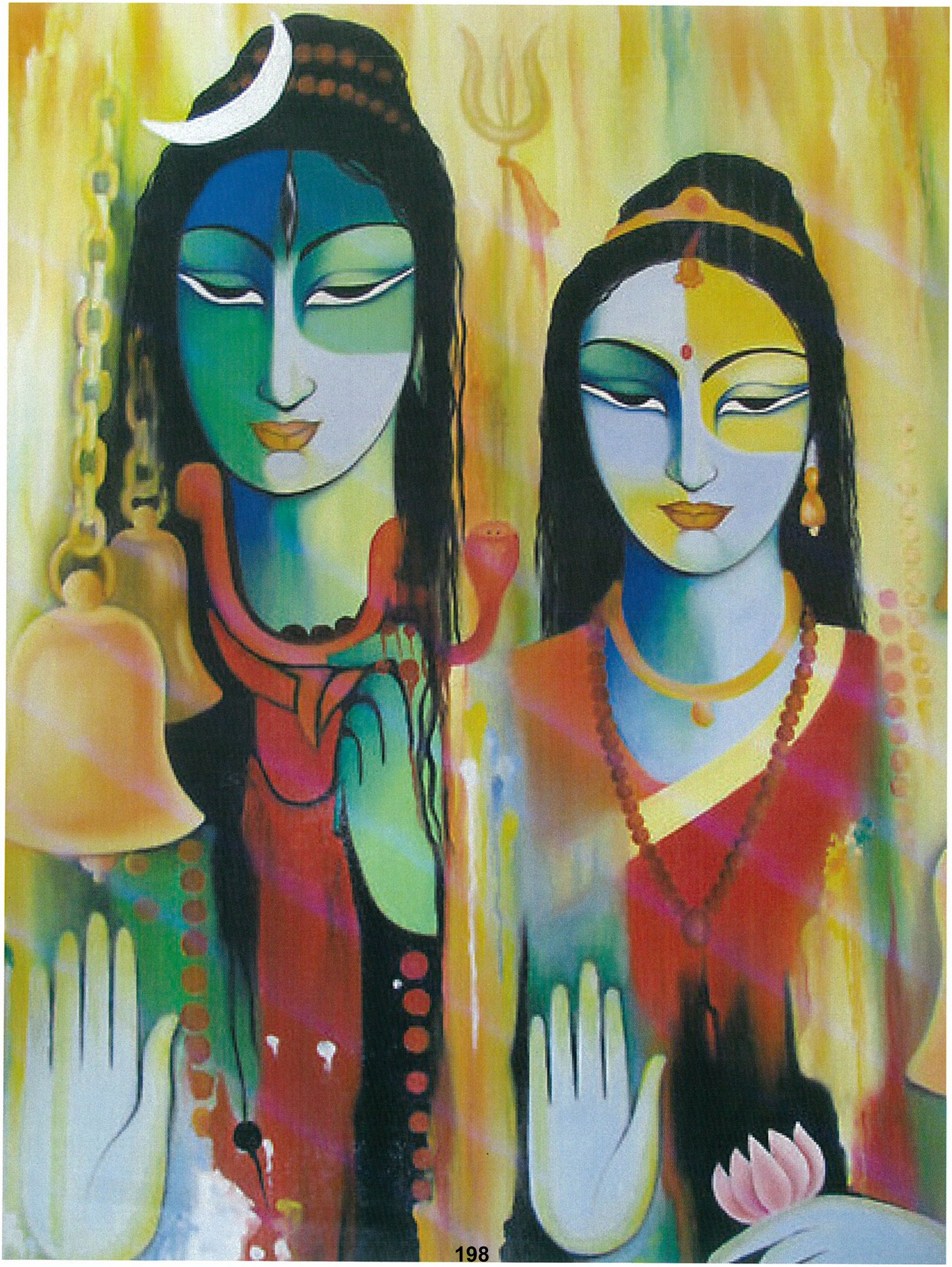
सोमवार व्रत में भगवान भगवान शंकर के साथ माता पार्वती और श्री गणेश की भी पूजा की जाती है. व्रती यथाशक्ति पंचोपचार या षोडशोपचार विधि-विधान और पूजन सामग्री से पूजा कर सकता है. व्रत स्त्री-पुरुष दोनों कर सकते हैं. शास्त्रों के मुताबिक सोमवार व्रत की अवधि सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक है. सोमवार व्रत में उपवास रखना श्रेष्ठ माना जाता है, किंतु उपवास न करने की स्थिति में व्रती के लिए सूर्यास्त के बाद शिव पूजा के बाद एक बार भोजन करने का विधान है. सोमवार व्रत एक भुक्त और रात्रि भोजन के कारण नक्तव्रत भी कहलाता है.

सावन के पहले सोमवार की पूजा विधि

प्रात: और सांयकाल स्नान के बाद शिव के साथ माता पार्वती, गणेश जी, कार्तिकेय और नंदी जी पूजा करें. चतुर्थी तिथि होने से श्री गणेश की भी विशेष पूजा करें. पूजा में मुख पूर्व दिशा या उत्तर दिशा की ओर रखें. पूजा के दौरान शिव के पंचाक्षरी **मंत्र "ॐ नम: शिवाय"** और गणेश मंत्र **जैसे"ॐ गं गणपतये"** बोलकर भी पूजा सामग्री अर्पित कर सकते हैं.

पूजा में शिव परिवार को पंचामृत यानी दूध, दही, शहद, शक्कर, घी व जलधारा से स्नान कराकर, गंध, चंदन, फूल, रोली, वस्त्र अर्पित करें. शिव को सफेद फूल, बिल्वपत्र, सफेद वस्त्र और श्री गणेश को सिंदूर, दूर्वा, गुड़ व पीले वस्त्र चढ़ाएं. भांग-धतूरा भी शिव पूजा में चढ़ाएं. शिव को सफेद रंगे के पकवानों और गणेश को मोदक यानी लड्डूओं का भोग लगाएं.

भगवान शिव व गणेश के जिन स्त्रोतों, मंत्र और स्तुति की जानकारी हो, उसका पाठ करें. श्री गणेश व शिव की आरती सुगंधित धूप, घी के पांच बत्तियों के दीप और कर्पूर से करें. अंत में गणेश और शिव से घर-परिवार की सुख-समृद्धि की कामनाएं करें.



विधि :

सोमवार का व्रत साधारणतया दिन के तीसरे पहर तक होता है । व्रत में फलाहार या पारण का कोई खास नियम नही है किन्तु यह आवश्यक है कि दिन रात मे केवल एक समय भोजन करे । सोमवार के व्रत मे शिवजी पार्वती का पूजन करना चाहिए । सोमवार के व्रत तीन प्रकार के है - साधारण प्रति सोमवार, सौम्य प्रदोष और सोलह सोमवार विधि तीनो की एक जैसी है । शिव पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए । प्रदोष व्रत, सोलह सोमवार कथा तीनो की अलग-अलग है जो आगे लिखी गई है ।

सोलह सोमवार व्रत कथा प्रारम्भ

एक समय श्री विश्वनाथ महादेव जी माता पार्वती जी के सहित विचरते हुए मृत्यु लोक मे पधारे और भ्रमण करते-करते विदर्भ देश मे अमरावती नम की अति रमणीक पुरी मे पहुचे। वह पुरी अमरापुरी के सदृश ही सर्व प्रकार के सुखो से परिपूर्ण थी। उस पुरी के राजा ने एक अति सुन्दर शिव जी महाराज का मन्दिर बनवाया हुआ था। उसी मनिदर मे श्री महादेव जी अपनी धर्मपत्नी श्री पार्वती जी के साथ निवास करने लगे। एक समय पार्वती जी ने अपने पति को प्रसन्नचित देखकर मन बहलाने की इच्छा से उनसे चौसर खेलने का आग्रह किया। श्री महादेव जी ने अपनी प्राण प्यारी की बात मान कर चौसर खेलना प्रारंम्भ किया। उसी समय उस मन्दिर का पूजा के निमित्त मन्दिर मे आया और श्री पार्वती जी ने उस पुजारी ब्राह्मण से प्रश्न किया कि इस चौसर की बाजी मे किसकी जीत होगी ? भाग्यवश ब्राह्मण बिना विचारे ही बोल उठा कि श्री महादेव जी की जीत होगी । परन्तु हुआ इसके विरूद और थोड़ी देर मे बाजी समाप्त होने पर श्री पार्वती जी की जीत गई। इस पर पार्वती जी को ब्राह्मण के झूठ बोलने के कारण बहुत क्रोध आया और उसको श्राप देने के लिए तैयार हो गई। यद्यपि महादेव जी ने पार्वती जी को बहुत समझाया परन्तु उन्होने कुछ भी ना मानकर ब्राह्मण को कोढ़ी होने का श्राप दे ही डाला। कुछ दिनो पश्चात् पार्वती जी के श्रापवश कोढ़ी हो गया और अनेक प्रकार के कष्टो को भोगने लगा। जब इस प्रकार उसको कष्ट भोगते हुए बहुत दिन हो गये तो एक दिन स्वर्ग की अप्सरायें श्री शिव जी की पूजा करने के लिए उस मन्दिर मे आई और पुजारी जी को सारे शरीर के कोढ़ से दु:खी देखकर दयाभाव से पूछा तो ब्राह्मण ने विनाश की वह श्री शिव जी और पार्वती जी के चौसर खेलने तथा पार्वती जी के श्राप देने की सब कथा उनको सुनाई। तब अप्सराये यह सब कथा सुन कर कहने लगी कि हे ब्राह्मण ! अब तुमको अधिक दु:ख नही उठाना पड़ेगा।भगवान् शंकर की कृपा से तुम्हारे सब दु:ख दूर हो जायेंगे। तुम सब व्रतो मे उत्तम व्रत षोडश सोमवार व्रत की विधि को अप्सराओ से पूछने लगा। अप्सराये कहने लगी कि सोमवार को स्नान आदि से निवृत होकर अच्छे वस्त्र धारण करे। फिर आधा किलो खूब अच्छी तरह शुद्ध भुने हुए गेंहु का आटा लेकर उसका प्रसाद बनावे और उसके तीन भाग कर ले। फिर चन्दन, अक्षत, फूल, धूप, नैवेध, पुंगीफल, बेलपत्र, यज्ञोपवीतादि द्वारा प्रदोष-काल में भगवान् शंकर का पूजन भत्ति और श्रद्धा से युक्त होकर करे।

क्रमश:

फिर प्रसाद के तीन भागो मे से एक भाग भगवान् शंकर का प्रसाद समझकर उपस्थित सज्जनो को बांट दे और आप भी प्रसाद पा लेवे। इस प्रकार सोलह सोमवार तक व्रत करे। सत्रहवे सोमवार को पाव भर शुद्ध गेहूँ का आटा लेकर उसकी बाटी बनावे और उसमे घी और गुड़-शक्कर परिणाम सहित मिलाकर चूरमा बनावे और शिवजी का भोग लगाकर उपस्थित सज्जनो को बांट दे और आप भी सकुटुम्ब प्रसाद पावे। इस प्रकार करने से भगवान् शंकर की कृपा से मनुष्य के सब मनोरथ पूरे हो जाते है। ऐसा कह कर अप्सराये तो स्वर्ग चली गई और उस ब्राह्मण ने अप्सराओ के कथन अनुसार विधिवत् सोलह सोमवार तक व्रत किया और भगवान् शंकर की कृपा से रोगमुक्त होकर बड़े आन्नद से रहने लगा। कुछ काल व्यतीत हो जाने पर भगवान् शिव और पार्वती जी फिर उसी मन्दिर मे पधारे और उस ब्राह्मण को श्रापमुक्त निरोगी देखकर पार्वती जी ने बड़े आश्चर्य से पूछा तो ब्राह्मण से रोगमुक्त होने का कारण पूछा तो ब्राह्मण ने वही षोडश सोमवार व्रत की सब कथा सुनाई। माता पार्वती व्रत का वृत्तान्त सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुई और उन्होंने भी विधिपूर्वक इस व्रत को किया तथा व्रत के प्रभाव से उनके गए हुए पुत्र स्वामी कार्तिकेय स्वयं आकर माता के आज्ञाकारी हुए। कार्तिकेय जी को अपने विचारो मे पर्विर्तन होने का कारण जानने खी बड़ी भारी इच्छा हुई और उन्होंने माता जी से इस रहस्य का कारण सुनने की इच्छा प्रकट की । तब माता पार्वती जी ने वही षोडश सोमवार व्रत की कथा सुनाई तब उन्होने भी इस व्रत का प्रभाव सुनकर, उनका एक मित्र ब्राह्मण बहुत दिनो से तब उन्होने भी इस व्रत का प्रभाव सुनकर, उनका एक मित्र ब्राह्मण बहुत दिनो से परदेश गया हुआ था, उससे मिलने की इच्छा से इस व्रत को धारण किया और उनका मित्र बहुत शीघ्र आकर कार्तिकेय जी से मिला और इस आकस्मिक मिलने का रहस्य कार्तिकेय जी से पूछा। उत्तर दिया हमने तुम से मिलने के लिए षोडश सोमवार व्रत, उसी के प्रभाव से तुम मिले। ऐसा सुनकर ब्राह्मण ने भी अपने विवाह की इच्छा से विधिपूर्वक इस व्रत को किया। इस व्रत के प्रभाव से एक समय वह ब्राह्मण कार्यवश किसी दूसरे देश मे गया तो उस समय वहां के राजा की कन्या का स्वयंवर था और अनेक देशो के राजकुमार राजकन्या के साथ विवाह करने की इच्छा से वहाँ आए हुए थे।राजा ने भी प्रण किया था कि जिस राजकुमार के गले मे आभूषणो से सजी हुई हाथिनी माला डाल देगी उसी के साथ अपनी कन्या का विवाह कर देगा।

(२)

क्रमश :

ब्राह्मण भी कौतुकवश स्वयंवर देखने के लिए वहाँ गया हुआ था और भाग्यवश हथिनी ने माला ब्राह्मण के गले मे डाल दी । राजा ने प्रतिज्ञानुसार अपनी कन्या का विवाह उस ब्राह्मण के साथ कर दिया और उसको बहुत धन दिया तथा उसका बहुत सम्मान करके संतुष्ट किया। ब्राह्मण उस राजकन्या को पाकर अति प्रसन्नता से अपना जीवन व्यतीत करने लगा। एक समय उस राजकन्या ने अपने पति से कहा कि हे प्राणनाथ ! आपने ऐसा कौन सा पुण्य का काम किया था जिसके प्रभाव से हथिनी ने सब राजकुमारो को छोड़कर आपके ही गले मे वरमाला डाली । ब्राह्मण बोला कि प्रिय मैने अपने मित्र कार्तिकेय जी के कथनानुसार षोडश सोमवार व्रत किया था, उसके प्रभाव से तुम जैसी रूपवान लक्ष्मी मुझको प्राप्त हुई। व्रत की ऐसी महिमा सुन कर राजकन्या को बड़ा आश्चर्य हुआ और पुत्र प्राप्त होने की इच्छा से व्रत करने लगी। भगवान् शिव की कृपा से उसके गर्भ से एक अत्यन्त सुन्दर, धर्मात्मा, सुशील और विद्वान पुत्र उत्पन्न हुआ।माता-पिता उस देव समान पुत्र को पाकर अति प्रसन्नता से उसका पालन-पोषण करने लगे। वह बड़ा हुआ तो एक दिन उसने अपनी माता से प्रश्न किया कि हे माता ! आपने ऐसा कौन सा तप किया जिससे मेरे जैसा पुत्र आपने अपने गर्भ मे धारण किया ? माता ने अपने पुत्र की प्रसन्नता के लिए वही षोडश सोमवार व्रतका विधान कहा। जब पुत्र ने मनोवांछित फल देने वाले ऐसे सरल व्रत का वृत्तान्त सुना तो वह भी राज्य अधिकार पाने की इच्छा से इस व्रत को करने लगा। उसी समय किसी देश के वृद्ध राजा के दूतो ने आकर उसको राजकन्या के योग्य समझ कर कन्या का विवाह करके अति प्रसन्नता को प्राप्त हुआ। वृद्ध राजा की मृत्यु के पश्चात् यही ब्राह्मण-पुत्र राज्य-सिंहासन पर बैठाया गया, क्योकि वृद्ध राजा के सिवाय उस कन्या के कोई और सन्तान नही थी। राज्याधिकार पाने के पश्चात् भी वह ब्राह्मण-पुत्र सदैव षोडश सोमवारो का व्रत विधिपूर्वक करता रहा। वह सत्रवहां सोमवार आया तो राजा ने पूजा सामग्री लेकर रानी को शिवालय चलने के लिए कहा, परन्तु राजकन्या ने उसकी आज्ञा ना मानकर स्वयं शिवालय न जाकर दास दासियो के हाथ सब सामग्रियां भिजवा दी । जब राजा ने शिवजी का पूजन समाप्त किया तो आकाशवाणी हुई कि हे राजा! तुम अपनी इस रानी को राजमहल से निकाल दो, नही तो यह तुम्हारा सर्वनाश कर देगी । राजा को आकाशवाणी सुन कर बड़ा आश्चर्य और दु:ख हुआ और शिवजी की आकाशवाणी का सब वृत्तान्त अपनी सभा मे आकर सभी सभासदो से कहा।

क्रमश :

सभासदो को यह सुनकर अत्यन्त आश्चर्य और दु:ख हुआ कि जिस राजकन्या के कारण इसको राज प्राप्त हुआ है उसी को निकालने के लिए सब प्रपंच रच रहा है। परन्तु राजा ने उसको निकाल ही दिया। रानी अति दु:खित होकर अपने भाग्य को कोसती हुई नगर से बाहर चली गई। पैरो मे जूती नही, नंगे पैर, फटे हुए वस्त्र पहने, भूख से दु:खित रानी धीरे-धीरे चल कर एक अपरिचित नगर मे पहुँची । वहाँ पर एक बुढ़िया कुछ सूत कातकर बेचने जा रही थी । रानी की दीन अवस्था देखकर कहने लगी कि तू मेरे साथ चल कर सूत बिकवा दे, मै वृद्ध हूँ कुछ भाव आदि का पता नही। रानी ने सूत की गठरी बुढ़िया के सर से उतारकर अपने सिर पर रख ली । अभी थोड़ी ही दूर गई होगी कि ऐसी आँधी आई कि बुढ़िया का सारा सूत फोटली समेत उड़ गया। बुढ़िया रोती और पछताती रह गई और रानी को अपने साथ से दूर रहने को कह दिया । तब रानी एक तेली के घर गई तो तेली के घर मे जितने तेल के घड़े थे सब चटक गए। ऐसी दशा देखकर तेली ने उसको भाग्यहीन समझकर अपने घर से निकाल दिया। रानी इस प्रकार दुखिया होकर एक नदी के तट पर जल पीने के लिए गई तो नदी का सब जल सूख गया। फिर रानी एक बाग मे गई जिसमे एक बड़ा सुन्दर सरोवर था । रानी जैसे ही जल पीने सीढ़ियो से नीचे उतरी । जल पीने के लिए जैसे ही जल को स्पर्श किया वैसे ही नील कमल के समान जल मे असंख्य कीड़े उत्पन्न हो गए और सारा जल गंदला हो गया। हताश होकर रानी ने अपने भाग्य को कोसते हुए इसी गंदले जल का पान किया और विश्राम करने के लिए एक पेड़ की शतिल छाया के नीचे गई तो पेड़ के सब पत्ते गिर गए। रानी जिस पेड़ के नीचे जाती । उसी के पत्ते गिरने लगते। उस वन के पेड़ो की और सरोवर के जल की दशाँ देख कर उस वन के ग्वालो ने जो वहाँ पर अपनी गौवो को चराते और सरोवर मे जल पिलाते थे, बड़े दु:खी भाव से यह सब कथा अपने गुसाई जी को, जो उस जंगल मे ही एक मंदिर के पुजारी थे, जाकर सुनाई और रानी को पकड़ कर गुसाई के पास ले गये । रानी के मुख की कांति और शोभा देखकर गुसाई जी समझ गये कि यह अवश्य किसी कुलीन वंश की अबला दु:खित स्त्री है। ऐसा सोच कर गुसाई जी ने रानी से कहा कि मै तुम्हे पुत्री समान रखूंगा तुम मेरे आश्रम मे रहो यहाँ तुमको किसी प्रकार का कष्ट नही होगा । ऐसा वचन सुनकर रानी को कुछ धरिज हुआ और वहाँ आश्रम मे ही रहने लगी । परन्तु जो भी भोजन बनाती उसे तथा जो जल भर कर लाती उसमे कीड़े पड़ जाते।

(४) क्रमश :

अब गुसाई जी को भी बड़ा आश्चर्य और दु:ख हुआ और कहने लगे कि पुत्री तुझ पर कौन से देवता का कोप है जो तेरी ऐसी दशा हो गई है । तब गुसाई जी की बात सुन कर रानी ने शिव पूजा का सारा वृतान्त गुसाईं जी को सुनाया तो गुसाईं जी ने अनेक प्रकार से भगवान् शंकर की स्तुति की और रानी से कहने लगे कि पुत्री तुम सब मनोरथ पूर्ण करने वाले सोलह सोमवार व्रत को करो । उसके प्रभाव से तुम्हारे सब कष्ट दूर होंगे । गुसाईं जी की आज्ञा अनुसार रानी ने षोडश सोमवार व्रत किये और सत्रहवें सोमवार के पूजन से राजा के हृदय मे विचार उत्पन्न हुआ की रानी को गए बहुत समय हो गया, न जाने कहाँ भटकती होगी, अब उसे ढूंढना चाहिए । यह विचार कर चारो दिशाओ मे अपने दूत रानी को ढूंढने के लिए भेजे। दूत ढूंढते- ढूंढते गुसाईं जी के आश्रम मे भी पहुंच गये और उनको सब वृतान्त सुनाकर रानी को अपने साथ ले जाने के लिए कहा। परन्तु गुसाईं जी ने रानी को नही भेजा। तब दूतो ने रानी का पता और सब वृतान्त जाकर राजा को सुनाया। राजा सब वृतान्त सुन कर स्वयं गुसाईं जी के आश्रम मे गए और गुसाईं जी से विनीत भाव से कहने लगे कि महाराज यह महारानी मेरी पत्नी है। भगवान् शंकर के कोप से मैंने इसको त्याग दिया था। अब भगवान् शंकर का कोप इस पर शांत हो गया है, इस कारण इसको लेने के लिए यहाँ आया हूँ। आप इसको मेरे साथ चलने की आज्ञा दीजिए । गुसाईं जी ने राजा की बातो का विश्वास करके रानी को राजा के साथ जाने की आज्ञा दी और रानी बड़ी प्रसन्नता के साथ राजमहल मे आई । तब नगरवासियो ने नगर को खूब सजाया और सारे नगर मे बाजे बजने लगे और घर-घर मे मंगल गान होने लगा । विद्वानो ने वेद मन्त्रो का उच्चारण किया व अपने राजा और रानी का स्वागत किया । महाराज ने ब्राह्मणो को बहुत धन-धान्य देकर दिया। नगरी मे जगह-जगह सदाव्रत खुलवाकर गरीबो को भोजन खिलाया गया। इस प्रकार राजा भगवान् शंकर की कृपा से अनेक प्रकार के सुखो को भोगता हुआ बड़े आन्नद के साथ जीवन व्यतीत करने लगा । अब तो राजा और रानी दोनो ही प्रति वर्ष षोडश सोमवार व्रत और शिव जी का पूजन विधि पूर्वक करने लगे और इस लोक मे अनेक प्रकार के सुखो को भोगने के पश्चात् शिवपुरी को प्राप्त हुए। ऐसे ही जो मनुष्य वाचा कर्मणा से भक्ति और श्रद्धा से युक्त होकर इस षोडश सोमवार व्रत और पूजन करता है, वह इस संसार मे अनेक सुखो को भोगकर अंत समय मे शिवपुरी को प्राप्त होता है। यह व्रत सर्व प्रकार के मनोरथ को पूर्ण करने वाला है ।

।। समाप्त ।।


whoa.in
Whoa.in

भाखौरियौ सोमवार कथा

अम्बावती नगर में चारूदत्त नामक एक बराह्मण अपनी पत्नी के साथ रहता था।वह बहुत गरीब था।इसलिए भिक्शा मागँ कर अपनी गुजर बसर करता था।वह बराह्मण और उसकी पत्नी शिव भक्त थे और बहुत भक्ती भाव से रोज पूजा किया करते थे।आए दिन अतिथियों को आदर सहित भोजन कराया करते थे।दोनों पती पत्नी सत्यवादी थे।उन दोनों की भक्ति देख कर भगवान साधू का वेश धारण कर उनके घर पंहुचे।साधु को घर आए देखकर चारुदत्त बहुत खुश हुआ।उसने साधु की खूब आवभगत की और अपने बाटँ का भोजन साधू को कराया।साधू ने भोजन करते हुए पूछा हे भूदेव आप दुःखी लगते हैं।क्या मैं आपकी कोई मदद कर सकता हूँ।साधू की बात सुन कर चारुदत्त की आखें भर आई।उसने विनम्र भाव से कहा महात्मा जी मैं पँडित हूँ ग्यानी हूँ परन्तु अन्नदाता मुझसे रूष्ट हैं।मैं भगवान शिव की भक्ति करता हूँ फिर भी शिव कृपा मुझ पर नहीं होती।कृपा कर आप मुझे कोई उपाय बताएं जिससे मेरे कष्ट दूर हों तथा हम भूखे ना रहें।चारुदत्त की बात सुनकर साधु ने धैर्य बंधाते हुए कहा सुख दुःख तो जीवन के दो पहलु हैं ये दोनों हमेशा साथ साथ चलतेहैं।इसलिए तुम दुःखी मत हो। पूर्व जन्मो का फल तो भुगतना पड़ता है।यह कहकर साधु एक पल के लिए मौन हो गए।थोड़ी देर बाद साधु बोले हे चारुदत्त तुम भाखौरियौ सोमवार का वरत करो।इस से तुम्हारे पुर्व जन्म के पाप तो नष्ट होगें ही था दुःख गरीबी भी नष्ट होगा।इस वरत से भगवान शंकर तुमसे खुश होंगे।साधु की बात सुनकर दम्पत्ती बहुत खश हुए और मन ही मन यह वरत करने का निश्चय कर साधु को आदर सहित विदा किया।जब श्रावण मास का पहला सोमवार आया तो दम्पत्ती ने यह वरत करना शुरु किया।इस वरत के कारण उन दोनों के सब कष्ट दर हो गए तथा चारुदत्त को राजश्रय मिला तथा राजपुरोहित हो गया।यह वरत साढे तीन माह तक लगातार किया जाता है।कार्तिक सुदी चतुर्दशी को इसका उध्यापन होता है।



पूजा विधि

सांयकाल के बाद और रात्रि आने से पूर्व का जो समय है उसे प्रदोष कहते है । व्रत करने वाले को उसी समय भगवान् शंकर का पूजन करना चाहिए ।

प्रदोष व्रत करने वाले को त्रयोदशी के दिन, दिन भर भोजन नहीं करना चाहिए । शाम के समय जब सूर्यास्त में तीन घड़ी का समय शेष रह जाए तब स्नानादि कर्मों से निवृत होकर, श्वेत वस्त्र धारण करके तत्पश्चात् सन्धया- वन्दना करने के बाद शिवजी का पूजन प्रारम्भ करें।

कथा

पूर्वकाल में पुत्रवती ब्राह्मणी थी । उसके दो पुत्र थे । वह ब्राह्मणी बहुत निर्धन थी । दैवयोग से उससे एक दिन महर्षि शाण्डिल्य के दर्शन हुए । महर्षि के मुख से प्रदोष व्रत की महिमा सुनकर उस ब्राह्मणी ने ऋषि से पूजन की विधि पूछी । उसकी श्रद्धा और आग्रह से ऋषि ने उस ब्राह्मणी को शिव पूजन का उपर्युक्त विधान बतलाया और उस ब्राह्मणी से कहा – तुम अपने दोनों पुत्रओं से शिव की पूजा कराओ । इस व्रत के प्रभाव से तुम्हे एक वर्ष के पश्चात् पूर्ण सिद्धि प्राप्त होगी ।

उस ब्राह्मणी ने महर्षि शाण्डिल्य के वचन सुनकर उन बालकों के सहित नतमस्तक होकर मुनि के चरणों में प्रणाम किया और बोली – हे ब्राह्मण, आज मैं आपके दर्शन से धन्य हो गयी हूं । मेरे ये दोनों कुमार आपके सेवक हैं । आप मेरा उद्धार कीजिए ।

उस ब्राह्मणी को शरणागत जानकर मुनि ने मधुर वचनों द्वारा दोनों कुमारों को शिवजी की आराधना विधि बतलाई । तदान्तर वे दोनों बालक और ब्राह्मणी मुनि को प्रणाम कर शिव मंदिर में चले गए । उस दिन से वे दोनों बालक मुनि के कथनानुसार नियमपूर्वक प्रदोष काल में शिवजी की पूजा करने लगे । पूजा करते हुए उन दोनों को चार महीने बीत गए । एक दिन राजसुत की अनुपस्थिति में शुचिव्रत स्नान करने नदी किनारे चला गया और वहां जल-क्रीड़ा करने लगा। संयोग से उसी समय उसे नदी की दरार में चमकता हुआ धन का बड़ा सा कलश दिखाई पड़ा । उस धनपूरित कलश को देखकर शुचिव्रत बहुत प्रसन्न हुआ । उस कलश को वह सिर पर रखकर घर ले आया ।

(1)

क्रमशः

कलश भूमि पर रखकर वह अपनी माता से बोला - हे माता, शिवजी की महिमा तो देखो । भगवान ने इस घड़े के रूप में मुझे अपार सम्पति दी हैं ।

उसकी माता घड़े को देखकर आश्चर्य करने लगी और राजसुत को बुलाकर कहा - बेटे मेरी बात सुनो। तुम दोनों इस धन को आधा -आधा बांट लो ।

माता की बात सुनकर शुचिब्रत बहुत प्रसन्न हुआ परन्तु राजसुत ने अपनी असहमति प्रकट करते हुए कहा - हे मां, यह धन तेरे पुत्र के पुण्य से प्राप्त हुआ है । मैं इसमें किसी प्रकार का हिस्सा लेना नहीं चाहता । क्योंकि अपने किये कर्म का फल मनुष्य स्वयं ही भोगता हैं ।

इस प्रकार शिव पूजन करते हुए एक ही घर में उन्हे एक वर्ष व्यतीत हो गया । एक दिन राजकुमार ब्राह्मण के पुत्र के साथ बसन्त ऋतु में वन विहार करने के लिए गया । वे दोनों जब साथ-साथ वन से बहुत दूर निकल गए, तो उन्हे वहां पर सैकड़ों गन्धर्व कन्यायें खेलती हुई दिखाई पड़ी ।

ब्राह्मण कुमार उन गन्धर्व कन्याओं को क्रीड़ारत देखकर राजकुमार से बोला - यहां पर कन्यायें विहार कर रही हैं इसलिए हम लोगों को अब और आगे नहीं जाना चाहिए । क्योकिं वे गन्धर्व कन्यायें शीघ्र ही मनुष्यों के मन को मोहित कर लेती हैं । इसलिये मैं तो इन कन्याओं से दूर ही रहूंगा ।

(2) क्रमशः

परन्तु राजकुमार उसकी बात अनसुनी कर कन्याओं के विहार स्थल में निर्भीक भाव से अकेला ही चला गया । उन सभी गन्धर्व कन्याओं में प्रधान सुन्दरी उस समय आये हुए राजकुमार को देखकर मन में विचार करने लगी की कामदेव के समान सुन्दर रूप वाला यह राजकुमार कौन हैं ? उस राजकुमार के साथ बातचीत करने के उद्देश्य से सुन्दरी ने अपनी सखियों से कहा – सखियों तुम लोग निकट के वन में जाकर अशोक, चम्पक, मौलसिरी आदि के ताजे फूल तोड़ लाओ। तब तक मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में यहीं रुकी रहूंगी ।

उस गन्धर्व कुमारी की बात सुनते ही सब सखियां वहां से चली गई । सखियों के जाने के बाद वह गन्धर्व
कन्या राजकुमार को स्थिर दृष्टि से देखने लगी । उन दोनों में परस्पर प्रेम का संचार होने लगा । गन्धर्व कन्या ने राजकुमार को बैठने के लिये आसन दिया । प्रेमालाप के कारण राजकुमार के सहवास के लिये वह सुन्दरी व्याकुल हो उठी और राजकुमार से प्रश्न करने लगी – "हे कमल के समान नेत्रों वाले, आप किस देश के रहने वाले हैं ? आपका यहां आना क्यों कर हुआ ?"

गन्धर्व कन्या की बात सुनकर राजकुमार ने जवाब दिया – "मैं विर्दभराज का पुत्र हूं । मेरे माता-पिता स्वर्गवासी हो चुके हैं । शत्रुओं ने मुझसे मेरा राज्य हरण कर लिया हैं ।"

क्रमशः

(3)

राजकुमार ने अपना परिचय देकर उस गन्धर्व कन्या से पूछा – 'आप कौन है ? किसकी पुत्री हैं ? और इस वन में किस उद्देश्य से आई हैं ? आप मुझसे क्या चाहती हैं ।'

राजकुमार की बात सुनकर गन्धर्व कन्या ने कहा – "मैं विद्रविक नामक गन्धर्व की पुत्री अंशुमती हूं । आपको देखकर आपसे बातचीत करने के लिये ही यहां पर सखियों का साथ छोड़कर रह गई हूं । मै गान विद्या में बहुत निर्पूण हूं। मेरे गान पर सभी देवांगनायें रीझ जाती हैं । मैं चाहती हूं कि आपका और मेरा प्रेम सदा बना रहे । इतनी बात कहकर उस गन्धर्व कन्या ने अपने गले का बहुमुल्य मुक्ताहार राजकुमार के गले में डाल दिया । वह हार उन दोनों के प्रेम का प्रतीक बन गया ।"

इसके पश्चात् राजकुमार ने उस कन्या से कहा – "हे सुन्दरी ! तुमने जो कुछ कहा, वह सब सत्य है । लेकिन आप राजविहिन राजकुमार के पास कैसे रह सकेंगी ? आप अपने पिता की अनुमति के लिये बिना मेरे साथ कैसे चल सकेंगी ? "

राजकुमार की बात पर कन्या मुस्करा कर कहने लगी –"जो कुछ भी हो, मैं अपनी इच्छा से आपका वरण करुंगी । अब आप परसों प्रातः काल यहां आइयेगा । मेरी बात कभी झूठ नहीं हो सकती । गन्धर्व कन्या ऐसा कहकर पुनः अपनी सखियों के पास चली गई ।"

इधर वह राजकुमार भी शुचिब्रत के पा जा पहुंचा और अपना सारा वृतांत कह सुनाया । इसके बाद वे दोनों घर लौट गये । घर पहुंचकर उन लोगों ने ब्राह्मणी को सब हाल कहा, जिसे सुनकर वह ब्राह्मणी भी हर्षित हुई ।

क्रमशः

उसी वन में पहुंचा । वहां पहुंचकर उन लोगों ने देखा गन्धर्वराज अपनी पुत्री अंशुमती के साथ उपस्थित होकर प्रतीक्षा में बैठे हैं । गन्धर्व ने उन दोनों कुमारों का अभिनन्दन करके उन्हे सुन्दर आसन पर बिठाया और राजकुमार से कहा – "मैं परसों कैलाशपुरी को गया था। वहां पर भगवान शंकर पार्वती सहित विराजमान थे। उन्होंने मुझे अपने पास बुलाकर कहा – पृथ्वी पर राज्यच्युत होकर धर्मगुप्त नामक राजकुमार घूम रहा हैं। शत्रुओं ने उसके वंश को नष्ट -भ्रष्ट कर दिया है वह कुमार सदा ही भक्तिपूर्वक मेरी सेवा किया करता है । इसलिये तुम उसकी सहायता करो, जिससे वह अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सके। इसलिये मैं भगवान शंकर की आज्ञा से अपनी पुत्री अंशुमती आपको सौंपता हूं। मैं शत्रुओं के हाथ में गये हुए आपके राज्य को वापिस दिला दूंगा। आप इस कन्या के साथ दस हजार वर्षों तक सुख भोगकर शिवलोक में आने पर भी मेरी पुत्री इसी शरीर में आपके साथ रहेगी।" इतना कहकर गन्धर्वराज ने अपनी पुत्री का विवाह राजकुमार के साथ कर दिया। दहेज में अनेक दास-दासियां तथा शत्रुओं पर विजय पाने के लिये गन्धर्वों की चतुरंगिणी सेना भी दी ।

राजकुमार ने गन्धर्वों की सहायता से शत्रुओं को नष्ट किया और वह अपने नगर में प्रवीष्ट हुआ । मंत्रियों ने राजकुमार को सिंहासन पर बैठकर राज्याभिषेक किया । अब वह राजकुमार राज-सुख भोगने लगा । जिस दरिद्र ब्राह्मणी ने उसका पालन पोषण किया था उसे ही राजमाता के पद पर आसीन किया गया । वह शुचिव्रत ही उसका छोटा भाई बना । इस प्रकार प्रदोष व्रत में शिव पूजन के प्रभाव से वह राजकुमार दुर्लभ पद को प्राप्त हुआ । जो मनुष्य प्रदोष काल में अथवा नित्य ही इस कथा को श्रवण करता है, वह निश्चय ही सभी कष्टों से मुक्त हो जाता है और अंत में वह परम पद का अधिकारी बनता है ।

(4)

समाप्त

उद्यापन विधि

प्रातः स्नानादि कार्य से निवृत होकर रंगीन वस्त्रो से मण्डप बनायें। फिर उस मण्डप में शिव-पार्वती की प्रतिमा स्थापित करके विधिवत् पूजन करें तदन्तर शिव-पार्वती के उद्देश्य से खीर से अग्नि में हवन करना चाहिए । हवन करते समय ॐ उमा सहित-शिवाये नमः मन्त्र से 108 बार आहुति देनी चाहिए । इसी ॐ नमः शिवाय के उच्चारण से शंकर जी के निमित आहुति प्रदान करें । हवन के अन्त में ब्राह्मण को दान देना चाहिए । ब्राह्मणों की आज्ञा पाकर अपने बंधु-बान्धवों को साथ लेकर भगवान् शंकर का स्मरण करते हुए व्रती को भोजन करना चाहिए । इस प्रकार उद्यापन करने से व्रती पुत्र-पौत्रादि से युक्त होता है तथा आरोग्य लाभ पाता हैं । ऐसा स्कन्द पुराण में कहा गया है ।



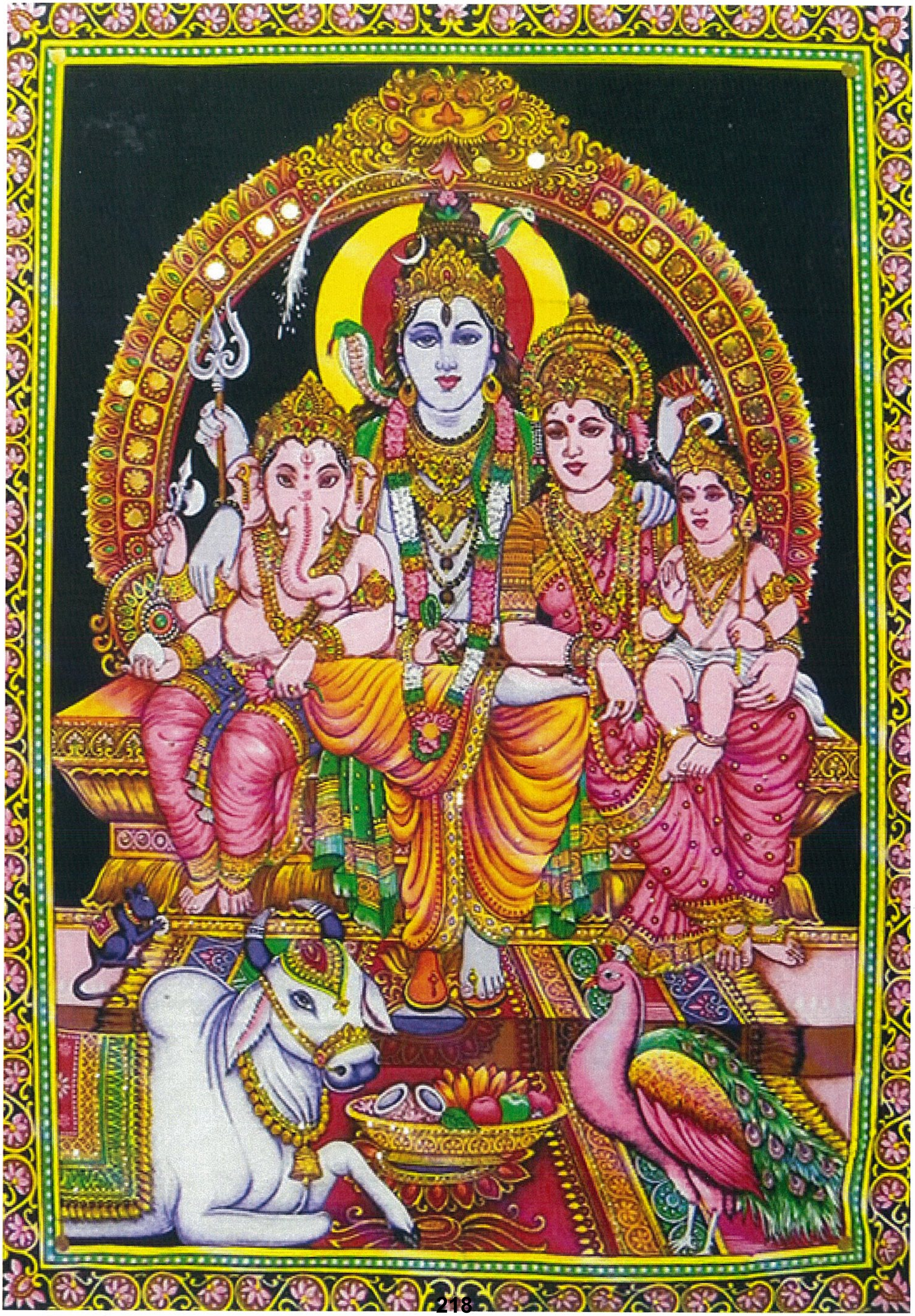
विधि :

सोमवार का व्रत साधारणतया दिन के तीसरे पहर तक होता है । व्रत में फलाहार या पारण का कोई खास नियम नही है किन्तु यह आवश्यक है कि दिन रात मे केवल एक समय भोजन करे । सोमवार के व्रत मे शिवजी पार्वती का पूजन करना चाहिए । सोमवार के व्रत तीन प्रकार के है - साधारण प्रति सोमवार, सौम्य प्रदोष और सोलह सोमवार विधि तीनो की एक जैसी है । शिव पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए । प्रदोष व्रत, सोलह सोमवार कथा तीनो की अलग-अलग है जो आगे लिखी गई है ।

सौम्य प्रदोष व्रत कथा प्रारम्भ

पूर्वकाल मे एक ब्राह्मणी अपने पति की मृत्यु के पश्चात् निराधार होकर भिक्षा मांगने लग गई । वह प्रात: होते ही अपने पुत्र को साथ लेकर बाहर निकल जाती ओर संध्या होने पर घर वापिस लौटती । एक समय उसको विर्दभ देश का राजकुमार मिला जिसके पिता की शत्रुओ ने उसको मारकर राज्य से बाहर निकाल दिया था । इस कारण वह मारा-मारा फिरता था । ब्राह्मणी उसे अपने साथ घर ले गई ओर उसका पालन पोषण करने लगी । एक दिन उन दोनो बालको ने बन मे खेलते खेलते गन्धर्व कन्याओ को देखा । ब्राह्मण का बालक तो अपने घर आ गया परन्तु राजकुमार साथ नही आया क्योकि वह अंशुमति नाम की गन्धर्व कन्या से बाते करने लगा था दूसरे दिन वह फिर अपने घर से आया वहां पर अंशुमति अपने माता-पिता के साथ बैठी थी । उधर ब्राह्मणी ऋषियों की आज्ञा से प्रदोष का व्रत करती थी कुछ दिन पश्चात् अंशुमति के माता-पिता ने राजकुमार से कहा कि तुम विदर्भ देश के राजकुमार धर्मगुप्त हो, हम श्री शंकरजी की आज्ञा से अपनी पुत्री अंशुमति का विवाह तुम्हारे साथ कर देते है । फिर राजकुमार का विवाह अंशुमति के साथ हो गया । बाद मे राजकुमार ने गन्धर्वराज की सेना की सहायता से विदर्भ देश पर अधिकार कर लिया । ब्राह्मण के पुत्र को अपना मंत्री बना लिया। यथार्थ यह सब उस ब्राह्मणी के प्रदोष व्रत करने का फल था। बस उसी समय से यह प्रदोष व्रत संसार मे प्रतिष्ठित हुआ ।

॥ समाप्त ॥



मंगला गौरी व्रत

मंगला गौरी व्रत श्रावण मास में आने वाले सभी मंगलवारों को किया जाता है । इस व्रत में गौरी जी के पूजन का विधान है । चूंकि यह मंगलवार को किया जाता है, इसीलिए इसे 'मंगला गौरी व्रत' कहा जाता है । यह व्रत विशेषतौर पर स्त्रियों द्वारा किया जाता है ।

पूजन विधान :

इस दिन सुबह स्नानादि करके एक चौकी पर एक सफेद और एक लाल कपड़ा बिछाएं । सफेद कपड़े पर नवग्रहों के नाम की चावल की नौ ढेरियां तथा लाल कपड़े पर षोडश मातृका की गेहूं की सोलह ढेरियां बनाए । उसी चौकी के एक तरफ चावल और फूल रखकर गणेश जी की मूर्ति की स्थापना करें । चौकी के एक कोने पर गेहूं की एक छोटी सी ढेरी रखकर उसपर जल से भरा कलश रखें। कलश में आम के इस छोटी सी शाखा डाल दें । फिर आटे का एक चार मुंह वाला दीपक और सोलह धूप बत्ती जलाएं । फिर सबसे पहले गणेश जी का पूजन करें । उम पर चंदन, रोली, पान, सुपारी, सिंदुर, पंचामृत, जनेऊ, चावल, फूल, सुपारी, बेल पत्ते, इलायची, मेवा, प्रसाद तथा दक्षिणा चढ़ाकर गणेश जी की आरती करें । इसके बाद कलश का पूजन करें ।
एक मिट्टी के सकोरे में आटा रखकर उस पर सुपारि रखें और दक्षिणा आटे में दबा दें । फिर बेल पत्ते चढाएं । अब गणेश जी की तरह ही सब सामग्री के साथ कलश का पूजन करें । परन्तु कलश पर सिंदूर तथा बेल पत्ते ना चढाएं ।
इसके उपरान्त नवग्रहों अर्थात चावल की नौ ढेरियों की पूजा करें । उसके बाद षोडश माता की बनी हुई सोलह गेहुं की ढेरियों की पूजा करें । इन पर रोली व जनेऊ ना चढाएं । मेंहदी, हल्दी तथा सिंदूर चढाएं । इनका पूजन भी कलश तथा गणेश जी के पूजन की तरह ही करं ।
अंत में मंगला गौरी का पूजन करें । मंगला गौरी के पूजन के लिए एक थाली में चकला रख लें और उस पर मंगला गौरी की मिट्टी की मूर्ति बनाएं या मिट्टी की पाँच डलियां रखकर उन्हे मंगला गौरी मान लें । आटे की लोई बनाकर रख लें । सबसे पहले मंगला गौरी को पंचामृत (जल, दूध, घी, दही और चीनी) बनाकर स्नान कराएं । उसके उपरान्त उन्हे वस्त्र पहनाएं फिर नथ, काजल, सिंदूर, चंदन, हल्दी, मेंहदी आदि से श्रृंगार करें ।
उसके बाद १६ प्रकार के फूल, १६ माला, १६ प्रकार के पत्ते, १६ फल, १६ लौंग, १६ इलायची, १६ आटे के लड्डू, १६ जीरा, १६ धनिया, १६ बार सात तरह का अनाज, ५ प्रकार का मेवा, रोली, मेंहदी, काजल, सिंदूर, तेल, कंधा, शीशा, १६ चूड़ियाँ, एक रूपया और वेदी दो, उन पर दक्षिणा चढ़ाकर मंगला गौरी की कथा सुनें । चौमुख दीपक बनाकर उसमें १६ तार की चार बत्ती बनाएं और कपूर से आरती उतारें । इसके बाद १६ लड्डुओं का भायना अपनी सास को देकर आशीर्वाद लें । इसके बाद बिना नामक की एक ही अनाज की रोटी कइ भोजन कर लें । इसके दूसरे दिन मंगला गौरी को समीप के कुंए, तालाब, नदी आदि में विसर्जित करके भोजन करें ।

मंगला गौरी व्रत कथा

मंगल को वैवाहिक जीवन के लिए अमंगलकारी माना जाता है क्योंकि कुण्डली में मंगल की विशेष स्थिति के कारण ही मंगलिक योग बनता है जो दांपत्य जीवन में कलह और विभिन्न समस्याओं का कारण बनता है।

मंगल की शांति के लिए मंगलवार का व्रत और हनुमान जी की पूजा को उत्तम माना जाता है। लेकिन अन्य दिनों की अपेक्षा सावन मास के मंगल का विशेष महत्व है। शास्त्रों में खास तौर पर स्त्रियों के लिए सावन मास के मंगल को सौभाग्य दायक बताया गया है।

शास्त्रों के अनुसार जो नवविवाहित स्त्रियां सावन मास में मंगलवार के दिन व्रत रखकर मंगला गौरी की पूजा करती हैं उनके पति पर आने वाला संकट टल जाता है और वह लंबे समय तक दांपत्य जीवन का आनंद प्राप्त होता हैं। आज यही शुभ व्रत है। इस व्रत से दोष की शांति कर सकते हैं और दांपत्य जीवन को खुशहाल बना सकते हैं।

मंगला गौरी व्रत कथा

इस व्रत के विषय में कथा है कि एक सेठ का कोई पुत्र नहीं था। काफी प्रतीक्षा के बाद उसे एक संतान की प्राप्ति हुई, लेकिन उसकी आयु कम थी। सोलहवें वर्ष में सांप के काटने से उसकी मृत्यु होनी थी। संयोग से उसकी शादी एक ऐसी कन्या से हुई जिसकी मां मंगला गौरी का व्रत करती थी। इस व्रत के प्रभाव के कारण उत्पन्न कन्या के जीवन में वैधव्य का दुःख आ नहीं सकता था। इससे सेठ के पुत्र की अकाल मृत्यु टल गयी और वह दीर्घायु हो गया।

व्रत की विधि

इस व्रत की विधि के विषय में बताया गया है कि व्रत करने वाले को माता मंगला गौरी की प्रतिमा को सामने रखकर संकल्प करना चाहिए कि वह संतान, सौभाग्य और सुख की प्राप्ति के लिए मंगला गौरी का व्रत रख रही है।

व्रती को एक आटे का दीपक बनाकर उसमें सोलह बातियां जलानी चाहिए इसके बाद सोलह लड्डू,सोलह फल,सोलह पान,सोलह लवंग और ईलायची के साथ सुहाग की सामग्री माता के सामने रखकर उनकी पूजा करें। पूजा के बाद लड्डू सासु मां को दें और शेष सामग्री किसी ब्राह्मण को दें। अगले दिन मंगला गौरी की प्रतिमा को नदी अथवा तालाब में विसर्जित कर दें।

पुरूष क्या करें

ज्योतिषशास्त्र के अनुसार इस व्रत से मंगलिक योग का कुप्रभाव भी काम होता है। पुरूषों को इस दिन मंगलवार का व्रत रखकर भगवान शिव और माता पार्वती की पूजा करनी चाहिए। इससे उनकी कुण्डली में मौजूद मंगल का अशुभ प्रभाव कम होता है और दांपत्य जीवन में खुशहाली आती है।

उद्यापन विधि

मंगला गौरी का उद्यापन सावन के सोलह या बीस मंगलवार के व्रत करने के बाद करना चाहिए । उद्यापन के दिन कुछ ना खाएं । इस दिन ब्राह्मण द्वारा हवन कराकर कथा सुनने और ब्राह्मण को भोजन कराकर दक्षिणा दें । साथ ही अपनी सास को कपड़ा, सुहाग पिटारी रूपये देकर आशीर्वाद प्राप्त करें । अन्त में सबको भोजन कराने के उपरान्त स्वयं भी भोजन ग्रहण करें ।

मंगळा गौरी आरती

मंगळागौरी नाम तुझे । तुला नमन असो माझे ।।
भवदु:खाचे हे ओझे । देवी उतारवे सहजे ।।१।।
जय माये मंगळागौरी । तुजला पुजूं अंतरी ।।
नाना विधिउपचारी । दीप ओवाळूं सुंदर ।।धृ०।।
गजाननाची तूं माता । शंकराची प्रिय कांता ।।
हिमाचलाची तूं दुहिता । मज तारिं तारिं आतां ।। जय.।।२।।
लागे तुझ्या चरणाशी । जाळी पापांचिया राशी ।। जय. ।।३।।
भक्ति ठसावी मानसी । अंबे न्यावे पायांपाशी ।। जय. ।।४।।
गौरी ओवाळित्ये दीप । नेणें तुझे नामरुप ।।
वाढवावे सौभाग्य अमूप । विश्वाची तूं मायबाप ।। जय. ।।५।।


drikPanchang.com

हरतालिका तीज व्रत

भाद्रपद की शुक्ल तृतिया को हस्त नक्षत्र होता है । इस दिन भगवान् शिव और माता पार्वती की पूजा की जाती है । इस व्रत को कुमारी तथा सौभाग्यवती स्त्रियाँ ही करती है । इस व्रत को करने वाली स्त्रियाँ पार्वती के समान सुखपूर्वक पतिरमण करके स्वंग को जाती है ।

इस दिन स्त्रियाँ को निराहार रहकर, शाम के समय स्नान करके तथा शुद्ध वस्त्र धारण कर पार्वती तथा शिव की मिट्टी की प्रतिमा बनाकर पूजन की समय पूजा करनी चाहिए । इस दिन घर पर ही सुबह, दोपहर और शाम को पूजा करनी चाहिए । शाम को स्नान कर के विशेष पूजा के बाद व्रत खोला जाता है ।

सुहाग की पिटारी में सुहाग की सारी वस्तुएं रखकर पार्वती को चढ़ानी चाहिए तथा शिवजी को धोती और अंगोछा चढ़ाया जाता है । पूजा के बाद यह सुहाग सामग्री किसी ब्राह्मणी तथा धोती और अंगोछा ब्राह्मण को देकर तेरह प्रकार के मीठे व्यंजन सजाकर रूपयों सहित अपनी सास को देकर आर्शिवाद प्राप्त करें । इस प्रकार शिव-पार्वती का पूजन करने के बाद कथा सुननी चाहिए । इस तरह व्रत करने से स्त्रियों को सौभाग्य प्राप्त होता है ।

हरतालिका तीज कथा

कहते है कि इस व्रत के माहात्म्य की कथा भगवान् शिव ने पार्वती जी को उनके पूर्व जन्म का स्मरण करवाने के मकसद से इस प्रकार से कही थी --

हे गौरी! पर्वतराज हिमालय पर गंगा के तट पर तुमने अपनी बाल्यावस्था में अधोमुखी होकर घोर तप किया था । इस अवधि में तुमने अन्न ना खा कर केवल हवा का ही सेवन किया था । इतनी अवधि तुमने शूखे पत्ते चबाकर काटी था ।

माघ की शीतलता में तुमने निरन्तर जल में प्रवेश कर तप किया था । वैशाख की जला देने वाली गर्मी में पंचाग्नि से शरीर को तपाया । श्रावण की मूसलाधार वर्षा में खुले आसमान के नीचे बिना अन्न जल ग्रहण किए व्यतीत किया ।

तुम्हारी इस कष्ट दायक तपस्या को देखकर तुम्हारे पिता बहुत दु:खी और नाराज होते थे । तब एक दिन तुम्हारी तपस्या और पिता की नाराजगी को देखकर नारद जी तुम्हारे घर पधारे ।

तुम्हारे पिता द्वारा आने का कारण पूछने पर नाराद जी बोले - 'हे गिरिराज! मैं भगवान् विष्णु के भेजने पर यहाँ आया हूं । आपकी कन्या की घोर तपस्या से प्रसन्न होकर वह उससे विवाह करना चहाते है ।इस बारे में मैं आपकी राय जानना चहाता हूं ।'

नारदजी की बात सुनकर पर्वतराज अति प्रसन्नता के साथ बोले - ' श्रीमान् ! यदि स्वयं विष्णु मेरी कन्या का वरण करना चाहते है तो मुझे क्या अपत्ति हो सकती है । वे तो साक्षार्त ब्रह्म है । यह तो हर पिता की इच्छा होती है कि उसकी पुत्री सुख-संपदा से युक्त पति के घर की लक्ष्मी बने ।'

नारदजी तुम्हारे पिता की स्वीकृति पाकर विष्णुजी के पास गए और उन्हे विवाह तय होने का समाचार सुनाया । परन्तु जब तुम्हे इस विवाह के बारे में पता चला तो तुम्हारे दु:ख का ठिकाना ना रहा । तुम्हे इस प्रकार से दु:खी देखकर तुम्हारी एक सहेली ने तुम्हारे दु:ख का कारण पूछने पर तुमने बताया - 'मैनें सच्चे मन से भगवान् शिव का वरण किया है, किन्तु मेरे पिता ने मेरा विवाह विष्णु जी के साथ तय कर दिया है । मैं विचित्र धर्मसंकट में हूं । अब मेरे पास प्राण त्याग देने के अलावा कोई और उपाय नहीं बचा ।'

(१)

क्रमशः

तुम्हारी सखी बहुत ही समझदार थी । उसने कहा - 'प्राण छोड़ने का यहां कारण ही क्या है? संकट के समय धैर्य से काम लेना चाहिए । भारतीय नारी के जीवन की सार्थकता इसी में है कि जिसे मन से पति रूप में एक बार वरण कर लिया, जीवनपर्यन्त उसी से निर्वाह करे । सच्ची आस्था और एकनिष्ठा के समक्ष तो भगवान् भी असहाय हैं । मैं तुम्हे घनघोर वन में ले चलती हूं जो साधना थल भी है और जहां तुम्हारे पिता तुम्हे खोज भी नहीं पाऐंगे । मुझे पूर्ण विश्वास है कि ईश्वर अवश्य ही तुम्हारी सहायता करेंगे ।'

तुमने ऐसा ही किया । तुम्हारे पिता तुम्हे घर में ना पाकर बड़े चिंतित और दु:खी हुए । वह सोचने लगे कि मैनें तो विष्णु जी से अपनी पुत्री का विवाह तय कर दिया है । यदि भगवान् विष्णु बारात लेकर आ गए और कन्या घर पर नहीं मिली तो बहुत अपमान होगा , ऐसा विचार कर पर्वतराज ने चारों ओर तुम्हारी खोज शुरु करवा दी । इधर तुम्हारी खोज होती रही उधर तुम अपनी सहेली के साथ नदी के तट पर एक गुफा मे मेरी आराधना में लीन रहने लगीं । भाद्रपद तृतीय शुक्ल को हस्त नक्षत्र था । उस दिन तुमने रेत के शिवलिंग का निर्माण किया । रात भर मेरी स्तुति में गीत गाकर जागरण किया तुम्हारी इस कठोर तपस्या के प्रभाव से मेरा आसन हिल उठा और मैं शीर्घ ही तुम्हारे पास पहुँचा और तुमसे वर माँगने को कहा तब अपनी तपस्या के फलीभूत मुझे अपने समक्ष पाकर तुमने कहा - ' मैं आपको सच्चे मन से पति के रुप में वरण कर चुकी हूँ । यदि आप सचमुच मेरी तपस्या से प्रसन्न होकर यहाँ पधारे है तो मुझे अपनी अर्द्धांगिनी के रुप मे स्वीकार कर लीजिए ।'तब 'तथास्तु' कहकर मैं कैलाश पर्वत पर लौट गया प्रात: होते ही तुमने पूजा की समस्त सामग्री नदी में प्रवाहित करके अपनी सखी सहित व्रत का वरण किया । उसी समय गिरिराज अपने बंधु-बांधवों के साथ तुम्हे खोजते हुए वहाँ पहुंचे । तुम्हारी दशा देखकर अत्यन्त दु:खी हुए और तुम्हारी इस कठोर तपस्या का कारण पूछा ।तब तुमने कहा - 'पिताजी मैनें अपने जीवन का अधिकांश वक्त कठोर तपस्या मे बिताया है। मेरी इस तपस्या के केवल उद्देश्य महादेवजी को पति रुप में प्राप्त

(२)

क्रमश:

करना था । आज मैं अपनी तपस्या की कसौटी पर खरी उतर चुकीं हूं । चूकिं आप मेरा विवाह विष्णुजी से करने का निश्चय कर चुके थे, इसीलिए मैं अपने आराध्य की तलाश में घर से चली गई । अब मैं आप के साथ घर इसी शर्त पर चलूंगी कि आप मेरा विवाह महादेव जी के साथ ही करेंगे। पर्वतराज ने तुम्हारी इच्छा स्वीकार कर ली और तुम्हे घर वापस ले आए । कुछ समय बाद उन्होने पूरे विधि-विधान के साथ हमारा विवाह किया।

भगवान् शिव ने आगे कहा - ' हे पार्वती ! भाद्रपद की शुक्ल तृतीया को तुमने मेरी आराधना करके जो व्रत किया था, उसी के परिणाम स्वरुप हम दोनों का विवाह संभव हो सका । इस व्रत का महत्त्व यह है कि मैं इस व्रत को पूर्ण निष्ठा से करने वाली प्रत्येक स्त्री को मनवांछित फल देता हूं । इस व्रत को 'हरतालिका' इसलिए कहा जाता है क्योकिं पार्वती की सखी उन्हे पिता और प्रदेश से हर कर जंगल में ले गई थी । 'हरत' अर्थात हरण करना और 'आलिका' अर्थात सखी ।

भगवान् शिव ने पार्वती जी से कहा कि इस व्रत को जो भी स्त्री पूर्ण श्रद्धा से करेगी उसे तुम्हारी तरह अचल सुहाग प्राप्त होगा ।

समाप्त

(३)

श्री हरितालिकेची आरती

जय देवी हरितालिके। सखी पार्वती अंबिके। आरती ओवाळीतें।
ज्ञानदीपकळिके ।। धृ ।।

हरअर्धांगी वससी । जासी यज्ञा माहेरासी ।
तेथें अपमान पावसी । यज्ञकुंडींत गुप्त होसी ।। जय... ।।१।।

रिघसी हिमाद्रीच्या पोटी । कन्या होसी तू गोमटी ।
उग्र तपश्चर्या मोठी । आचरसी उठाउठी ।। जय... ।।२।।

तापपंचाग्निसाधनें । धूम्रपानें अधोवदनें ।
केली बहु उपोषणें । शंभु भ्रताराकारणें ।। जय...।।३।।

लीला दाखविसी दृष्टी । हें व्रत करिसी लोकांसाठी ।
पुन्हां वरिसी धूर्जटी । मज रक्षावें संकटीं ।। जय...।।४।।

काय वर्णं तव गुण । अल्पमति नारायण ।
मातें दाखवीं चरण । चुकवावें जन्म मरण ।। जय... ।।५।।


हर हर
महादेव
© BRIJBASI-115

पूर्णमासी व्रत कथा

पूजन सामग्री

दूध, दही, घी, शर्करा, गंगाजल, रोली, मौली, ताम्बूल, पूंगीफल, धूप, फूल (सफेद कनेर), यज्ञोपवीत, श्वेत वस्त्र, लाल वस्त्र, आक, बिल्व-पत्र, फूलमाला, धतूरा, बांस की टोकरी, आम के पत्ते, चावल, तिल, जौ, नारियल (पानी वाला), दीपक, ऋतुफल, अक्षत, नैवेद्य, कलष, पंचरंग, चन्दन, आटा, रेत, समिधा, कुश, आचार्य के लिए वस्त्र, शिव-पार्वती की स्वर्ण मूर्ति (अथवा पार्थिव प्रतिमा), दूब, आसन आदि।

पूजन विधि

पूजन करने वाला व्यक्ति प्रातःकाल स्नान आदि से निवृत्त होकर किसी पवित्र स्थान पर आटे से चैक पूर कर केले का मण्डप बनाकर शिव-पार्वती की प्रतिमा बनाकर स्थापित करे। तत्पश्चात् नवीन वस्त्र धारण कर आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर देशकालादि के उच्चारण के साथ हाथ में जल लेकर संकल्प करें। उसके बाद गणेश जी का आवाहन व पूजन करें। अनन्तर वरुणादि देवों का आवाहन करके कलश पूजन करें, चन्दन आदि समर्पित करें, कलश मुद्रा दिखाएं, घण्टा बजायें। गन्ध अक्षतादि द्वारा घण्टा एवं दीपक को नमस्कार करें। इसके बाद 'ओम अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोअपि वा। यः स्मरेत पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः' इस मन्त्र द्वारा पूजन सामग्री एवं अपने ऊपर जल छिड़कें। इन्द्र आदि अष्टलोकपालों का आवाहन एवं पूजन करें। निम्नलिखित मन्त्र से शिव जी को स्नान करायें -

मन्दार मालाकुलिजालकायै, कपालमालाकिंतशेखराय। दिव्याम्बरायै च सरस्वती रेवापयोश्णीनर्मदाजलैः। स्नापितासि मया देवि तेन शान्ति पुरुष्व मे।

निम्नलिखित मन्त्र से पार्वती जी को स्नान करायें - नमो देव्यै महादेव्यै सततम नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणता स्मताम्। इसके बाद पंचोपचार पूजन करें। चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप दिखाएं। फिर नैवेद्य चढ़ाकर आचमन करायें। अनन्तर हाथों के लिए उबटन समर्पण करें। फिर सुपारी अर्पण करें, दक्षिणा भेंट करें और नमस्कार करें। इसके बाद उत्तर की ओर निर्माल्य का विसर्जन करके महा अभिषेक करें। अनन्तर सुन्दर वस्त्र समर्पण करें, यज्ञोपवीत धारण करायें। चन्दन, अक्षत और सप्तधान्य समर्पित करें। फिर हल्दी, कुंकुम, मांगलिक सिंदूर आदि अर्पण करें। ताड़पत्र (भोजपत्र), कण्ठ की माला आदि समर्पण करें। सुगन्धित पुष्प चढ़ायें तथा धूप दें। दीप दिखाकर नैवेद्य समर्पित करें। फिर हाथ मुख धुलाने के लिए जल छोड़ें। चन्दन अर्पित करें। नारियल तथा ऋतुफल चढ़ायें। ताम्बूल सुपारी और दक्षिणा द्रव्य चढ़ायें। कपूर की आरती करें और पुष्पांजलि दें। सब प्रकार से पूजन करके कथा श्रवण करें।

अथ पूर्णमासी व्रत कथा

द्वापर युग में एक समय की बात है कि यशोदा जी ने कृष्ण से क़हा - हे कृष्ण! तुम सारे संसार के उत्पन्नकर्ता, पोषक तथा उसके संहारकर्ता हो, आज कोई ऐसा व्रत मुझसे कहो, जिसके करने से मृत्युलोक में स्त्रियों को विधवा होने का भय न रहे तथा यह व्रत सभी मनुष्यों की मनोकामनाएं पूर्ण करने वाला हो। श्रीकृष्ण कहने लगे - हे माता! तुमने अति सुन्दर प्रश्न किया है। मैं तुमसे ऐसे ही व्रत को सविस्तार कहता हूँ। सौभाग्य की प्राप्ति के लिए स्त्रियों को बत्तीस पूर्णमासियों का व्रत करना चाहिए। इस व्रत के करने से स्त्रियों को सौभाग्य सम्पत्ति मिलती है। यह व्रत अचल सौभाग्य देने वाला एवं भगवान् शिव के प्रति मनुष्य-मात्र की भक्ति को बढ़ाने वाला है। यशोदा जी कहने लगीं - हे कृष्ण! सर्वप्रथम इस व्रत को मृत्युलोक में किसने किया था, इसके विषय में विस्तारपूर्वक मुझसे कहो।

श्रीकृष्ण जी कहने लगे कि इस भूमण्डल पर एक अत्यन्त प्रसिद्ध राजा चन्द्रहास से पालित अनेक प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण 'कातिका' नाम की एक नगरी थी। वहां पर धनेश्वर नाम का एक ब्राह्मण था और उसकी स्त्री अति सुशीला रूपवती थी। दोनों ही उस नगरी में बड़े प्रेम के साथ रहते थे। घर में धन-धान्य आदि की कमी नहीं थी। उनको एक बड़ा दुख था कि उनके कोई सन्तान नहीं थी, इस दुख से वह अत्यन्त दुखी रहते थे। एक समय एक बड़ा तपस्वी योगी उस नगरी में आया। वह योगी उस ब्राह्मण के घर को छोड़कर अन्य सब घरों से भिक्षा लाकर भोजन किया करता था। रूपवती से वह भिक्षा नहीं लिया करता था। उस योगी ने एक दिन रूपवती से भिक्षा न लेकर किसी अन्य घर से भिक्षा लेकर गंगा किनारे जाकर, भिक्षान्न को प्रेमपूर्वक खा रहा था कि धनेश्वर ने योगी का यह सब कार्य किसी प्रकार से देख लिया।

अपनी भिक्षा के अनादर से दुखी होकर धनेश्वर योगी से बोला - महात्मन्! आप सब घरों से भिक्षा लेते हैं परन्तु मेरे घर की भिक्षा कभी भी नहीं लेते, इसका कारण क्या है? योगी ने कहा कि निःसन्तान के घर की भीख पतितों के अन्न के तुल्य होती है और जो पतितों का अन्न खाता है वह भी पतित हो जाता है। चूंकि तुम निःसन्तान हो, अतः पतित हो जाने के भय से मैं तुम्हारे घर की भिक्षा नहीं लेता हूँ। धनेश्वर यह बात सुनकर अपने मन में बहुत दुखी हुआ और हाथ जोड़कर योगी के पैरों पर गिर पड़ा तथा आर्तभाव से कहने लगा - हे महाराज! यदि ऐसा है तो आप मुझको पुत्र प्राप्ति का उपाय बताइये। आप सर्वज्ञ हैं, मुझ पर अवश्य ही यह कृपा कीजिए। धन की मेरे घर में कोई कमी नहीं, परन्तु मैं पुत्र न होने के कारण अत्यन्त दुखी हूं। आप मेरे इस दुख का हरण करें, आप सामर्थ्यवान हैं। यह सुनकर योगी कहने लगे - हे ब्राह्मण! तुम चण्डी की आराधना करो। घर आकर उसने अपने स्त्री से सब वृत्तान्त कहा और स्वयं तप के निमित्त वन में चला गया। वन में जाकर उसने चण्डी की उपासना की और उपवास किया। चण्डी ने सोलहवें दिन उसको स्वप्न में दर्शन दिया और कहा - हे धनेश्वर! जा तेरे पुत्र होगा, परन्तु वह सोलह वर्ष की आयु में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा। यदि तुम दोनों स्त्री-पुरुष बत्तीस पूर्णमासियों का व्रत विधिपूर्वक करोगे तो वह दीर्घायु होगा। जितनी तुम्हारी सामर्थ्य हो आटे के दिये बनाकर शिव जी का पूजन करना, परन्तु पूर्णमासी

को बत्तीस जो जाने चाहिए। प्रातःकाल हाने पर इस स्थान के समीप ही तुम्हें एक आम का वृक्ष दिखाई देगा, उस पर तुम चढ़कर एक फल तोड़कर शीघ्र अपने घर चले जाना, अपनी स्त्री से सब वृत्तान्त कहना। ऋतु-स्नान के पश्चात वह स्वच्छ होकर, श्रीशंकर जी का ध्यान करके उस फल को खा लेगी। तब शंकर भगवान् की कृपा से उसको गर्भ हो जायगा। जब वह ब्राह्मण प्रातःकाल उठा तो उसने उस स्थान के पास ही एक आम का वृक्ष देखा जिस पर एक अत्यन्त सुन्दर आम का फल लगा हुआ था। उस ब्राह्मण ने उस आम के वृक्ष पर चढ़कर उस फल को तोड़ने का प्रयत्न किया, परन्तु वृक्ष पर कई बार प्रयत्न करने पर भी वह न चढ़ पाया। तब तो उस ब्राह्मण को बहुत चिन्ता हुई और विघ्न-विनाशक श्रीगणेश जी की वन्दना करने लगा - हे दयानिधे! अपने भक्तों के विघ्नों का नाश करके उनके मंगल कार्य को करने वाले, दुष्टों का नाश करने वाले, ऋद्धि-सिद्धि के देने वाले, आप मुझ पर कृपा करके इतना बल दें कि मैं अपने मनोरथ को पूर्ण कर सकूं। इस प्रकार गणेश जी की प्रार्थना करने पर उनकी कृपा से धनेश्वर वृक्ष पर चढ़ गया और उसने एक अति सुन्दर आम का फल देखा। उसने विचार किया कि जो वरदान से फल मिला था वह यह है, और कोई फल दिखाई नहीं देता, उस धनेश्वर ब्राह्मण ने जल्दी से उस फल को तोड़कर अपनी स्त्री को लाकर दिया और उसकी स्त्री ने अपने पति के कथनानुसार उस फल को खा लिया और वह गर्भवती हो गई। देवी जी की असीम कृपा से उसे एक अत्यन्त सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उन्होंने देवीदास रखा। माता-पिता के हर्ष और शोक के साथ वह बालक शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की भांति अपने पिता के घर में बढ़ने लगा। भवानी की कृपा से वह बालक बहुत ही सुन्दर, सुशील और विद्या पढ़ने में बहुत ही निपुण हो गया। दुर्गा जी की आज्ञानुसार उसकी माता ने बत्तीस पूर्णमासी का व्रत रखना प्रारम्भ कर दिया था, जिससे उसका पुत्र बड़ी आयु वाला हो जाए।

सोलहवां वर्ष लगते ही देवीदास के माता-पिता को बड़ी चिन्ता हो गई कि कहीं उनके पुत्र की इस वर्ष मृत्यु न हो जाए। इसलिए उन्होंने अपने मन में विचार किया कि यदि यह दुर्घटना उनके सामने हो गई तो वे कैसे सहन कर सकेंगे? अस्तु उन्होंने देवीदास के मामा को बुलाया और कहा कि हमारी इच्छा है कि देवीदास एक वर्ष तक काशी में जाकर विद्याध्ययन करे और उसको अकेला भी नहीं छोड़ना चाहिए। इसलिए साथ में तुम चले जाओ और एक वर्ष के पष्चात् इसको वापस लौटा लाना। सब प्रबन्ध करके उसके माता-पिता ने काशी जाने के लिए देवीदास को एक घोड़े पर बैठाकर उसके मामा को उसके साथ कर दिया, किन्तु यह बात उसके मामा या किसी और से नहीं कही। धनेश्वर ने सपत्नीक अपने पुत्र की मंगलकामना तथा दीर्घायु के लिए भगवती दुर्गा की आराधना और पूर्णमासियों का व्रत करना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार बराबर बत्तीस पूर्णमासी का व्रत पूरा किया।

कुछ समय पश्चात् एक दिन वह दोनों - मामा और भान्जा मार्ग में रात्रि बिताने के लिए किसी ग्राम में ठहरे हुए थे, उस दिन उस गांव में एक ब्राह्मण की अत्यन्त सुन्दरी, सुशीला, विदुषी और गुणवती कन्या का विवाह होने वाला था। जिस धर्मशाला के अन्दर वर और उसकी बारात ठहरी हुई थी, उसी धर्मशाला में

देवीदास और उसके मामा भी ठहरे हुए थे। संयोगवश कन्या को तेल आदि चढ़ाकर मण्डप आदि का कृत्य किया गया तो लग्न के समय वर को धनुर्वात हो गया। अस्तु, वर के पिता ने अपने कुटुम्बियों से परामर्ष करके निश्चय किया कि यह देवीदास मेरे पुत्र जैसा ही सुन्दर है, मैं इसके साथ ही लग्न करा दूं और बाद में विवाह के अन्य कार्य मेरे लड़के के साथ हो जाएंगे। ऐसा सोचकर देवीदास के मामा से जाकर बोला कि तुम थोड़ी देर के लिए अपने भान्जे को हमें दे दो, जिससे विवाह के लग्न का सब कृत्य सुचारु रूप से हो सके। तब उसका मामा कहने लगा कि जो कुछ भी मधुपर्क आदि कन्यादान के समय वर को मिले वह सब हमें दे दिया जाए, तो मेरा भान्जा इस बारात का दूल्हा बन जाएगा। यह बात वर के पिता ने स्वीकार कर लने पर उसने अपना भान्जा वर बनने को भेज दिया और उसके साथ सब विवाह कार्य रात्रि में विधिपूर्वक सम्पन्न हो गया। पत्नी के साथ वह भोजन न कर सका और अपने मन में सोचने लगा कि न जाने यह किसी स्त्री होगी। वह एकान्त में इसी सोच में गरम निःश्वास छोड़ने लगा तथा उसकी आंखों में आंसू भी आ गए। तब वधू ने पूछा कि क्या बात है? आप इतने उदासीन व दुखी क्यों हो रहे हैं? तब उसने सब बातें जो वर के पिता व उसके मामा में हुई थीं उसको बतला दी। तब कन्या कहने लगी कि यह ब्रह्म विवाह के विपरीत हो कैसे सकता है। देव, ब्राह्मण और अग्नि के सामने मैंने आपको ही अपना पति बनाया है इसलिए आप ही मेरे पति हैं। मैं आपकी ही पत्नी रहूंगी, किसी अन्य की कदापि नहीं। तब देवीदास ने कहा - ऐसा मत करिए क्योंकि मेरी आयु बहुत थोड़ी है, मेरे पश्चात् आपकी क्या गति होगी इन बातों को अच्छी तरह विचार लो। परन्तु वह दृढ़ विचार वाली थी, बोली कि जो आपकी गति होगी वही मेरी गति होगी। हे स्वामी! आप उठिये और भोजन करिए, आप निश्चय ही भूखे होंगे। इसके बाद देवीदास और उसकी पत्नी दोनों ने भोजन किया तथा शेष रात्रि वे सोते रहे। प्रातःकाल देवीदास ने अपनी पत्नी को तीन नगों से जड़ी हुई एक अंगूठी दी, एक रूमाल दिया और बोला - हे प्रिये! इसे लो और संकेत समझकर स्थिर चित्त हो जाओ। मेरा मरण और जीवन जानने के लिए एक पुष्पवाटिका बना लो। उसमें सुगन्धि वाली एक नव-मल्लिका लगा लो, उसको प्रतिदिन जल से सींचा करो और आनन्द के साथ खेलो-कूदो तथा उत्सव मनाओ, जिस समय और जिस दिन मेरा प्राणान्त होगा, ये फूल सूख जाएंगे और जब ये फिर हरे हो जाएं तो जान लेना कि मैं जीवित हूँ। यह बात निश्चय करके समझ लेना इसमें कोई संशय नहीं है। यह समझा कर वह चला गया। प्रातःकाल होते ही वहां पर गाजे-बाजे बजने लगे और जिस समय विवाह के कार्य समाप्त करने के लिए वर तथा सब बाराती मण्डप में आए तो कन्या ने वर को भली प्रकार से देखकर अपने पिता से कहा कि यह मेरा पति नहीं है। मेरा पति वही है, जिसके साथ रात्रि में मेरा पाणिग्रहण हुआ था। इसके साथ मेरा विवाह नहीं हुआ है। यदि यह वही है तो बताए कि मैंने इसको क्या दिया, मधुपर्क और कन्यादान के समय जो मैंने भूषणादि दिए थे उन्हें दिखाए तथा रात में मैंने क्या गुप्त बातें कही थीं, वह सब सुनाए। पिता ने उसके कथनानुसार वर को बुलवाया। कन्या की यह सब बातें सुनकर वह कहने लगा कि मैं कुछ नहीं जानता। इसके पश्चात् लज्जित होकर वह अपना सा मुंह लेकर चला गया और सारी बारात भी अपमानित होकर वहां से लौट गई।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले - हे माता! इस प्रकार देवीदास काशी विद्याध्ययन के लिए चला गया। जब कुछ समय बीत गया तो काल से प्रेरित होकर एक सर्प रात्रि के समय उसको डसने के लिए वहां पर आया। उस विषधर के प्रभाव से उसके शयन का स्थान चारो ओर से विष की ज्वाला से विषैला हो गया। परन्तु व्रत राज के प्रभाव से उसको काटने न पाया क्योंकि पहले ही उसकी माता ने बत्तीस पूर्णिमा का व्रत कर रखा था। इसके बाद मध्याह्न के समय स्वयं काल वहां पर आया और उसके शरीर से उसके प्राणों को निकालने का प्रयत्न करने लगा जिससे वह मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। भगवान् की कृपा से उसी समय पार्वती जी के साथ श्रीशंकर जी वहां पर आ गए। उसको मूर्छित दशा में देखकर पार्वती जी ने भगवान् शंकर से प्रार्थना की कि हे महाराज! इस बालक की माता ने पहले बत्तीस पूर्णिमा का व्रत किया था, जिसके प्रभाव से हे भगवन् ! आप इसको प्राण दान दें। भवानी के कहने पर भक्त-वत्सल भगवान् श्रीशिव जी ने उसको प्राण दान दे दिया। इस व्रत के प्रभाव से काल को भी पीछे हटना पड़ा और देवीदास स्वस्थ होकर बैठ गया।

उधर उसकी स्त्री उसके काल की प्रतीक्षा किया करती थी, जब उसने देखा कि उस पुष्प वाटिका में पत्र-पुष्प कुछ भी नहीं रहे तो उसको अत्यन्त आश्चर्य हुआ और जब वह वैसे ही हरी-भरी हो गई तो वह जान गई कि वह जीवित हो गये हैं। यह देखकर वह बहुत प्रसन्न मन से अपने पिता के कहने लगी कि पिता जी! मेरे पति जीवित हैं, आप उनको ढूढ़िये। जब सोलहवां वर्ष व्यतीत हो गया तो देवीदास भी अपने मामा के साथ काशी से चल दिया। इधर उसे श्वसुर उसको ढूढ़ने के लिए अपने घर से जाने वाले ही थे कि वह दोनों मामा-भान्जा वहां पर आ गये, उसको आया देखकर उसका श्वसुर बड़ी प्रसन्नता के साथ अपने घर में ले आया। उस समय नगर के निवासी भी वहां इकट्ठे हो गए और सबने निश्चय किया कि अवश्य ही इसी बालक के साथ इस कन्या का विवाह हुआ था। उस बालक को जब कन्या ने देखा तो पहचान लिया और कहा कि यह तो वही है, जो संकेत करके गया था। तदुपरान्त सभी कहने लगे कि भला हुआ जो यह आ गया और सब नगरवासियों ने आनन्द मनाया।

कुछ दिन बाद देवीदास अपनी पत्नी और मामा के साथ अपने श्वसुर के घर से बहुत सा उपहारादि लेकर अपने घर के लिए प्रस्थान किया। जब वह अपने गांव के निकट आ गया तो कई लोगों ने उसको देखकर उसके माता-पिता को पहले ही जाकर खबर दे दी कि तुम्हारा पुत्र देवीदास अपनी पत्नी और मामा के सहित आ रहा है। ऐसा समाचार सुनकर पहले तो उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ किन्तु जब और लोगों ने भी आकर उनकी बात का समर्थन किया तो उनको बड़ा आश्चर्य हुआ लेकिन थोड़ी देर में देवीदास ने आकर अपने माता-पिता के चरणों में अपना सिर रखकर प्रणाम किया और उसकी पत्नी ने अपने सास-श्वसुर के चरणों को स्पर्श किया तो माता-पिता ने अपने पुत्र और पुत्रवधु को अपने हृदय से लगा लिया और दोनों की आंखों में प्रेमाश्रु बह चले। अपने पुत्र और पुत्रवधु के आने की खुशी में धनेश्वर ने बड़ा भारी उत्सव किया और ब्राह्मणों को भी बहुत सी दान-दक्षिणा देकर प्रसन्न किया।

श्रीकृष्ण जी कहने लगे कि इस प्रकार धनेश्वर बत्तीस पूर्णिमाओं के व्रत के प्रभाव से पुत्रवान हो गया। जो भी स्त्रियां इस व्रत को करती हैं, वे जन्म-जन्मान्तर में वैधव्य का दुख नहीं भोगतीं और सदैव सौभाग्यवती रहती हैं, यह मेरा वचन है, इसमें कोई सन्देह नहीं मानना। यह व्रत पुत्र-पौत्रों को देने वाला तथा सम्पूर्ण मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला है। बत्तीस पूर्णिमाओं के व्रत करने से व्रती की सब इच्छाएं भगवान् शिव जी की कृपा से पूर्ण हो जाती हैं।

सभी प्रेम से बोलो शिव शंकर भोले नाथ की जय।



सोमवती अमावस्या



किसी भी महीने की अमावस्या जब सोमवार को होती है. तो उसे सोमवती अमावस्या कहते है. सोमवती अमावस्या पितरों के तर्पण कार्यो के लिये सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है. इस व्रत को करने के लिये इस दिन उपवासक को पीपल के पेड के नीचे शनि देव के बीज मंत्र का जाप करना विशेष रुप से कल्याण करने वाला कहा जाता है. वर्ष 2011 में पूरे वर्ष में केवल एक सोमवती अमावस्या आ रही है. यह अमावस्या भाद्रपद माह 29 अगस्त की रहेगी.

सोमवती अमावस्या के दिन स्नान, दान करने का विशेष महत्व कहा गया है. सोमवती अमावस्या के दिन मौन रहने का सर्वश्रेष्ठ फल कहा गया है. देव ऋषि व्यास के अनुसार इस तिथि में मौन रहकर स्नान-ध्यान करने से सहस्त्र गौ दान के समान पुन्य फल प्राप्त होता है.

इस के अतिरिक्त इस दिन पीपल की 108 परिक्रमा कर, पीपल के पेड और श्री विष्णु का पूजन करने का नियम है. मुख्य रुप से इस सोमवती अमावस्या के व्रत को स्त्रियों के द्वारा किया जाता है. व्रत करने के बाद और पीपल की प्रदक्षिणा करने बाद अपने सामर्थ्य अनुसार दान-दक्षिणा देना शुभ होता है. 29 अगस्त की सोमवती अमावस्या पर हजारों की संख्या में हरिद्वार तीर्थ स्थल पर डूबकी लगाई जाने की संभावनाएं बन रही है.

इस दिन कुरुक्षेत्र के ब्रहमा सरोवर में डूबकी लगाने का भी बहुत अधिक पुन्य फल कहा गया है. इस स्थान पर सोमवती अमावस्या के दिन स्नान और दन करने से अक्षय फलों की प्राप्ति होती है. सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक की अवधि में पवित्र नदियों पर स्नान करने वालों का तांता सा लगा रहेगा. स्नान के साथ भक्तजन भाल पर तिलक लगवाते है. और पवित्र श्लोकों की गुंज चारों ओर सुनाई देती है. यह सब कार्य करने से सभी मनोकामनाओं की पूर्ति होती है.

सोमवती अमावस्या का व्रत करने वाली स्त्रियों को व्रत की कथा अवश्य सुननी चाहिए. व्रत की कथा इस प्रकार है.

सोमवती अमावस्या व्रत कथा | Somvati Amavasya Vrat Katha

एक साहूकार के सात लडके और एक लडकी थी. उसने सभी लडकों का विवाह कर दिया था. परन्तु लडकी का अभी विवाह नहीं हुआ था. साहूकार के घर एक साधु प्रतिदिन भिक्षा मांगने आता था. और बदले में आशिर्वाद देकर जाता था. वह साधु जो आशिर्वाद बहुओं को देता था. और जो आशिर्वाद वह साहूकार की

बेटी को देता था. उन दोनों में अंतर होता था, बहुओं को वह सुहाग का आशिर्वाद देता था, और बेटी को भाईयों से सुख की बात करता था.
एक दिन बेटी ने यह बात अपनी माता से कहीं, मां भी इस बात को जानकार दु:खी हुई. दूसरे दिन उसकी माता ने साधु से पूछा की वे उसकी बेटी को ऎसा आशिर्वाद क्यों देते है. साधु ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया और वे चले गयें. यह देख कर माता की चिन्ता और बढ गई.
माता ने तुरन्त पण्डित जी को बुलाया और उन्हें अपनी बेटी कि जन्मपत्रि��ा देखने के लिये कहा. पंण्डित जी ने जन्म पत्रिका देख कर कहा कि उनकी बेटी के भाग्य में विधवा होना लिखा है. यह बात सुनकार माता को और भी दु:ख हुआ, पण्डित जी से उपाय जानने के बाद यह निश्चित हुआ कि सात समुद्र पार एक धोबन के पास जाकर उसकी मांग का सिन्दूर मांगकर अपनी मांग में लगाने से और सोमवती अमावस्या के व्रत करने से यह अशुभ योग भंग हो जायेगा.
यह सुनकर माता ने अपने पुत्रों से उसकी बेटी के साथ जाने का आग्रह किया, छोटे पुत्र के अलावा अन्य सभी पुत्रों ने साथ जाने के लिये मना कर दिया. दोनों भाई बहन धोबिन से कहानी सुनने के लिये चल दिये. चलते-चलते दोनों समुद्र किनारे आ गयें. और समुद्र कैसे पार किया जायें, इसका विचार करने लगें. विचार करने के लिये दोनों जिस पेड के नीचे बैठे थे, उस पेड पर एक गिद्ध और गिद्धनी रहती थी. जब भी गिद्वनी के बच्चे होते थें, एक सांप आकर उनके बच्चों को खा जाता था. उस दिन भी ऎसा ही हुआ, गिद्ध-गिद्वनी दोनों बाहर गये हुए थें, कि सांप आया और गिद्धनी के बच्चे चिल्लाने लगें. साहूकार की बेटी समझ गई, उसने साहसे से सांप को मार दिया. सांयकाल में जब गिद्ध और गिद्धनी वापस आयें, तो उन्होने ने अपने बच्चों को जीवित देख कर खुशी हुई, दोनों ने लडकी को धोबिन के घर ले जाने में सहायता की. लडकी, कई माह तक छुपकर धोबिन की सेवा करती रही. उसकी सेवा से प्रसन्न होकर धोबिन ने अपनी मांग का सिन्दूर उसकी मांग में लगा दिया. इसके बाद व निरजल ही अपने घर की ओर चल दी. रास्ते में पीपल के पेड की परिक्रमा की, और उसके बद जल ग्रहण किया. पीपल के पेड का पूजन करने और सोमवती अमावस्या का व्रत करने से उसे अखंड सौभाग्य की प्राप्ति हुई.



कार्तिक पूर्णिमा महात्मय

कार्तिक पूर्णिमा को त्रिपुरी पूर्णिमा(KartikTripuri Poornima) के नाम से भी जाना जाता है. इस पुर्णिमा को त्रिपुरी पूर्णिमा की संज्ञा इसलिए दी गई है क्योंकि कार्तिक पूर्णिमा के दिन ही भगवान भोलेनाथ ने त्रिपुरासुर नामक महाभयानक असुर का अंत किया था और वे त्रिपुरारी के रूप में पूजित हुए थे. ऐसी मान्यता है कि इस दिन कृतिका नक्षत्र में शिव शंकर के दर्शन करने से सात जन्म तक व्यक्ति ज्ञानी और धनवान होता है. इस दिन चन्द्र जब आकाश में उदित हो रहा हो उस समय शिवा, संभूति, संतति, प्रीति, अनुसूया और क्षमा इन छः कृतिकाओं का पूजन करने से शिव जी की प्रसन्नता प्राप्त होती है.

मान्यता यह भी है कि इस दिन पूरे दिन व्रत रखकर रात्रि में वृषदान यानी बछड़ा दान करने से शिवपद की प्राप्ति होती है. जो व्यक्ति इस दिन उपवास करके भगवान भोलेनाथ का भजन और गुणगान करता है उसे अग्निष्टोम नामक यज्ञ का फल प्राप्त होता है. इस पूर्णिमा को शैव मत में जितनी मान्यता मिली है उतनी ही वैष्णव मत में भी.

वैष्णव मत में इस कार्तिक पूर्णिमा को बहुत अधिक मान्यता मिली है क्योंकि इस दिन ही भगवान विष्णु ने प्रलय काल में वेदों की रक्षा के लिए तथा सृष्टि को बचाने के लिए मत्स्य अवतार धारण किया था. इस पूर्णिमा को महाकार्तिकी (Maha kartiki Purnima) भी कहा गया है. यदि इस पूर्णिमा के दिन भरणी नक्षत्र हो तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है. अगर रोहिणी नक्षत्र हो तो इस पूर्णिमा का महत्व कई गुणा बढ़ जाता है. इस दिन कृतिका नक्षत्र पर चन्द्रमा और बृहस्पति हों तो यह महापूर्णिमा कहलाती है. कृतिका नक्षत्र पर चन्द्रमा और विशाखा पर सूर्य हो तो "पद्मक योग" बनता है जिसमें गंगा स्नान करने से पुष्कर से भी अधिक उत्तम फल की प्राप्ति होती है.कार्तिक पूर्णिमा को त्रिपुरी पूर्णिमा(KartikTripuri Poornima) के नाम से भी जाना जाता है. इस पुर्णिमा को त्रिपुरी पूर्णिमा की संज्ञा इसलिए दी गई है क्योंकि कार्तिक पूर्णिमा के दिन ही भगवान भोलेनाथ ने त्रिपुरासुर नामक महाभयानक असुर का अंत किया था और वे त्रिपुरारी के रूप में पूजित हुए थे. ऐसी मान्यता है कि इस दिन कृतिका नक्षत्र में शिव शंकर के दर्शन करने से सात जन्म तक व्यक्ति ज्ञानी और धनवान होता है. इस दिन चन्द्र जब आकाश में उदित हो रहा हो उस समय शिवा, संभूति, संतति, प्रीति, अनुसूया और क्षमा इन छः कृतिकाओं का पूजन करने से शिव जी की प्रसन्नता प्राप्त होती है.

मान्यता यह भी है कि इस दिन पूरे दिन व्रत रखकर रात्रि में वृषदान यानी बछड़ा दान करने से शिवपद की प्राप्ति होती है. जो व्यक्ति इस दिन उपवास करके भगवान भोलेनाथ का भजन और गुणगान करता है उसे अग्निष्टोम नामक यज्ञ का फल प्राप्त होता है. इस पूर्णिमा को शैव मत में जितनी मान्यता मिली है उतनी ही वैष्णव मत में भी.

वैष्णव मत में इस कार्तिक पूर्णिमा को बहुत अधिक मान्यता मिली है क्योंकि इस दिन ही भगवान विष्णु ने प्रलय काल में वेदों की रक्षा के लिए तथा सृष्टि को बचाने के लिए मत्स्य अवतार धारण किया था. इस पूर्णिमा को

महाकार्तिकी (Maha kartiki Purnima) भी कहा गया है. यदि इस पूर्णिमा के दिन भरणी नक्षत्र हो तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है. अगर रोहिणी नक्षत्र हो तो इस पूर्णिमा का महत्व कई गुणा बढ़ जाता है. इस दिन कृतिका नक्षत्र पर चन्द्रमा और बृहस्पति हों तो यह महापूर्णिमा कहलाती है. कृतिका नक्षत्र पर चन्द्रमा और विशाखा पर सूर्य हो तो "पद्मक योग" बनता है जिसमें गंगा स्नान करने से पुष्कर से भी अधिक उत्तम फल की प्राप्ति होती है.

कार्तिक पूर्णिमा विधि विधान

कार्तिक पूर्णिमा (Kartik Purnima) के दिन गंगा स्नान, दीप दान, हवन, यज्ञ करने से सांसारिक पाप और ताप का शमन होता है. अन्न, धन एव वस्त्र दान का बहुत महत्व बताया गया है इस दिन जो भी आप दान करते हैं उसका आपको कई गुणा लाभ मिलता है. मान्यता यह भी है कि आप जो कुछ आज दान करते हैं वह आपके लिए स्वर्ग में सरक्षित रहता है जो मृत्यु लोक त्यागने के बाद स्वर्ग में आपको प्राप्त होता है.

शास्त्रों में वर्णित है कि कार्तिक पुर्णिमा (Kartik Poornima) के दिन पवित्र नदी व सरोवर एवं धर्म स्थान में जैसे, गंगा, यमुना, गोदावरी, नर्मदा, गंडक, कुरूक्षेत्र, अयोध्या, काशी में स्नान करने से विशेष पुण्य की प्राप्ति होती है. महर्षि अंगिरा ने स्नान के प्रसंग में लिखा है कि यदि स्नान में कुशा और दान करते समय हाथ में जल व जप करते समय संख्या का संकल्प नहीं किया जाए तो कर्म फल की प्राप्ति नहीं होती है. शास्त्र के नियमों का पालन करते हुए इस दिन स्नान करते समय पहले हाथ पैर धो लें फिर आचमन करके हाथ में कुशा लेकर स्नान करें, इसी प्रकार दान देते समय में हाथ में जल लेकर दान करें. आप यज्ञ और जप कर रहे हैं तो पहले संख्या का संकल्प कर लें फिर जप और यज्ञादि कर्म करें.

कार्तिक पूर्णिमा का दिन सिख सम्प्रदाय के लोगों के लिए भी काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि इस दिन सिख सम्प्रदाय के संस्थापक गुरू नानक देव का जन्म हुआ था. सिख सम्प्रदाय को मानने वाले सुबह स्नान कर गुरूद्वारों में जाकर गुरूवाणी सुनते हैं और नानक जी के बताये रास्ते पर चलने की सगंध लेते हैं.



कार्तिक स्नान पूजा कथा

कार्तिक मास के वरत आसोज की पुर्णिमा से कार्तिक की पुर्णिमा तक किये जाते हैं।

इन दिनों गंगा स्नान का विशेष महत्व है।

कथा-पौराणिक कथाओं के अनुसार एक सास बहू ने कार्तिक स्नान करने का निश्चय किया।

सास कार्तिक नहाने तीर्थ राज जाने लगी तो बहू ने भी साथ जाने की इच्छा व्यक्त की।सास ने बहू को यह कहते हुए मना कर दिया कि-अभी तुम्हारी कार्तिक नहाने की उमर नहीं है।तुम बाद में जाना।यह कह कर सास तीर्थ चली गई।सास के जाने के बाद बहू ने कुम्हार के यहां से तैंतीस मिट्टी के कुण्ड मगंवा कर रख लिए।वह रोजाना रात में एक कुण्ड पानी से भर कर रख लेती और सवेरे जल्दी उठ स्नान कर कुण्ड को छत पर उल्टा रख कर विधि विधान से पूजा करती।इधर एक दिन सास की नथ नहाते हुए गंगा जी में गिर गई।उधर बहू हमेशा की तरह नहाते समय बोली सास नहाए उड़ै मैं नहाऊं कुण्डे।उसी समय अचानक गंगा जी की धारा बहू के कुण्ड में आई।उसी में उसकी सास की नथ भी आ गई।बहू ने कुण्ड में आई नथ को देखा तो वह पहचान गई कि यह तो सास की है।इस तरह दोनों को नहाते हुए पूरा एक महिना बीत गया।सास जब वापस लौट कर अपने घर आई तो बहू ने सास की खूब आवभगत की।उसी समय सास ने देखा कि उसकी गंगा में खोई हुई नथ बहू ने पहन रखी है तो पूछा यह नथ तुम्हारे पास कहां से आई।बहू ने उत्तर देते हुए वह पूरी घटना सास को बता दी जब कुण्ड में गंगा जी की धारा के साथ नथ आ गई थी।सास को इस घटना पर बहुत अचरज हुआ लेकिन वह चुप रही।कार्तिक स्नान के बाद सास ने पंडितो को भोजन कराने की इच्छा व्यक्त करते हुए बहू से कहा मुझे पंडितों को भोजन कराना है। इस पर बहू ने सास से विनती की कि माँ जी आप चार पंडितो को भोजन कराना चाहती हैं तो मेरे भी दो जोड़ दें क्योंकि मैंने भी कार्तिक स्नान किया है।बहु की बात सुन कर सास ने कहा-तुम कहां कार्तिक नहाई हो।गंगा तीर्थ तो मैं जाकर आई हूं।तब बहू ने सास को छत पर ले जाकर वह कुण्ड दिखाए जिसमें उसने कार्तिक स्नान किया था।सास ने देखा कि मिट्टी के वे कुण्ड सोने के हो गए हैं।यह देख सास ने बहू से कहा-बहु तुम्हारा भाग्य अच्छा है जो गंगा की धारा कुण्ड में आ गई।सारे कुण्ड सोने के हो गए।मैं अहंकार वश तीर्थ गई थी लेकिन वहां भी मुझे कुछ नहीं मिला।तुमने सच्ची भक्ती भाव से कार्तिक स्नान किया है इसलिए भगवान ने तुम्हें इतना सब कुछ यहीं दे दिया।

श्री विष्णुजी की आरती

ॐ जय जगदीश हरे स्वामी जय जगदीश हरे
भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे। ॐ.....
जो ध्यावे फल पावे दुख विनशे मनका
सुख सम्पत्ति घर आवे कष्ट मिटे तनका। ॐ.....
मात पिता तुम मेरे शरण गहूँ किसकी।
तुम बिन और न दूजा आसकरु जिसकी। ॐ.....
तुम पूरणपरमात्मा तुम अन्तरयामी।
पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी। ॐ.....
तुम करुणा के सागर तुम पालन करता।
मैं मूरख खलकामी कृपा करो भरता। ॐ.....
तुम हो एक अगोचर सबके प्राण पती।
किसविधि मिलूं गुसांई तुमको मैं कुमती। ॐ.....
दीनबन्धु दुःख हरता तुम ठाकुर मेरे।
अपने हाथ उठाओ द्वार पड़ा तेरे। ॐ.....
विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ सन्तन की सेवा। ॐ.....
ॐ जय जगदीश हरे स्वामी जय जगदीश हरे
भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे। ॐ.....



<u>श्री सन्तान सप्तमी व्रत कथा</u>

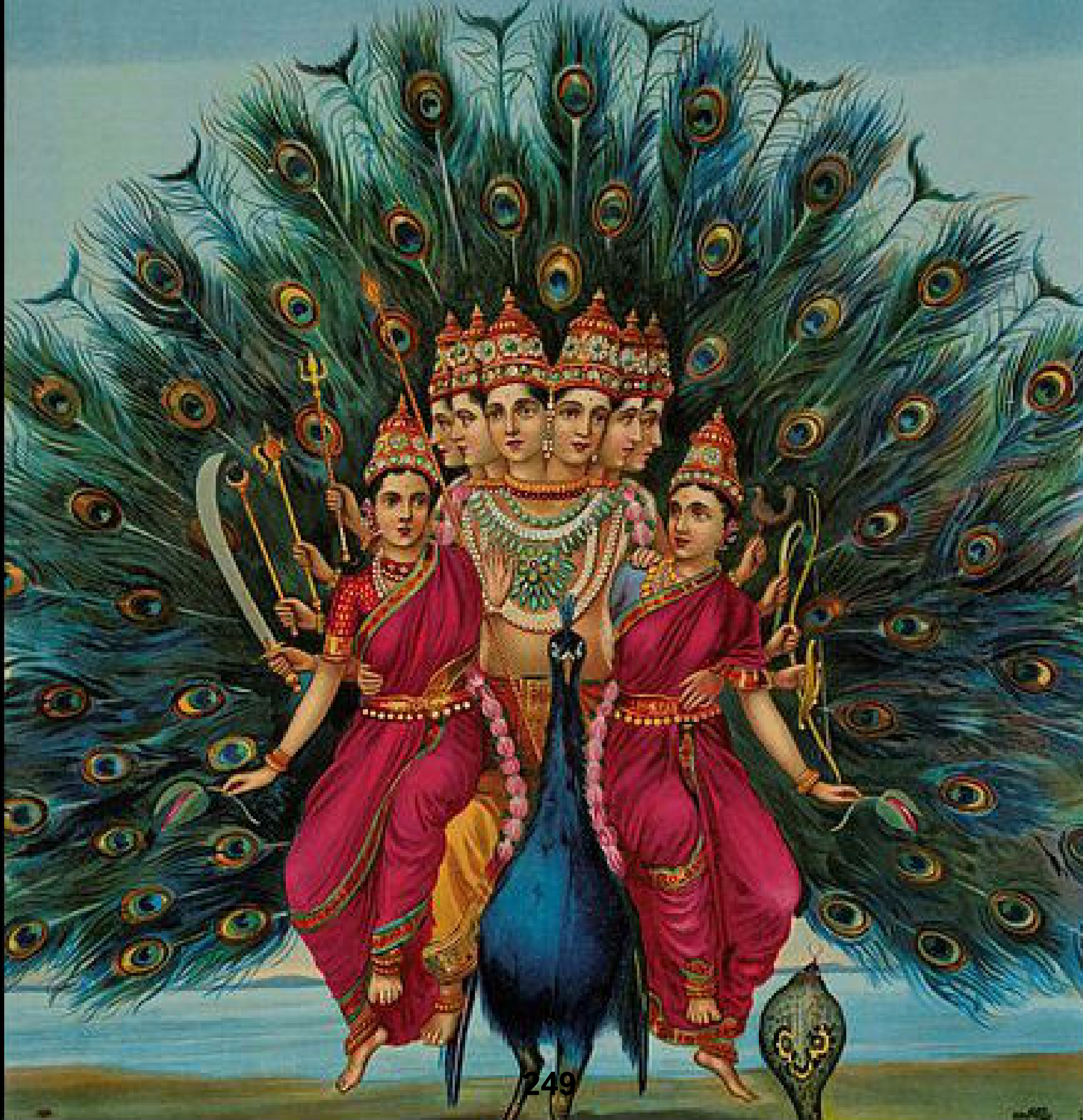
एक दिन महाराज युधिष्ठिर ने भगवान से कहा- हे प्रभो! कोई ऐसा उत्तम व्रत बतलाइये जिसके प्रभाव से मनुष्यों के अनेकों सांसारिक क्लेश दुःख दूर होकर वे पुत्र एवं पौत्रवान हो जाएं।

यह सुनकर भगवान बोले - हे राजन्! तुमने बड़ा ही उत्तम प्रश्न किया है। मैं तुमको एक पौराणिक इतिहास सुनाता हूं ध्यानपूर्वक सुनो। एक समय लोमष ऋषि ब्रजराज की मथुरापुरी में वसुदेव के घर गए।ऋषिराज को आया हुआ देख करके दोनों अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा उनको उत्तम आसन पर बैठा कर उनका अनेक प्रकार से वन्दन और सत्कार किया। फिर मुनि के चरणोदक से अपने घर तथा शरीर को पवित्र किया।वह प्रसन्न होकर उनको कथा सुनाने लगे। कथा के कहते लोमष ने कहा कि - हे देवकी! दुष्ट दुराचारी पापी कंस ने तुम्हारे कई पुत्र मार डाले हैं जिसके कारण तुम्हारा मन अत्यन्त दुःखी है।इसी प्रकार राजा नहुष की पत्नी चन्द्रमुखी भी दुःखी रहा करती थी किन्तु उसने संतान सप्तमी का व्रत विधि विधान सहित किया। जिसके प्रताप से उनको सन्तान का सुख प्राप्त हुआ।यह सुनकर देवकी ने हाथ जोड़कर मुनि से कहा- हे ऋषिराज! कृपा करके रानी चन्द्रमुखी का सम्पूर्ण वृतान्त तथा इस व्रत को विस्तार सहित मुझे बतलाइये जिससे मैं भी इस दुःख से छुटकारा पाउं।लोमष ऋषि ने कहा कि - हे देवकी! अयोध्या के राजा नहुष थे। उनकी पत्नी चन्द्रमुखी अत्यन्त सुन्दर थीं। उनके नगर में विष्णुगुप्त नाम का एक ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री का नाम भद्रमुखी था। वह भी अत्यन्त रूपवती सुन्दरी थी।रानी और ब्राह्मणी में अत्यन्त प्रेम था। एक दिन वे दोनों सरयू नदी में स्नान करने के लिए गई। वहां उन्होंने देखा कि अन्य बहुत सी स्त्रियां सरयू नदी में स्नान करके निर्मल वस्त्र पहन कर एक मण्डप में शंकर एवं पार्वती की मूर्ति स्थापित करके पूजा कर रही थीं।रानी और ब्राह्मणी ने यह देख कर उन स्त्रियों से पूछा कि - बहनों! तुम यह किस देवता का और किस कारण से पूजन व्रत आदि कर रही हो। यह सुन कर स्त्रियों ने कहा कि हम सनतान सप्तमी का व्रत कर रही हैं और हमने शिव पार्वती का पूजन चन्दन अक्षत आदि से षोडषोपचार विधि से किया है। यह सब इसी पुनी व्रत का विधान है।यह सुनकर रानी और ब्राह्मणी ने भी इस व्रत के करने का मन ही मन संकल्प किया और घर वापस लौट आईं। ब्राह्मणी भद्रमुखी तो इस व्रत को नियम पूर्वक करती रही किन्तु रानी चन्द्रमुखी राजमद के कारण कभी इस व्रत को करती, कभी न करती। कभी भूल हो जाती। कुछ समय बाद दोनों मर गई। दूसरे जन्म में रानी बन्दरिया और ब्राह्मणी ने मुर्गी की योनि पाई।परन्तु ब्राह्मणी मुर्गी की योनि में भी कुछ नहीं भूली और भगवान शंकर तथा पार्वती जी का ध्यान करती रही, उधर रानी बन्दरिया की योनि में, भी सब कुछ भूल गई। थोड़े समय के बाद दोनों ने यह देह त्याग दी।अब इनका तीसरा जन्म मनुष्य योनि में हुआ। उस ब्राह्मणी ने एक ब्राह्मणी के यहां कन्या के रूप में जन्म लिया। उस ब्राह्मण कन्या का नाम भूषण देवी रखा गया तथा विवाह गोकुल निवासी अग्निशील ब्राह्मण से कर दिया, भूषण देवी इतनी सुन्दर थी कि वह आभूषण रहित होते हुए भी अत्यन्त सुन्दर लगती थी। कामदेव की पत्नी रति भी उसके सम्मुख लजाती

थी। भूषण देवी के अत्यन्त सुन्दर सर्वगुणसम्पन्न चन्द्रमा के समान धर्मवीर, कर्मनिष्ठ, सुशील स्वभाव वाले आठ पुत्र उत्पन्न हुए।यह सब शिवजी के व्रत का पुनीत फल था। दूसरी ओर शिव विमुख रानी के गर्भ से कोई भी पुत्र नहीं हुआ, वह निःसंतान दुःखी रहने लगी। रानी और ब्राह्मणी में जो प्रीति पहले जन्म में थी वह अब भी बनी रही।रानी जब वृद्ध अवस्था को प्राप्त होने लगी तब उसके गूंगा बहरा तथा बुद्धिहीन अल्प आयु वाला एक पुत्र हुआ वह नौ वर्ष की आयु में इस क्षणभंगुर संसार को छोड़ कर चला गया।अब तो रानी पुत्र शोक से अत्यन्त दुःखी हो व्याकुल रहने लगी। दैवयोग से भूषण देवी ब्राह्मणी, रानी के यहां अपने पुत्रों को लेकर पहुंची। रानी का हाल सुनकर उसे भी बहुत दुःख हुआ किन्तु इसमें किसी का क्या वश! कर्म और प्रारब्ध के लिखे को स्वयं ब्रह्मा भी नहीं मिटा सकते।रानी कर्मच्युत भी थी इसी कारण उसे दुःख भोगना पड ा। इधर रानी पण्डितानी के इस वैभव और आठ पुत्रों को देख कर उससे मन में ईर्ष्या करने लगी तथा उसके मन में पाप उत्पन्न हुआ। उस ब्राह्मणी ने रानी का संताप दूर करने के निमित्त अपने आठों पुत्र रानी के पास छोड दिए।रानी ने पाप के वशीभूत होकर उन ब्राह्मणी पुत्रों की हत्या करने के विचार से लड्डू में विष मिलाकर उनको खिला दिया परन्तु भगवान शंकर की कृपा से एक भी बालक की मृत्यु न हुई।यह देखकर तो रानी अत्यन्त ही आश्चर्य चकित हो गई और इस रहस्य का पता लगाने की मन में ठान ली। भगवान की पूजा से निवृत्त होकर जब भूषण देवी आई तो रानी ने उस से कहा कि मैंने तेरे पुत्रों को मारने के लिए इनको जहर मिलाकर लड्डू लिखा दिया किन्तु इनमें से एक भी नहीं मरा। तूने कौन सा दान, पुण्य, व्रत किया है। जिसके कारण तेरे पुत्र नहीं मरे और तू नित नए सुख भोग रही है। तेरा बड़ा सौभाग्य है। इनका भेद तू मुझसे निष्कपट होकर समझा मैं तेरी बड ी ऋणी रहूंगी।रानी के ऐसे दीन वचन सुनकर भूषण ब्राह्मणी कहने लगी - सुनो तुमको तीन जन्म का हाल कहती हूं, सो ध्यान पूर्वक सुनना, पहले जन्म में तुम राजा नहुष की पत्नी थी और तुम्हारा नाम चन्द्रमुखी था मेरा भद्रमुखी था और मैं ब्राह्मणी थी। हम तुम अयोध्या में रहते थे और मेरी तुम्हारी बड ी प्रीति थी। एक दिन हम तुम दोनों सरयू नदी में स्नान करने गई और दूसरी स्त्रियों को सन्तान सप्तमी का उपवास शिवजी का पूजन अर्चन करते देख कर हमने इस उत्तम व्रत को करने की प्रतिज्ञा की थी। किन्तु तुम सब भूल गई और झूठ बोलने का दोष तुमको लगा जिसे तू आज भी भोग रही है।मैंने इस व्रत को आचार-विचार सहित नियम पूर्वक सदैव किया और आज भी करती हूं। दूसरे जन्म में तुमने बन्दरिया का जन्म लिया तथा मुझे मुर्गी की योनि मिली। भगवान शंकर की कृपा से इस व्रत के प्रभाव तथा भगवान को इस जन्म में भी न भूली और निरन्तर उस व्रत को नियमानुसार करती रही। तुम अपने बंदरिया के जन्म में भी भूल गई।मैं तो समझती हूं कि तुम्हारे उपर यह जो भारी संगट है उसका एक मात्र यही कारण है और दूसरा कोई इसका कारण नहीं हो सकता। इसलिए मैं तो कहती हूं कि आप सब भी सन्तान सप्तमी के व्रत को विधि सहित करिये जिससे आपका यह संकट दूर हो जाए।लोमष ऋषि ने कहा- हे देवकी! भूषण ब्राह्मणी के मुख से अपने पूर्व जन्म की कथा तथा व्रत संकल्प इत्यादि सुनकर रानी को पुरानी बातें याद आ गई और पश्चाताप करने लगी तथा भूषण ब्राह्मणी के चरणों में पड़कर क्षमा याचना करने लगी और भगवान शंकर पार्वती जी की अपार महिमा के गीत गाने लगी। उस दिन से रानी ने नियमानुसार सन्तान सप्तमी का व्रत किया। जिसके प्रभाव से रानी को सन्तान सुख भी मिला तथा सम्पूर्ण

सुख भोग कर रानी शिवलोक को गई।भगवान शंकर के व्रत का ऐसा प्रभाव है कि पथ भ्रष्ट मनुष्य भी अपने पथ पर अग्रसर हो जाता है और अनन्त ऐश्वर्य भोगकर मोक्ष पाता है। लोमष ऋषि ने फिर कहा कि - देवकी! इसलिए मैं तुमसे भी कहता हूं कि तुम भी इस व्रत को करने का संकल्प अपने मन में करो तो तुमको भी सन्तान सुख मिलेगा।इतनी कथा सुनकर देवकी हाथ जोड कर लोमष ऋषि से पूछने लगी- हे ऋषिराज! मैं इस पुनीत उपवास को अवश्य करूंगी, किन्तु आप इस कल्याणकारी एवं सन्तान सुख देने वाले उपवास का विधान, नियम आदि विस्तार से समझाइये।यह सुनकर ऋषि बोले- हे देवकी! यह पुनीत उपवास भादों भाद्रपद के महीने में शुक्लपक्ष की सप्तमी के दिन किया जाता है। उस दिन ब्रह्ममुहूर्त में उठकर किसी नदी अथवा कुएं के पवित्र जल में स्नान करके निर्मल वस्त्र पहिनने चाहिए। श्री शंकर भगवान तथा जगदम्बा पार्वती जी की मूर्ति की स्थापना करें। इन प्रतिमाओं के सम्मुख सोने, चांदी के तारों का अथवा रेशम का एक गंडा बनावें उस गंडे में सात गांठें लगानी चाहिए। इस गंडे को धूप, दीप, अष्ट गंध से पूजा करके अपने हाथ में बांधे और भगवान शंकर से अपनी कामना सफल होने की प्रार्थना करेंतदन्तर सात पुआ बनाकर भगवान को भोग लगावें और सात ही पुवे एवं यथाशक्ति सोने अथवा चांदी की अंगूठी बनवाकर इन सबको एक तांबे के पात्र में रखकर और उनका शोडषोपचार विधि से पूजन करके किसी सदाचारी, धर्मनिष्ठ, सुपात्र ब्राह्मण को दान देवें। उसके पश्चात सात पुआ स्वयं प्रसाद के रूप में ग्रहण करें।
इस प्रकार इस व्रत का पारायण करना चाहिए। प्रतिसाल की शुक्लपक्ष की सप्तमी के दिन, हे देवकी! इस व्रत को इस प्रकार नियम पूर्व करने से समस्त पाप नष्ट होते हैं और भाग्यशाली संतान उत्पन्न होती है तथा अन्त में शिवलोक की प्राप्ति होती है।हे देवकी! मैंने तुमको सन्तान सप्तमी का व्रत सम्पूर्ण विधान विस्तार सहित वर्णन किया है। उसको अब तुम नियम पूर्वक करो, जिससे तुमको उत्तम सन्तान पैदा होगी। इतनी कथा कहकर भगवान आनन्दकन्द श्रीकृष्ण ने धर्मावतार युधिष्ठिर से कहा कि - लोमष ऋषि इस प्रकार हमारी माता को शिक्षा देकर चले गए। ऋषि के कथनानुसार हमारी माता देवकी ने इस व्रत को नियमानुसार किया जिसके प्रभाव से हम उत्पन्न हुए।यह व्रत विशेष रूप से स्त्रियों के लिए कल्याणकारी है परन्तु पुरुषों को भी समान रूप से कल्याण दायक है। सन्तान सुख देने वाला पापों का नाश करने वाला यह उत्तम व्रत है जिसे स्वयं भी करें तथा दूसरों से भी करावें। नियम पूर्वक जो कोई इस व्रत को करता है और भगवान शंकर एवं पार्वती की सच्चे मन से आराधना करता है निश्चय ही अमरपद पद प्राप्त करके अन्त में शिवलोक को जाता है।

॥ बोलो शंकर भगवान की जय॥



कौमारिकी व्रत



शिव और पार्वती के पुत्र कार्तिकेय को कौमारिकी नाम से जाना जाता है(Kartikeya, the son of Lord Shiva and Mata Parvati is also known by the name of Kaumariki). इन्हीं के जन्म दिवस पर चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को स्कन्द षष्ठी के नाम से मनाया जाता है. वर्ष 2011 में यह व्रत 9 अप्रैल के दिन किया जायेगा. इस व्रत में कार्तिकेय एवं उनकी माता पार्वती की पूजा की जाती है. कौमारिकी षष्ठी व्रत आमतौर पर महिलाएं रखती हैं. इस व्रत के विषय में वाराह पुराण में जिक्र मिलता है. कुमार कार्तिकेय का व्रत होने के कारण इसे स्कंद षष्ठी व्रत के नाम से भी जाना जाता है.

कौमारिकी षष्ठी व्रत कथा | Komarika Shasti Vrat Katha in Hindi

राक्षस राज तारकासुर का अत्याचार बढ़ता जा रहा था. उसने देवलोक पर आक्रमण करके देवराज इन्द्र को पराजित कर दिया. देवतागण अपनी दुर्दशा से काफी दु:खी हुए और ब्रह्मा जी के पास अपनी समस्या लेकर उपस्थित हुए. ब्रह्मा जी ने देवताओं की समस्या को सुनकर काफी विचार किया और कहा कि तारकासुर का अंत केवल शिव पुत्र कर सकता है. इस उत्तर को सुनकर देवतागण चिंतित हो उठे क्योंकि, शिव सती के वियोग में समाधि लगाए हुए थे. शिव को साधन से जगाना फिर उनका विवाह कराना देवता को असंभव कार्य लग रहा था.

देवताओं की परेशानियों को दूर करने के लिए कामदेव ने शिव को समाधि से जगाने का आश्वासन दिया. कामदेव को अपने प्रयास में सफलता मिली और शिव की समाधि टूट गई. कामदेव को इस दु:साहस के कारण अपना शरीर खोना पड़ा. देवताओं ने जब शिव से तारकासुर के विषय में कहा तब शिव का क्रोध शांत हुआ और उन्होंने देवताओं के कल्याण हेतु दूसरा विवाह करना स्वीकार किया.

दूसरी तरफ सती पार्वती रूप में पुनर्जन्म लेकर शिव को पुन: पति रूप में पाने के लिए तपस्या कर रही थी. शिव ने पार्वती की तपस्या से प्रसन्न होकर उनसे विवाह कर लिया. चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की षष्ठी के दिन शिव और पार्वती के पुत्र के रूप में कुमार कार्तिकेय का जन्म हुआ. कहा जाता है कि कृतिकाओं ने कुमार कार्तिकेय का पालन-पोषण किया अत: इनका नाम कार्तिकेय पड़ा.

देवताओं ने भगवान शिव से कार्तिकेय को मांगकर उनकी पूजा की और उन्हें अपना सेनापति बनकर तारकासुर की नगरी पर आक्रमण कर दिया. तारकासुर और कुमार कार्तिकेय का युद्ध 6 दिनों तक चलता रहा. इस युद्ध में कार्तिकेय ने अपनी शक्ति के प्रहार से तारकासुर का वध कर दिया. देवताओं को तारकासुर द्वारा हड़प लिया गया स्वर्ग वापस मिल गया.

कौमारिकी षष्ठी व्रत विधि | Komarika Shasti Vrat Vidhi

कौमारिकी षष्ठी व्रत में पंचमी से युक्त षष्ठी तिथि के दिन व्रत रखना श्रेष्ठ माना जात�� है. इस व्रत में पंचमी के दिन से व्रत आरम्भ किया जाता है. षष्ठी के दिन भी व्रत रखकर कुमार कार्तिकेय एवं माता पार्वती की पूजा की

जाती है(This fast is started on Panchami and is also observed on Shashthi). कुमार कार्तिकेय को दक्षिण दिशा की तरफ मुंह करके आर्घ्य दिया जाता है. स्कन्द कुमार को दही, घी, चावल, फल एवं मिष्टान अर्पित करने का भी विधान है. कार्तिकेय भगवान को वस्त्र एवं तांबे का चूड़ा भी भेंट किया जाता है. पूजा के बाद श्रद्धालु भक्त सनतकुमार की आरती भी गाते हैं. व्रत चाहें तो इस दिन फलाहार कर सकते हैं.

दक्षिण दिशा-कार्तिकेय पूजा विधान | Dakshin Disha Karthikeyan Puja Vidhi

कार्तिकेय की पूजा दक्षिण दिशा की तरह मुंह करके किया जाता है इसकी भी एक कथा है(Kartikeya is worshipped facing South). कथा के अनुसार एक बार शिव जी माता पार्वती ने गणेश एवं कार्तिकेय जी से कहा कि जो पहले पृथ्वी की परिक्रमा पूरी करके लौट आएगा उसकी पूजा पहले होगी. कार्तिकेय जी मोर पर चढ़कर पृथ्वी की परिक्रमा करने लगे.

गणेश जी का वाहन चूहा था अत: वह कार्तिकेय की भांति तेजी से पृथ्वी की परिक्रमा नहीं कर सकते थे. इस स्थिति में गणेश जी ने बुद्धि से काम लेते हुए माता-पिता की परिक्रमा पूरी करली. शास्त्रानुसार माता पृथ्वी कही गई है अत: गणेश जी को विजयी घोषित कर दिया गया.

कार्तिकेय जी इस बात से नाराज होकर दक्षिण दिशा में चले गये यही कारण है कि कार्तिकेय की पूजा दक्षिण की तरह मुंख करके किया जाता है. दक्षिण भारत में कार्तिकेय सभी देवों में प्रमुख माने जाते हैं वहां इन्हें मुरूगण स्वामी के नाम से पूजा जाता है.

स्कन्द षष्ठी महात्म्य-फल | Skanda Shasti Mahatmya Benefits

दाम्पत्य जीवन की सबसे बड़ी चाहत संतान होती है. मान्यता है कि इस व्रत को करने से संतान सुख मिलता है. संतान के स्वास्थ के लिए भी यह व्रत उत्तम माना गया है. इस व्रत को करने से आरोग्य एवं वैभव की भी प्राप्ति होती है.

पेड़ो पर झूले,

सावन की फुहार।

मुबारक हो आपको,

तीज का त्यौहार॥



MyGuru.in

कजली तीज (सातूड़ी तीज)

श्रावण मास की तीज को हरियाली तीज का त्यौहार मनाया जाता है । उसी प्रकार से भादों मास के कृष्ण पक्ष की तीज को कजरी तीज का त्यौहार मनाया जाता है । इसे "बूढी तीज" भी कहा जाता है । इस दिन महेश्वरी वैश्य गेहुं, जौ, चने और चावल के सत्तु में घी, मेवा डालकर विभिन्न प्रकार के पकवान बनाते है तथा चन्द्रोदय के बाद उसी का भोजन करते है । इसलिए इसे "सातुड़ी तीज" अथवा "सतवा तीज" भी कहा जाता है ।

इस दिन विशेषतौर पर गाय की पूजा करी जाती है । आटे की सात लोइयां बनाकर उन पर घी, गुड़ रखकर गाय को खिलाने के बाद ही भोजन किया जाता है । कुछ लोग इस दिन हरियाली तीज की तरह सिंजारे भेजते है । इस दिन बहुएं अपनी सास को चीनी और रूपये का भायना निकालकर देती हैं ।

यह त्यौहार खासतौर पर पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार में मनाया जाता है । कजरी की प्रतिद्वंद्विता भी होती है । नावों पर चढ़कर लोग कजरी गीत गाते हैं । ब्रज के मल्हारों की ही तरह मिर्जापुर तथा बनारस का यह प्रमुख वर्षागीत माना जाता है । इस दिन घरों में मिठाई तथा पकवान बनाएं जाते है । झूले भी डाले जाते है । ग्रमीण भाषा में इसे "तीजा" कहा जाता है ।

कजली तीज कथा

एक साहूकार के चार बेटे और बहुएं थीं । तीनों बड़ी बहुएं भरे पूरे परिवार से थी । परन्तु छोटी बहू के मायके में कोई नहीं था । बड़ी तीज पर तीनों बहुओं के घर से सत्तू आया, लेकिन छोटी बहू का मन इस विचार से दु:खी हो गया कि उसके लिए सत्तू कहाँ से आएगा । उसने अपने पति से कहा कि – "मेरे लिए भी सत्तू लेकर आना, चाहे कुछ भी करना पड़े ।"

उसके पति ने उसके लिए सत्तू लाने का पूरा प्रयास किया परन्तु सफलता नहीं मिली । जब वह शाम को घर लौटा और अपनी पत्नि का उदास चेहरा देखा तो वह रात भर सो ना सका । दूसरे दिन तीज थी । वह रात को अंधेरे में ही घर से निकल गया और एक बनिये की दुकान में घुस गया। वहां चने की दाल लेकर चक्की में पीसना शुरू कर दिया । चक्की की आवाज सुनकर बनिये के घरवाले जाग गए । उन्होने उसे पकड़कर पूछा – "यहां क्या कर रहे हो।"

इस पर उसने जवाब दिया कि – "कल सातूड़ी तीज है और मेरी पत्नि के पीहर में कोइ! नहीं है, अत: उसके लिए सत्तू चोरी करने आया हूं । आपकी दुकान में दाल, चीनी और घी सभी था, इसलिए आपके यहां से सत्तू बनाकर ले जा रहा था ।"

यह सुनकर बनिया बोला – "तुम अपने घर जाओ । आज से तुम्हारी पत्नि हमारी धर्म बेटी हुई ।"

वह घर लौट आया । दूसरे दिन सवेरे ही बनिये ने नौकरों के साथ चार तरह के सत्तू के पिंड़े, साड़ी और अन्य पूजा का सामान उसके घर भिजवा दिया ।

जेठानियां यह सब देखकर कहने लगीं कि – "तुम्हारे पीहर में तो कोई नहीं है, फिर यह सब कहां से आया।"

तब देवररानी ने उन्हे सारी बात बताकर कहा की यह सब मेरे धर्म पिता ने भेजा है ।

शिव जी की आरती

ओं जय शिव ओंकारा स्वामी जय शिव ओंकारा । ब्रह्मा विष्णु सदा शिव अर्द्धांगी धारा ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

एकानन चतुरानन पंचानन राजे । हंसानन गरूड़ासन वृषवाहन साजे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

दो भुज चार चतुर्भुज दश भुज ते सोहे । तीनो रूप निरखता त्रिभुवन मन मोहे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

अक्षमाला वनमाला रूण्डमाला धारी । चन्दन मृगमद सोहे भाले शुभकारी ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

श्वेताम्बर पीताम्बर बाघाम्बर अंगे । सनकादिक ब्रह्मादिक प्रेतादिक संगे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

कर के बीच कमण्डल चक्र त्रिशुल धर्ता । जग कर्ता जगहर्ता जग पालनकर्ता ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका । प्रणवाक्षर के मध्य तीनो ही एका ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

त्रिगुण स्वामीजी की आरती जो कोई गावे। कहत शिवानंद स्वामी मनवांछित फल पावे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

स्तुति श्री शिवजी की

शीश गंग अर्धांग पार्वती सदा विराजत कैलासी।
नन्दी भृंगी नृत्य करत है,गुणभक्त शिव की दासी।।
सीतल मदसुगंध पवन बहे बैठे हैं शिव अविनाशी।
करत गान गंर्धव सप्त सुर,राग -रागिनी सब गासी।।
यक्ष रक्ष भैरव जह डोलत बोलत है अनेक वासी।
कोयत शब्द सुनावत सुन्दर,भमर करत है गुजासी।।
कल्प वृक्ष अरू पारिजात लग रहे है लक्षासी।
सूर्य कांति सम पर्वत शोभित,चन्द्रकांति नव मीमासी।।
छहो ऋतु नित फलत फूलत है पुष्प चढत वर्षा सी।
देव मुनि जन की भीड पडत ,निगम रहत जो नितगासी।।
ब्रह्मा विष्णु जाको ध्यान धरत है,कछु शिव हमको परमासी।
ऋद्धि-सिद्धि के दाता शंकर ,सदा आनंदित सुखरासी।।
जिनके सुमिरन सेवा करते टूट जाए यम की फाँसी।
त्रिशुल फरसा का ध्यान निरंतर,मन लगाए कर जो ध्यासी।।
दूर करे विपदा शिव तिनकी जन्म सफल शिवपदपासी।
कैलासी काशी के वासी,अविनाशी सुध मेरी लीज्यो।।
सेवक जान सदा चरनन को अपनी जान दरस दीज्यो।
तुम तो प्रभु सदा सयाने,अवगुण मेरे सब ढकियो।
सब अपराध क्षमा कर शंकर किंकर की विनती सुनियो

.. shiva AratI ..

॥ शिव आरती ॥

सर्वेशं परमेशं श्रीपार्वतीशं वन्देऽहं विश्वेशं श्रीपन्नगेशम् ।
श्रीसाम्बं शम्भुं शिवं त्रैलोक्यपूज्यं वन्देऽहं त्रैनेत्रं श्रीकंठमीशम् ॥ १ ॥
भस्माम्बरधरमीशं सुरपारिजातं बिल्वार्चितपदयुगलं सोमं सोमेशम् ।
जगदालयपरिशोभितदेवं परमात्मं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ २ ॥
कैलासप्रियवासं करुणाकरमीशं कात्यायनीविलसितप्रियवामभागम् ।
प्रणवार्चितमात्मार्चितं संसेवितरूपं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ ३ ॥
मन्मथनिजमददहनं दाक्षायनीशं निर्गुणगुणसंभरितं कैवल्यपुरुषम् ।
भक्तानुग्रहविग्रहमानन्दजैकं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ ४ ॥
सुरगंगासंप्लावितपावननिजशिखरं समभूषितशशिबिम्बं जटाधरं देवम् ।
निरतोज्ज्वलदावानलनयनफालभागं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ ५ ॥
शशिसूर्यनेत्रद्वयमाराध्यपुरुषं सुरकिन्नरपन्नगमयमीशं संकाशम् ।
शरवणभवसम्पूजितनिजपादपद्मं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ ६ ॥
श्रीशैलपुरवासं ईशं मल्लीशं श्रीकालहस्तीशं स्वर्णमुखीवासम् ।
काञ्चीपुरमीशं श्रीकामाक्षीतेजं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ ७ ॥
त्रिपुरान्तकमीशं अरुणाचलेशं दक्षिणामूर्तिं गुरुं लोकपूज्यम् ।
चिदम्बरपुरवासं पञ्चलिंगमूर्तिं वन्देऽहं शिवशङ्करमीशं देवेशम् ॥ ८ ॥
ज्योतिर्मयशुभलिंगं सङ्ख्यात्रयनाढ्यं त्रयीवेद्यमाद्यं पञ्चाननमीशम् ।
वेदाद्भुतगात्रं वेदार्णवजनितं वेदाग्रं विश्वाग्रं श्रीविश्वनाथम् ॥ ९ ॥

Encoded by Shailendra Sharma
Proofread support by Avinash Sathaye and Sunder Hattangadi

Please send corrections to sanskrit@cheerful.com
Last updated December 24, 2007


वक्रतुंड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ।।
www.santabanta.com

गणेश चतुर्थी

हिन्दू पंचांग के अनुसार प्रत्येक वर्ष भाद्रपद मास के शुक्ल चतुर्थी को हिन्दुओं का प्रमुख त्यौहार गणेश चतुर्थी मनाया जाता है. गणेश पुराण में वर्णित कथाओं के अनुसार इसी दिन समस्त विघ्न बाधाओं को दूर करनेवाले, कृपा के सागर तथा भगवान शंकर और माता पार्वती के पुत्र श्री गणेश का आविर्भाव हुआ था. भगवान विनायक के जन्मदिवस पर मनाया जानेवाला यह महापर्व महाराष्ट्र सहित भारत के सभी राज्यों में हर्षोल्लास पूर्वक और भव्य तरीके से आयोजित किया जाता है. इस महापर्व पर लोग प्रातः काल उठकर सोने, चांदी, तांबे अथवा मिट्टी के गणेश जी की प्रतिमा स्थापित कर षोडशोपचार विधि से उनका पूजन करते हैं. पूजन के पश्चात् नीची नज़र से चंद्रमा को अर्घ्य देकर ब्राह्मणों को दक्षिणा देते हैं. इस पूजा में गणपति को 21 लड्डुओं का भोग लगाने का विधान है.

गणेश चतुर्थी कथा

एक बार भगवान् श्री शंकर स्नान करने के लिए कैलाश पर्वत से भोगावती नामक स्थान पर गए। उनके जाने के बाद माता पार्वती स्नान करते समय अपने शरीर के मैल से एक पुतला बनाया तथा उसमें प्राण डाल दिए। उसका नाम उन्होने गणेश रखा।

फिर पार्वती जी ने गणेश जी से एक मुद्गर लेकर दरवाजे पर जाकर तब तक पहरा देने के लिए कहा जब तक वह स्नान ना कर लें।

कुछ समय बाद भगवान् श्री शंकर स्नान करके वापिस आए और घर के भीतर प्रवेश करना चाहा तो गणेश जी ने उन्हें दरवाजे पर ही रोक दिया। इस पर भगवान् श्री शंकर बहुत क्रोधित हो उठे और उन्होने गणेश जी का सिर धड़ से अलग कर दिया और भीतर चले गए।

माता पार्वती ने जब भगवान् श्री शंकर को क्रोधित अंदर आते हुए देखा तो उन्हे लगा की भोजन में विलम्ब होने के कारण शिव जी नाराज़ है। इसलिए उन्होनें तुरन्त ही भोजन परोस कर भगवान् शंकर को खाने के लिए बुलाया।

दो थालियों में भोजन लगा देखकर भगवान् श्री शंकर ने माता पार्वती जी से दूसरी थाली किसके लिए है पूछा। इस पर माता पार्वती ने कहा यह हमारे पुत्र गणेश के लिए है, जो बाहर दरवाजे पर पहरा दे रहा है।

यह सुनकर शिवजी आश्चर्यचकित हुए। तुम्हारा पुत्र पहरा दे रहा है ? हाँ नाथ! क्या आपने उसे देखा नहीं? देखा तो था, किन्तु मैंने तो अपने रोके जाने पर उसे कोई उद्दण्ड बालक समझकर उसका सिर काट दिया। यह सुनकर पार्वती जी बहुत दुःखी हुईं। वे विलाप करने लगीं। तब पार्वती जी को प्रसन्न करने के लिए भगवान शिव ने एक हाथी के बच्चे का सिर काटकर बालक के धड़ से जोड़ दिया। पार्वती जी इस प्रकार पुत्र गणेश को पाकर बहुत प्रसन्न हुई। उन्होंने पति तथा पुत्र को प्रीति पूर्वक भोजन कराकर बाद में स्वयं भोजन किया।

यह घटना भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को हुई थी। इसीलिए यह तिथि पुण्य पर्व के रूप में मनाई जाती है।

श्री गणेशजी की आरती

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।

माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ।। जय.

एक दन्त दयावन्त चार भुजा धारी ।

माथे सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी ।। जय.

अन्धन को आँख देत कोढ़िन को काया ।

बाँझत को पुत्र देत निर्धन को माया ।। जय.

हार चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा ।

लड्डुअन का भोग लगे सन्त करे सेवा ।। जय.

दीनन की लाज राखो, शम्भु पुत्र वारी ।

मनोरथ को पूरा करो, जय बलिहारी ।। जय.


138 श्री चित्रगुप्त जी महाराज

(चित्रगुप्त पूजा कथा और महात्मय)

जो भी प्राणी धरती पर जन्म लेता है उसकी मृत्यु निश्चित है क्योकि यही विधि का विधान है. विधि के इस विधान से स्वयं भगवान भी नहीं बच पाये और मृत्यु की गोद में उन्हें भी सोना पड़ा. चाहे भगवान राम हों, कृष्ण हों, बुध और जैन सभी को निश्चित समय पर पृथ्वी लोक आ त्याग करना पड़ता है. मृत्युपरान्त क्या होता है और जीवन से पहले क्या है यह एक ऐसा रहस्य है जिसे कोई नहीं सुलझा सकता. लेकिन जैसा कि हमारे वेदों एवं पुराणों में लिखा और ऋषि मुनियों ने कहा है उसके अनुसार इस मृत्युलोक के उपर एक दिव्य लोक है जहां न जीवन का हर्ष है और न मृत्यु का शोक वह लोक जीवन मृत्यु से परे है.

इस दिव्य लोक में देवताओं का निवास है और फिर उनसे भी Šश्नपर विष्णु लोक, ब्रह्मलोक और शिवलोक है. जीवात्मा जब अपने प्राप्त शरीर के कर्मों के अनुसार विभिन्न लोकों को जाता है. जो जीवात्मा विष्णु लोक, ब्रह्मलोक और शिवलोक में स्थान पा जाता है उन्हें जीवन चक्र में आवागमन यानी जन्म मरण से मुक्ति मिल जाती है और वे ब्रह्म में विलीन हो जाता हैं अर्थात आत्मा परमात्मा से मिलकर परमलक्ष्य को प्राप्त कर लेता है.

जो जीवात्मा कर्म बंधन में फंसकर पाप कर्म से दूषित हो जाता हैं उन्हें यमलोक जाना पड़ता है. मृत्यु काल में इन्हे आपने साथ ले जाने के लिए यमलोक से यमदूत आते हैं जिन्हें देखकर ये जीवात्मा कांप उठता है रोने लगता है परंतु दूत बड़ी निर्ममता से उन्हें बांध कर घसीटते हुए यमलोक ले जाते हैं. इन आत्माओं को यमदूत भयंकर कष्ट देते हैं और ले जाकर यमराज के समक्ष खड़ा कर देते हैं. इसी प्रकार की बहुत सी बातें गरूड़ पुराण में वर्णित है.

यमराज के दरवार में उस जीवात्मा के कर्मों का लेखा जोखा होता है. कर्मों का लेखा जोखा रखने वाले भगवान हैं चित्रगुप्त. यही भगवान चित्रगुप्त जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त जीवों के सभी कर्मों को अपनी पुस्तक में लिखते रहते हैं और जब जीवात्मा मृत्यु के पश्चात यमराज के समझ पहुचता है तो उनके कर्मों को एक एक कर सुनाते हैं और उन्हें अपने कर्मों के अनुसार क्रूर नर्क में भेज देते हैं.

भगवान चित्रगुप्त परमपिता ब्रह्मा जी के अंश से उत्पन्न हुए हैं और यमराज के सहयोगी हैं. इनकी कथा इस प्रकार है कि सृष्टि के निर्माण के उद्देश्य से जब भगवान विष्णु ने अपनी योग माया से सृष्टि की कल्पना की तो उनकी नाभि से एक कमल निकला जिस पर एक पुरूष आसीन था चुंकि इनकी उत्पत्ति ब्रह्माण्ड की रचना और सृष्टि के निर्माण के उद्देश्य से हुआ था अत: ये ब्रह्मा कहलाये. इन्होंने सृष्ट की रचना के क्रम में देव-असुर, गंधर्व, अप्सरा, स्त्री-पुरूष पशु-पक्षी को जन्म दिया. इसी क्रम में यमराज का भी जन्म हुआ जिन्हें धर्मराज की संज्ञा प्राप्त हुई क्योंकि धर्मानुसार उन्हें जीवों को सजा देने का कार्य प्राप्त

हुआ था. धर्मराज ने जब एक योग्य सहयोगी की मांग ब्रह्मा जी से की तो ब्रह्मा जी ध्यानलीन हो गये और एक हजार वर्ष की तपस्या के बाद एक पुरूष उत्पन्न हुआ. इस पुरूष का जन्म ब्रह्मा जी की काया से हुआ था अत: ये कायस्थ कहलाये और इनका नाम चित्रगुप्त पड़ा.

चित्रगुप्त पूजा विधि (Chitragupta Pooja Vidhi)

भगवान चित्रगुप्त जी के हाथों में कर्म की किताब, कलम, दवात और जल है. ये कुशल लेखक हैं और इनकी लेखनी से जीवों को उनके कर्मों के अनुसार न्याय मिलती है. कार्तिक शुक्ल द्वितीया तिथि को भगवान चित्रगुप्त की पूजा का विधान है. इस दिन भगवान चित्रगुप्त और यमराज की मूर्ति स्थापित करके अथवा उनकी तस्वीर रखकर श्रद्धा पूर्वक सभी प्रकार से फूल, अक्षत, कुमकुम, सिन्दूर एवं भांति भांति के पकवान, मिष्टान एवं नैवेद्य सहित इनकी पूजा करें. और फिर जाने अनजाने हुए अपराधों के लिए इनसे क्षमा याचना करें. यमराज औ
र चित्रगुप्त की पूजा एवं उनसे अपने बुरे कर्मों के लिए क्षमा मांगने से नरक का फल भोगना नहीं पड़ता है. इस संदर्भ में एक कथा का यहां उल्लेखनीय है.

चित्रगुप्त पूजा व्रत कथा (Chitragupta Pooja Vrat katha)

सराष्ट्र में एक राजा हुए जिनका नाम सदास था. राजा अधर्मी और पाप कर्म करने वाला था. इस राजा ने कभी को पुण्य का काम नहीं किया था. एक बार शिकार खेलते समय जंगल में भटक गया. वहां उन्हें एक ब्रह्मण दिखा जो पूजा कर रहे थे. राजा उत्सुकतावश ब्रह्ममण के समीप गया और उनसे पूछा कि यहां आप किनकी पूजा कर रहे हैं. ब्रह्मण ने कहा आज कार्तिक शुक्ल द्वितीया है इस दिन मैं यमराज और चित्रगुप्त महाराज की पूजा कर रहा हूं. इनकी पूजा नरक से मुक्ति प्रदान करने वाली है. राजा ने तब पूजा का विधान पूछकर वहीं चित्रगुप्त और यमराज की पूजा की.

काल की गति से एक दिन यमदूत राजा के प्राण लेने आ गये. दूत राजा की आत्मा को जंजीरों में बांधकर घसीटते हुए ले गये. लहुलुहान राजा यमराज के दरबार में जब पहुंचा तब चित्रगुप्त ने राजा के कर्मों की पुस्तिका खोली और कहा कि हे यमराज यूं तो यह राजा बड़ा ही पापी है इसने सदा पाप कर्म ही किए हैं परंतु इसने कार्तिक शुक्ल द्वितीया तिथि को हमारा और आपका व्रत पूजन किया है अत: इसके पाप कट गये हैं और अब इसे धर्मानुसार नरक नहीं भेजा जा सकता. इस प्रकार राजा को नरक से मुक्ति मिल गयी.

श्री चित्रगुप्त भगवान

ऊँ जय चित्रगुप्त हरे, स्वामी जय चित्रगुप्त हरे।
भक्त जनों के इच्छित फल को पूर्ण करे ।। ऊँ जय ।।

विघ्न विनाशक मंगलकर्ता, सन्तन सुखदाई ।
भक्तन के प्रतिपालक, त्रिभुवन यश छाई ।। ऊँ जय ।।

रूप चतुर्भुज, श्यामल मूरति, पीताम्बर साजे।
मातु इरावति दक्षिणा, बाम अंग साजे ।। ऊँ जय ।।

कष्ट निवारण, दुष्ट संहारण, प्रभु अन्तर्यामी।
सृष्टि सम्हारन, जन दुःख हारन, प्रकट हुए स्वामी ।। ऊँ जय ।।

कलम दवात तलवार पत्रिका, कर में अति सोहे।
वैजन्ती वनमाला त्रिभुवन मन मोहे ।। ऊँ जय ।।

सिंहासन का कार्य सम्हाला, ब्रह्मा हरषाये।
तैंतीस कोटि देवता, वरणन में धाये ।। ऊँ जय ।।

नृपति सौदास, भीष्म पितामह, याद तुम्हें कीना ।
वेगि बिलम्ब न लायो, इच्छित फल दीन्हा ।। ऊँ जय ।।

दारा सुत, भगिनी सब स्वास्थ के कर्ता ।
जाऊँ कहां शरण में, तु तज मैं भर्ता ।। ।। ऊँ जय ।।

बन्धु, पिता तुम स्वामी, शरण गहूं किसकी ।
तुम बिन और न दूजा, आस करूं जिसकी ।। ऊँ जय ।।

जो जन चित्रगुप्त जी की आरती निशा दिन नित गावे ।
चौरासी के छूटे बन्धन इच्छित फल पावे ।। ऊँ जय ।।

न्यायाधीश बैकुण्ठ निवासी,पाप पुण्य लिखते।
हम हैं शरण तिहारी, आस न दूजी करते ।। ऊँ जय ।।



रामनवमी व्रत कथा | Ram Navami Vrat Katha in Hindi

वन में राम, सीता और लक्ष्मण जा रहे थे. सीता जी और लक्ष्मण को थका हुआ देखकर राम जी ने थोडा रुककर आराम करने का विचार किया और एक बुढिया के घर गए. बुढिया सूत कात रही थी. बुढिया ने आवभगत की और बैठाया, स्नान-ध्यान करवाकर भोजन करवाया. राम जी ने कहा- बुढिया माई, पहले मेरा हंस मोती चुगाओं, तो में भी करूं. बेचारी के पास मोती कहां से आवें, सूत कात कर गरीभ गुजारा करती थी.

पर अतिथि को ना कहना भी वह ठिक नहीं समझती थी. दुविधा में पड गई. अत: दिन को मजबूत कर राजा के पास पहुंच गई. और अंजली मोती देने के लिये विनती करने लगी. राजा अपना अंचम्बे में पडा कि इसके पास खाने को दाने नहीं है. और मोती उधार मांग रही है. इस स्थिति में बुढिया से मोती वापस प्राप्त होने का तो सवाल ही नहीं उठता. पर आखिर राजा ने अपने नौकरों से कहकर बुढिया को मोती दिला दिये.

बुढिया लेकर घर आई, हंस को मोती चुगाएं, और मेहमानों को आवभगत की. रात को आराम कर सवेरे राम जी, सीता जी और लक्ष्मण जी जाने लगें. जाते हुए राम जी ने उसके पानी रखने की जगह पर मोतीयों का एक पेड लगा दिया. दिन बीते पेड बडा हुआ, पेड बढने लगा, पर बुढिया को कुछ पता नहीं चला. पास-पडौस के लोग चुग-चुगकर मोती ले जाने लगें.

एक दिन जब वह उसके नीचे बैठी सूत कात रही थी. तो उसके गोद में एक मोती आकर गिरा. बुढिया को तब ज्ञात हुआ. उसने जल्दी से मोती बांधे और अपने कपडे में बांधकर वह किले की ओर ले चली. उसने मोती की पोटली राजा के सामने रख दी. तो इतने सारे मोती देख राजा अचम्भे में पड गया. उसके पूछने पर बुढिया ने राजा को सारी बात बता दी. राजा के मन में लालच आ गया.

वह बुढिया से मोती का पेड मांगने लगा. बुढिया ने कहा की आस-पास के सभी लोग ले जाते है. आप भी चाहे अतो ले लें. मुझे क्या करना है. राजा ने तुरन्त पेड मंगवाया और अपने दरवार में लगवा दिया. पर रामजी की मर्जी, मोतियों की जगह कांटे हो गये और आते -आते लोगों के कपडे उन कांटों से खराब होने लगें. एक दिन रानी की ऐडी में अएक कांटा चुभ गया

और पीडा करने लगा. राजा ने पेड उठवाकर बुढिया के घर वापस भिजवा दिया. तो पहले की तरह से मोती लग��े लगें. बुढिया आराम से रहती और खूब मोती बांटती.

रामनवमी व्रत फल | Ramnavami Vrat Benefits

श्री रामनवमी का व्रत करने से व्यक्ति के ज्ञान में वृद्धि होती है. उसकी धैर्य शक्ति का विस्तार होता है. इसके अतिरिक्त उपवासक को विचार शक्ति, बुद्धि, श्रद्धा, भक्ति और पवित्रता की भी वृद्धि होती है. इस व्रत के विषय में कहा जाता है, कि जब इस व्रत को निष्काम भाव से किया जाता है. और आजीवन किया जाता है, तो इस व्रत के फल सर्वाधिक प्राप्त होते है.

श्री रामचन्द्र जी की आरती

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभय दारुणम् .
नवकञ्ज लोचन कञ्ज मुखकर कञ्जपद कञ्जारुणम् .. १..

कंदर्प अगणित अमित छबि नव नील नीरज सुन्दरम् .
पटपीत मानहुं तड़ित रुचि सुचि नौमि जनक सुतावरम् .. २..

भजु दीन बन्धु दिनेश दानव दैत्यवंशनिकन्दनम् .
रघुनन्द आनंदकंद कोशल चन्द दशरथ नन्दनम् .. ३..

सिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु उदार अङ्ग विभूषणम् .
आजानुभुज सर चापधर सङ्ग्राम जित खरदूषणम् .. ४..

इति वदति तुलसीदास शङ्कर शेष मुनि मनरञ्जनम् .
मम हृदयकञ्ज निवास कुरु कामादिखलदलमञ्जनम् .. ५..


सूर्य
शिव
ब्रह्मा
वरुण
इन्द्र
कपिल
लक्ष्मी
अग्नि
विष्णु
सरस्वती
राहु
केतु
भौमादेवी
नारद
विश्वामित्र
पाराशर
अमृतसागर
हनुमान
भैरव
काम
अर्थ
धर्म
भोलीगोपी
गंधर्व
सर्प
नाग

(गोवत्स पूजन कथा)

कार्तिक कृष्ण पक्ष द्वादशी के दिन गाय और बछड़े की पूजा का विधान है. इस दिन पुत्रवती स्त्रियां व्रत भी रखती हैं. इस व्रत को कहीं गोवत्स के नाम से जाना जाता है तो कहीं बच्छदुआ के नाम से. अलग अलग प्रांतों में इस व्रत के नाम अलग हैं लेकिन व्रत का उद्देश्य और फल एक ही है. इस व्रत का उद्देश्य पुत्र की सलामती है.

गोवत्स बच्छदुआ व्रत कथा

कथा है कि भगवान श्री कृष्ण जब पहली बार ग चराने जा रहे थे तो उनकी मैया यशोदा ने आँगन लीप कर गाय और बछड़ों की पूजा की और साथ ही श्री कृष्ण को टीका लगाया और उनकी आरती उतारी फिर कृष्ण के साथ गायों को विदा कर दिया. श्री हरि की सभी कलाअसें ये युक्त परम पुरूषोत्तम भगचान कष्ण्चंद द्वारा गायों को पहली बार चराने हेतु ले जाने के उपलक्ष्य में श्रद्धालु महिलाएं यह व्रत रखती हैं.

अन्य कथा के अनुसार प्राचीन काल में किसी गांव में एक बूढ़ी महिला अपनी पुत्रवधू के साथ रहती थी. पुत्रवधू अपनी सास की हर आज्ञा का पालन करती थी. एक दिन की बात है सासु मां स्नान के लिए नदी जा रही थी. जाते हुए उन्होंने कहा कि आंगन में जो घास है वह काट कर बच्छी यानी बछड़े को दे दो और मच्छी यानी मछली को हांडी में पकने दे दो. बहू अपने काम में मग्न थी इसलिए सासु मां की बात को ठीक से सुन नहीं पायी और उसे लगा कि सासु ने कहा है बच्छी काटकर पकने देने के लिए, ऐसा सोचकर उसने बच्छी को मार कर हंडी में पका दिया. सास जब स्नान करके आयी तो सब बातें जानकर बहुत दु:खी हो गयी. और उसे लगा कि इस घटना के कारण उसके बेटे पर प्राण का संकट आने वाला है अत: जिद कर बैठी की जब तक बच्छी जीवित नहीं होती वह अन्न जल ग्रहण नहीं करेगी.

सासु मां के इस जिद्द को देखकर बहु भी घबरा गयी और आटे की लोई से बछड़ा बनाकर व्रत और पूजन किया. व्रत और पूजा के प्रभाव से गोधूली के समय जब गाय लटी तो उसके साथ उसकी बच्छी भी पीछे पीछे आ रही थी. इसे देखकर सास को अति प्रसन्नता हुई और उसके बेटे के जीवन पर आने वाला संकट टल गया. इस दिन से महिलाएं पुत्र की लम्बी आयु के

लिए कार्तिक कृष्ण की द्वादशी तिथि को ब्रत रखने लगी जो बच्छ दुआ व्रत के नाम से जाना जाता है.

गोवत्स व्रत पूजा विधान

इस व्रत में पूजा का विधान यह है कि व्रती नदी या तालाब में स्नान करते हैं. स्नान के बाद आंटे की लोई से गाय और बछड़ा बनाय जाता है. इन गाय और बछड़ों की दीप आदि से पूजा की जाती है. संध्या के समय जब गाएं चर कर घर वापस आती हैं तब आंगन में गाय की पूजा धूप, दीप, चंदन, नैवेद्य आदि के साथ की जाती है.

इस पूजा में धान का चावल प्रयोग नहीं करना चाहिए ऐसी मान्यताएं हैं. इस व्रत में पूजा हेतु काकुन के चावल का प्रयोग अक्षत के रूप में किया जाता है. कोदो का चावल और चने की दाल तथा काकुन के चावल का भोजन इस व्रत में उत्तम माना गया है. इस व्रत में व्रत करने वालों के लिए गाय का दूध, दही, घी एवं गाय के दूध से बने पदार्थ वर्जित बताये गये हैं

आरती श्री गोमाताजी की

आरती श्री गैया मैया की। आरती हरनि विश्वधैया की।।

अर्थकाम सद्धर्म प्रदायिनि ,अविचल अमल मुक्तिपददायिनि।

सुर मानव सौभाग्यविधायिनि,प्यारी पूज्य नंद छैया की।।

अखिल विश्व प्रतिपालिनि माता,मधुर अमिय दुग्धान्न प्रदाता।।

रोग शोक संकट परित्राता, भवसागर हित दृढ़ नैया की।।

आयु ओज आरोग्यविकाशिनि,दुख दैन्य दारिद्र्य विनाशिनि।

सुष्मा सौख्य समृद्धि प्रकाशिनि, विमल विवेक बुद्धि दैया की।।

सेवक हो चाहे दुखदाई,सम पय सुधा पियावति माई।

शत्रु–मित्र सबको सुखदायी,स्नेह स्वभाव विश्व जैया की।।



साईं बाबा व्रत पूजा

साई बाबा व्रत को कोई भी व्यक्ति कर सकता है. इस व्रत को करने के नियम भी अत्यंत साधारण है. साई बाबा अपने भक्तों की हर इच्छा पूरी करते है. उनकी कृपा से सभी की मनोकामनाएं पूरी होती है. मांगने से पहले ही वे सब कुछ देते है. उनके स्मरण मात्र से जीवन में आ रही बाधाओं में कमी होती है. कहा भी जाता है, कि शिरडी वाले श्री साईं बाबा कि महिमा का कोई और ओर छोर नहीं है. साईं बाबा पर पूरा विश्वास करने वालों को कभी निराशा का सामना नहीं करना पडता है.

साई बाबा 9 गुरुवार व्रत | 9 Thursday Sai Vrat

साई बाबा व्रत को कोई भी साधारण जन कर सकता है. यहां तक की बच्चे भी इस व्रत को कर सकते है. साई बाबा अपने भक्तों में किसी प्रकार का कोई भेद भाव नहीं करते है. उनकी शरण में अमीर-गरीब या किसी भी वर्ग का व्यक्ति आये उसकी कार्य सिद्धि अवश्य पूरी होती है. साई बाबा व्रत एक बार शुरु करने के बाद नियमित रुप से 9 गुरुवार तक किया जाता है. इस व्रत को कोई भी व्यक्ति साई बाबा का नाम लेकर शुरु कर सकता है.

व्रत करने के लिये प्रात: स्नान करने के बाद साई बाबा की फोटो की पूजा कि जाती है. साई बाबा की फोटों लगाने के लिये सबसे पहले पीले रंग का वस्त्र बिछाया जाता है. इस पर साई बाबा की प्रतिमा या फोटो लगाई जाती है. इसे स्वच्छ पानी से पोंछ कर इसपर चंदन का तिलक लगाया जाता है.

साई बाबा की फोटों पर पीले फूलों का हार चढाना चाहिए. अगरबती और दीपक जलाकर साई व्रत की कथा पढनी चाहिए. और साई बाबा का स्मरण करना चाहिए. इसके बाद बेसन के लड्डूओं का प्रसाद बांटा जाता है. इस व्रत को फलाहार ग्रहण करके किया जा सकता है. या फिर के समय में भोजन करके किया जा सकता है. इस व्रत में कुछ न कुछ खाना जरुरी है, भूखे रहकर इस व्रत को नहीं किया जाता है.

इस प्रकार व्रत करने के बाद 9 गुरुवार तक साईं बाबा के मंदिर जाकर दर्शन करना भी शुभ रहता है. घर के निकट साई बाबा मंदिर न होने पर घर में भी साई फोटों की पूरी श्रद्वा से पूजा करनी चाहिए. किसी भी स्थान पर हों, व्रत की संख्या 9 होने से पूर्व इसे मध्य में नहीं छोडना चाहिए.

साई बाबा व्रत उद्यापन | Sai Baba Vrat Udyapan

शिरडी के साई बाबा के व्रत की संख्या 9 हो जाने पर अंतिम व्रत के दिन पांच गरीब व्यक्तियों को भोजन और सामर्थ्य अनुसार दान देना चाहिए. इसके साथ ही साई बाबा की कृपा का प्रचार करने के लिये 7, 11, 21 साई पुस्तकें, अपने आस-पास के लोगों में बांटनी चाहिए. इस प्रकार इस व्रत को समाप्त किया जाता है.

शिरडी साई बाबा चमत्कार | Sai Baba Miracles

भारत प्राचीन काल से ही धार्मिक आस्था और पूजा-उपासना में विश्वास करने वाला देश रहा है. यहां कई धर्म और वर्ग और संस्कृतियां अलग - अलग होकर भी एक साथ रहती है. इसके साथ ही भारत में अनेक संत-महापुरुषों ने जन्म लिया. कई संतों के द्वारा किये गये चमत्कार आज भी चर्चा का विषय रहे है.

शिरडी के साई बाबा के चमत्कार की अनेक कथाएं प्रचलित है. शिरडी के साई बाबा पर देश के करोडों लोगों की अगाध श्रद्धा है. सभी धर्मों के लोग यहां साई बाबा दर्शन के लिये आते है. यही कारण है कि साई बाबा संस्थान की प्रसिद्धि भी इसके साथ ही बढती जा रही है.

यह साई बाबा का चमत्कार नहीं तो और क्या है. कि आज भी देश भर में बाबा के नाम पर छोटे बडे अस्सी हजार से अधिक मंदिर हो गये है.

साई बाबा व्रत कथा

एक शहर में कोकिला नाम की स्त्री और उसके पति महेशभाई रहते थे. दोनों का वैवाहिक जीवन सुखमय था. दोनों में आपस में स्नेह और प्रेम था. पर महेश भाई कभी कभार झगडा

करने की आदत थी. परन्तु कोकिला अपने पति के क्रोध का बुरा न मानती थी. वह धार्मिक आस्था और विश्वास वाली महिला थी. उसके पति का काम-धंधा भी बहुत अच्छा नहीं था. इस कारण वह अपना अधिकतर समय अपने घर पर ही व्यतीत करता था. समय के साथ काम में और कमी होने पर उसके स्वभाव में और अधिक चिडचिडापन रहने लगा.

एक दिन दोपहर के समय कोकिला के दरवाजे पर एक वृद्ध महाराज आयें. उनके चेहरे पर गजब का तेज था. वृद्ध महाराज के भिक्षा मांगने पर उसे दाल-चावल दियें. और दोनों हाथोम से उस वृद्ध बाबा को नमस्कार किया. बाबा के आशिर्वाद देने पर कोकिला के मन का दु:ख उसकी आंखों से छलकने लगा. इस पर बाबा ने कोकिला को श्री साई व्रत के बारे में बताया और कहा कि इस व्रत को 9 गुरुवार तक एक समय भोजन करके करना है. पूर्ण विधि-विधान से पूजा करने, और साईबाबा पर अट्टू श्रद्वा रखना. तुम्हारी मनोकामना जरूर पूरी होगी.

महाराज के बताये अनुसार कोकिला ने व्रत गुरुवार के दिन साई बाबा का व्रत किया. और 9वेम गुरुवार को गरीबों को भोजन भी दिया. साथ ही साईं पुस्तकें भेंट स्वरुप दी. ऎसा करने से उसके घर के झगडे दूर हो गये और उसके घर की सुख शान्ति में वृद्धि हुई. इसके बाद दोनों का जीवन सुखमय हो गया.

एक बार उसकी जेठानी ने बातों-बातों में उसे बताया, कि उसके बच्चे पढाई नहीं करते यही कारण है. कि परीक्षा में वे फेल हो जाते है. कोकिला बहन ने अपनी जेठानी को श्री साई बाबा के 9 व्रत का महत्व बताया. कोकिला बहन के बताये अनुसार जेठानी ने साई व्रत का पालन किया. उसके थोडे ही दिनों में उसके बच्चे पढाई करने लगें. और बहुत अच्छे अंकों से पास हुए.

आरती श्री शिरडी के साईबाबा की

आरती श्री साई गुरूवर की । परमानन्द सदा सुरवर की ।।

जाकी कृपा विपुल सुखकारी ।दु:ख, शोक ,संकट, भयहारी।।1।।

शिरडी मे अवतार रचाया । चमत्कार से तत्व दिखाया ।।2।।

कितने भक्त चरण पर आये । वे सुख–शांति चिरतंन पाये ।।3।।

भाव धरे मन में जैसा । पावत अनुभव वो ही वैसा ।।4।।

गुरू की लगावे तन को । समाधान लाभत उस मनको ।।5।।

साई नाम सदा जो गावे । सो फल जग मे शाश्वत पावे ।।6।।

गुरूवारसर करि पूजा–सेवा ।। उस पर कृपा करत गुरूदेवा।।7।।

राम,कृष्ण,हनुमान रूप में ।। दे दर्शन जानत जो मन में ।।8।।

विविध धर्म के सेवक आते । दर्शन से इच्छित फल पाते ।।9।।

जय बोलो साईबाबा की । जय बोलो अवधूतगुरू की ।।10।।

'साईदास' आरती को गावे । घर में बसि सुख, मंगल पावे।।11।।

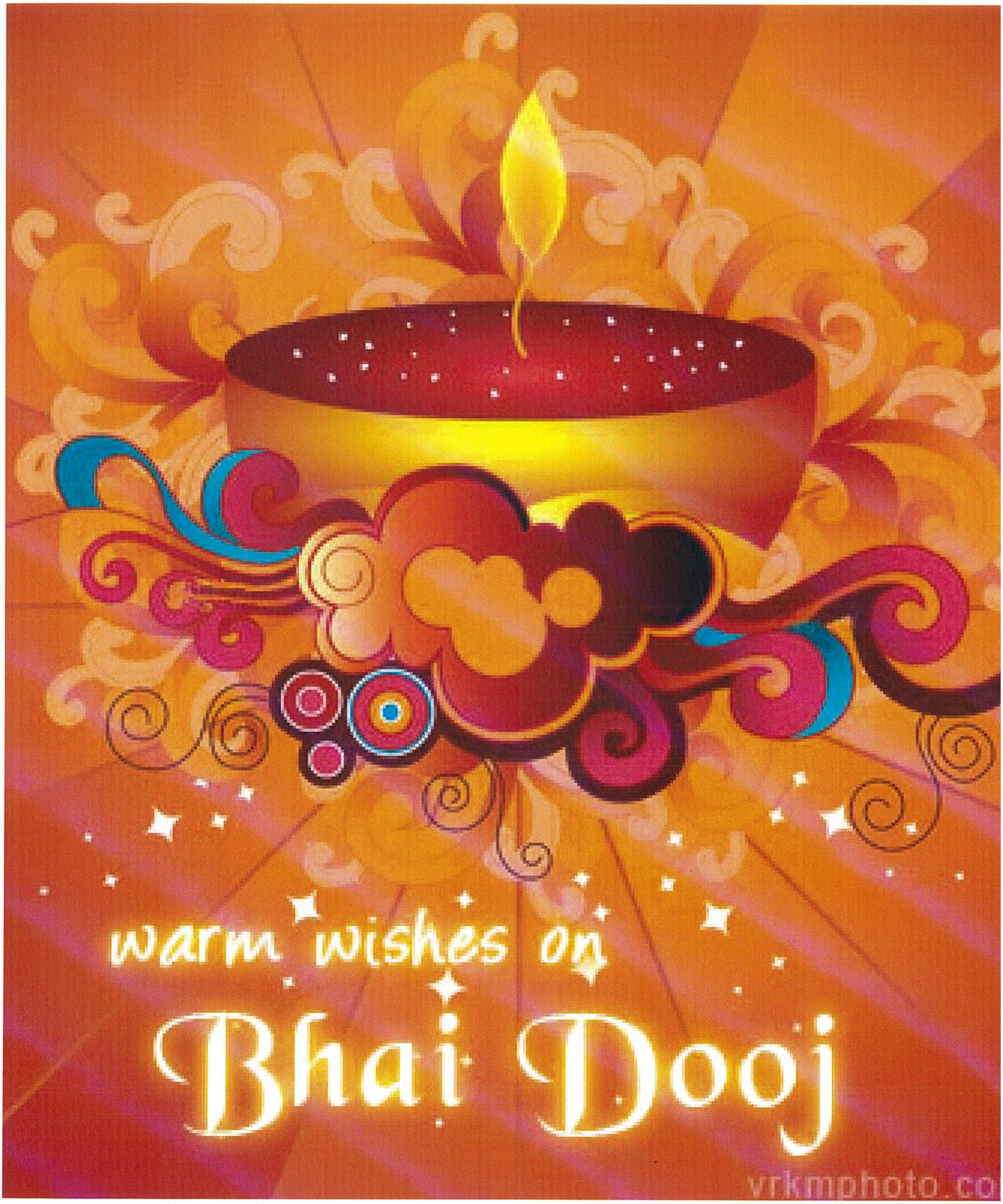


नृसिंह जयंती व्रत

हिन्दू पंचांग के अनुसार नृसिंह जयंती का व्रत वैशाख माह के शुक्ल पक्ष की चतुर्थी तिथि को मनाया जाता है. पुराणों में वर्णित कथाओं के अनुसार इसी पावन दिवस को भक्त प्रहलाद की रक्षा करने के लिए भगवान विष्णु ने नृसिंह रूप में अवतार लिया था. जिस कारणवश यह दिन भगवान नृसिंह के जयंती रूप में बड़े ही धूमधाम और हर्सोल्लास के साथ मनाया जाता है. भगवान नृसिंह जयंती की व्रत कथा इस प्रकार से है- कथानुसार अपने भाई की मृत्यु का बदला लेने के लिए राक्षसराज हिरण्यकशिपु ने कठिन तपस्या करके ब्रह्माजी व शिवजी को प्रसन्न कर उनसे अजेय होने का वरदान प्राप्त कर लिया. वरदान प्राप्त करते ही अहंकारवश वह प्रजा पर अत्याचार करने लगा और उन्हें तरह-तरह के यातनाएं और कष्ट देने लगा. जिससे प्रजा अत्यंत दुखी रहती थी. इन्हीं दिनों हिरण्यकशिपु की पत्नी कयाधु ने एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम प्रहलाद रखा गया. राक्षस कुल में जन्म लेने के बाद भी बचपन से ही श्री हरि भक्ति से प्रहलाद को गहरा लगाव था.

हिरण्यकशिपु ने प्रहलाद का मन भगवद भक्ति से हटाने के लिए कई असफल प्रयास किए, परन्तु वह सफल नहीं हो सका. एक बार उसने अपनी बहन होलिका की सहायता से उसे अग्नि में जलाने के प्रयास किया, परन्तु प्रहलाद पर भगवान की असीम कृपा होने के कारण उसे मायूसी ही हाथ लगी. अंततः एक दिन उसने प्रहलाद को तलवार से मारने का प्रयास किया, तब भगवान नृसिंह खम्भे से प्रकट हुए और हिरण्यकशिपु को अपने जांघों पर लेते हुए उसके सीने को अपने नाखूनों से फाड़ दिया और अपने भक्त की रक्षा की.

भक्तों के अनुसार इस दिन यदि कोई व्रत रखते हुए श्रद्धा और भक्तिपूर्वक भगवान नृसिंह की सेवा-पूजा करता है तो वह सभी जन्मों के पापों से मुक्त होकर प्रभु के परमधाम को प्राप्त करता है.


warm wishes on
Bhai Dooj
vrkmphoto.co

भैयादूज कथा

भगवान सूर्य नारायण की पत्नी का नाम संज्ञा था। उन्हीं की कोख से यमराज तथा यमुना का जन्म हुआ था। यमुना यमराज से बड़ा स्नेह करती थीं। वे उनसे बराबर निवेदन करती कि इष्ट मित्रों सहित उनके घर आकर भोजन करें। लेकिन अपने कार्य में व्यस्त यमराज बात को टालते रहते थे। कार्तिक शुक्ल का दिन आया। यमुना ने उस दिन यमराज को भोजन का निमंत्रण देकर उन्हें अपने घर आने के लिए वचनबद्ध कर लिया।

यमराज ने सोचा- मैं तो प्राणों को हरने वाला हूँ। मुझे कोई भी अपने घर नहीं बुलाना चाहता। बहन जिस सद्भावना से मुझे बुला रही है, उसका पालन करना मेरा धर्म है। यही सोचकर यम राज ने बहन के घर जाने का निर्णय कर लिया। यमराज को अपने घर आया देखकर यमुना की खुशी का ठिकाना न रहा। यमुना ने उन्हें स्नान कराकर पूजा के बाद अनेक व्यंजन परोसकर भोजन कराया। यमुना द्वारा किए गए आतिथेय से प्रसन्न होकर यमराज ने बहन को वर माँगने का आदेश दिया। यमुना ने कहा- भद्र! आप प्रतिवर्ष इसी दिन मेरे घर आकर भोजन करें। मेरी तरह जो बहन इस दिन अपने भाई का आदर-सत्कार करके टीका काढ़े, उसे तुम्हारा भय न रहे।

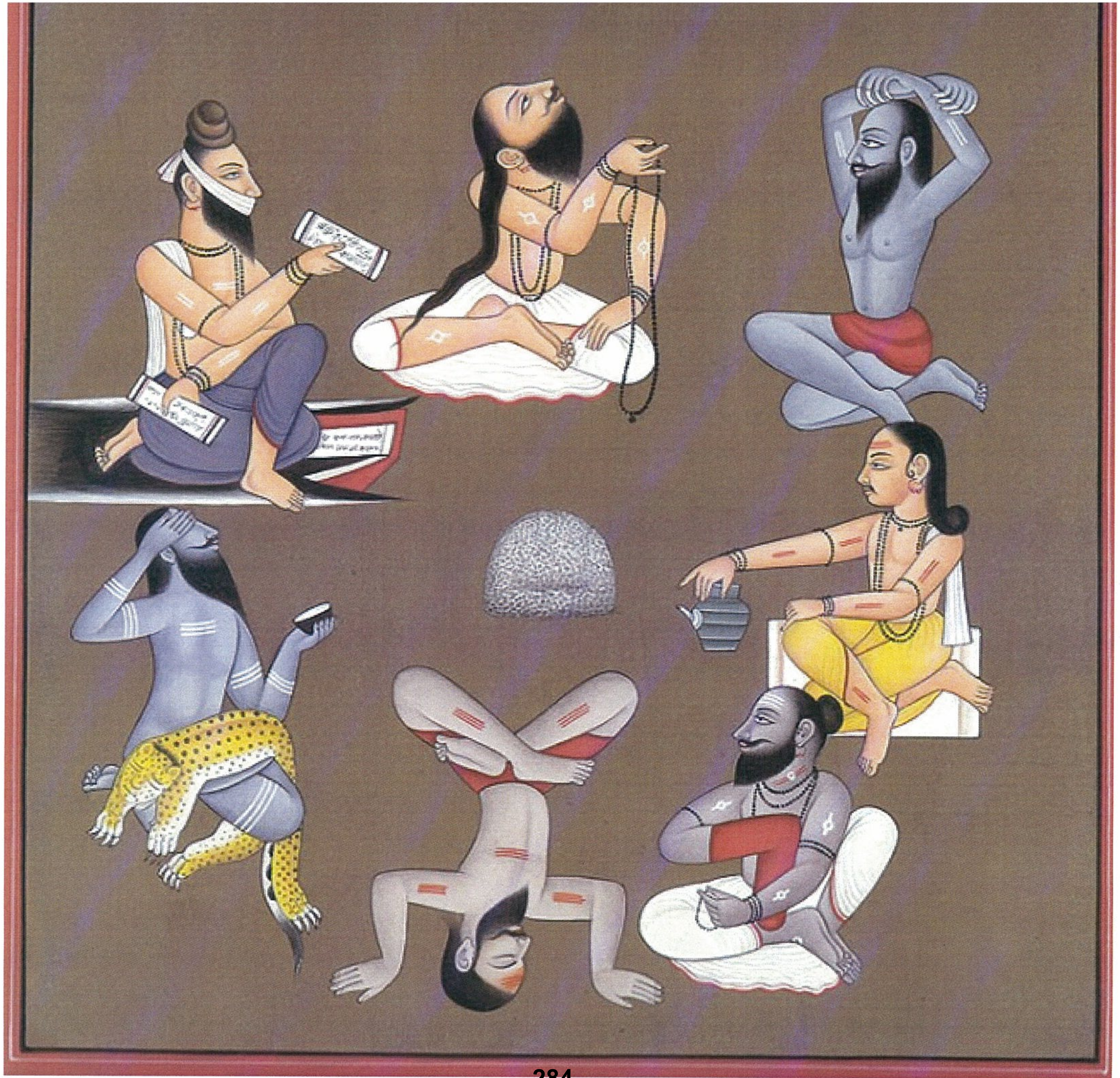
यमराज ने 'तथास्तु' कहकर यमुना को अमूल्य वस्त्राभूषण देकर यमलोक की राह ली। इसी दिन से इस पर्व की परम्परा बनी। ऐसी मान्यता है कि जो भाई आज के दिन यमुना में स्नान करके पूरी श्रद्धा से बहनों के आथितेय को स्वीकार करते हैं, उन्हें यम का भय नहीं रहता। इसीलिए भैयादूज को यमराज तथा यमुना का पूजन किया जाता है।

भैया दूज कथा प्रारम्भ

दीपावली के तीसरे दिन अर्थात् कार्तिक शुक्ल द्वितीया को भाई दूज के नाम से जाना जाता है। इस दिन भाई अपनी बहन के हाथो रोली-अक्षत लगवाकर मिठाई खाता और उसे दक्षिणा के रूप मे कुछ द्रव्य भी देता है । इस दिन भाई के लिए बहिन के घर का भोजन करने का विधान है। परन्तु कहीं-कहीं जिनके भहाई बहिन के घर नही पहुँच पाते उनकी बहिनें भाई के घर पर जा कर उन्हे टीका लगाकर मिठाइयाँ खिलाती है।
पौराणिक कथाओ के आधार पर ऐसा कहा जाता है कि, एक बार यमुना (नदी) ने अपने भाईयमराज को मांगलिक द्रव्यो से टीका लगाकर उन्हे भोजन कराया था। जिस दिन यमुना ने भाई से आग्रह कर भोजन आदि से सन्तुष्ट किया था, उस दिन कार्तिक शुक्ल द्वितीया तिथि थी। तभी से इस पर्व को माना जाने लगा। बहिन की सेवा से सन्तुष्ट होकर यमुना से वरदान मांगने के लिए कहा। बहिन यमुना ने उत्तर दिया- आज की पुनीत तिथि के दिन जो भाई-बहिन एक साथ मेरे जल मे स्नान करें, उन्हे अन्त काल मे यम-यातना न भोगना पड़े और वह जीवनकाल मे सभी प्रकार से सुख - समृद्धि को प्राप्त हो । अपनी बहिन को अभीसत वरदान देकर यमराज अपने लोक को चले गए।

अत: हम सभी लोगों का नैतिक कर्तव्य है कि, इस पावन-पर्व को विधिवत् मनाए।

।। समाप्त ।।



ऋषि पंचमी व्रत

भाद्रपद माह के शुक्ल पक्ष की पंचमी ऋषि पंचमी के रुप में मनाई जाती है. इस व्रष ऋषि पंचमी व्रत 10 सितंबर 2013 को मंगलवार के दिन किया जाना है. ऋषि पंचमी का व्रत सभी के लिए फल दायक होता है. इस व्रत को श्रद्धा व भक्ति के साथ मनाया जाता है. आज के दिन ऋषियों का पूर्ण विधि-विधान से पूजन कर कथा श्रवण करने का बहुत महत्व होता है. यह व्रत पापों का नाश करने वाला व श्रेष्ठ फलदायी है. यह व्रत और ऋषियों के प्रति श्रद्धा, कृतज्ञता, समर्पण एवं सम्मान की भावना को प्रदर्शित करने का महत्वपूर्ण आधार बनता है.

ऋषि पंचमी पूजन | Rishi Panchami Puja Rituals

पूर्वकाल में यह व्रत समस्त वर्णों के पुरुषों के लिए बताया गया था, किन्तु समय के साथ साथ अब यह अधिकांशत: स्त्रियों द्वारा किया जाता है. इस दिन पवित्र नदीयों में स्नान का भी बहुत महत्व होता है. सप्तऋषियों की प्रतिमाओं को स्थापित करके उन्हें पंचामृत में स्नान करना चाहिए. तत्पश्चात उन पर चन्दन का लेप लगाना चाहिए, फूलों एवं सुगन्धित पदार्थों, धूप, दीप, इत्यादि अर्पण करने चाहिए तथा श्वेत वस्त्रों, यज्ञोपवीतों और नैवेद्य से पूजा और मन्त्र जाप करना चाहिए.

ऋषि पंचमी कथा प्रथम | Rishi Panchami Katha

एक समय विदर्भ देश में उत्तक नाम का ब्राह्मण अपनी पतिव्रता पत्नी के साथ निवास करता था. उसके परिवार में एक पुत्र व एक पुत्री थी. ब्राह्मण ने अपनी पुत्री का विवाह अच्छे ब्राह्मण कुल में कर देता है परंतु काल के प्रभाव स्वरुप कन्या का पति अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है, और वह विधवा हो

जाती है तथा अपने पिता के घर लौट आती है. एक दिन आधी रात में लड़की के शरीर में कीड़े उत्पन्न होने लगते है

अपनी कन्या के शरीर पर कीड़े देखकर माता पिता दुख से व्यथित हो जाते हैं और पुत्री को उत्तक ऋषि के पास ले जाते हैं. अपनी पुत्री की इस हालत के विषय में जानने की प्रयास करते हैं. उत्तक ऋषि अपने ज्ञान से उस कन्या के पूर्व जन्म का पूर्ण विवरण उसके माता पिता को बताते हैं और कहते हैं कि कन्या पूर्व जन्म में ब्राह्मणी थी और इसने एक बार रजस्वला होने पर भी घर बर्तन इत्यादि छू लिये थे और काम करने लगी बस इसी पाप के कारण इसके शरीर पर कीड़े पड़ गये हैं.

शास्त्रों के अनुसार रजस्वला स्त्री का कार्य करना निषेध है परंतु इसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया और इसे इसका दण्ड भोगना पड़ रहा है. ऋषि कहते हैं कि यदि यह कन्या ऋषि पंचमी का व्रत करे और श्रद्धा भाव के साथ पूजा तथा क्षमा प्रार्थना करे तो उसे अपने पापों से मुक्ति प्राप्त हो जाएगी. इस प्रकार कन्या द्वारा ऋषि पंचमी का व्रत करने से उसे अपने पाप से मुक्ति प्राप्त होती है.

एक अन्य कथा के अनुसार यह कथा श्री कृष्ण ने युधिष्ठर को सुनाई थी. कथा अनुसार जब वृजासुर का वध करने के कारण इन्द्र को ब्रह्म हत्या का महान पाप लगा तो उसने इस पाप से मुक्ति पाने के लिए ब्रह्मा जी से प्रार्थना की. ब्रह्मा जी ने उस पर कृपा करके उस पाप को चार बांट दिया था जिसमें प्रथम भाग अग्नि की ज्वाला में, दूसरा नदियों के लिए वर्ष के जल में, तीसरे पर्वतों में और चौथे भाग को स्त्री के रज में विभाजित करके इंद्र को शाप से मुक्ति प्रदान करवाई थी. इसलिए उस पाप को शुद्धि के लिए ही हर स्त्री को ऋषि पंचमी का व्रत करना चाहिए.



Gangaur Vrat Katha

एक बार भगवान शंकर तथा पार्वतीजी नारदजी के साथ भ्रमण को निकले। चलते-चलते वे चैत्र शुक्ल तृतीया के दिन एक गाँव में पहुँच गए। उनके आगमन का समाचार सुनकर गाँव की श्रेष्ठ कुलीन स्त्रियाँ उनके स्वागत के लिए स्वादिष्ट भोजन बनाने लगीं।

भोजन बनाते-बनाते उन्हें काफी विलंब हो गया। किंतु साधारण कुल की स्त्रियाँ श्रेष्ठ कुल की स्त्रियों से पहले ही थालियों में हल्दी तथा अक्षत लेकर पूजन हेतु पहुँच गईं। पार्वतीजी ने उनके पूजा भाव को स्वीकार करके सारा सुहाग रस उन पर छिड़क दिया। वे अटल सुहाग प्राप्ति का वरदान पाकर लौटीं। तत्पश्चात उच्च कुल की स्त्रियाँ अनेक प्रकार के पकवान लेकर गौरीजी और शंकरजी की पूजा करने पहुँचीं। सोने-चाँदी से निर्मित उनकी थालियों में विभिन्न प्रकार के पदार्थ थे।

उन स्त्रियों को देखकर भगवान शंकर ने पार्वतीजी से कहा- 'तुमने सारा सुहाग रस तो साधारण कुल की स्त्रियों को ही दे दिया। अब इन्हें क्या दोगी?'

पार्वतीजी ने उत्तर दिया- 'प्राणनाथ! आप इसकी चिंता मत कीजिए। उन स्त्रियों को मैंने केवल ऊपरी पदार्थों से बना रस दिया है। इसलिए उनका रस धोती से रहेगा। परंतु मैं इन उच्च कुल की स्त्रियों को अपनी उँगली चीरकर अपने रक्त का सुहाग रस दूँगी। यह सुहाग रस जिसके भाग्य में पड़ेगा, वह तन-मन से मुझ जैसी सौभाग्यवती हो जाएगी।'

ND

जब स्त्रियों ने पूजन समाप्त कर दिया, तब पार्वतीजी ने अपनी उँगली चीरकर उन पर छिड़क दी। जिस पर जैसा छींटा पड़ा, उसने वैसा ही सुहाग पा लिया। तत्पश्चात भगवान शिव की आज्ञा से पार्वतीजी ने नदी तट पर स्नान किया और बालू की शिव-मूर्ति बनाकर पूजन करने लगीं। पूजन के बाद बालू के पकवान बनाकर शिवजी को भोग लगाया।

प्रदक्षिणा करके नदी तट की मिट्टी से माथे पर तिलक लगाकर दो कण बालू का भोग लगाया। इतना सब करते-करते पार्वती को काफी समय लग गया। काफी देर बाद जब वे लौटकर आईं तो महादेवजी ने उनसे देर से आने का कारण पूछा।

उत्तर में पार्वतीजी ने झूठ ही कह दिया कि वहाँ मेरे भाई-भावज आदि मायके वाले मिल गए थे। उन्हीं से बातें करने में देर हो गई। परंतु महादेव तो महादेव ही थे। वे कुछ और ही लीला रचना चाहते थे। अतः उन्होंने पूछा- 'पार्वती! तुमने नदी के तट पर पूजन करके किस चीज का भोग लगाया था और स्वयं कौन-सा प्रसाद खाया था?'

IFM

स्वामी! पार्वतीजी ने पुनः झूठ बोल दिया- 'मेरी भावज ने मुझे दूध-भात खिलाया। उसे खाकर मैं सीधी यहाँ चली आ रही हूँ।' यह सुनकर शिवजी भी दूध-भात खाने की लालच में नदी-तट की ओर चल दिए। पार्वती दुविधा में पड़ गईं। तब उन्होंने मौन भाव से भगवान भोले शंकर का ही ध्यान किया और प्रार्थना की - हे भगवन! यदि मैं आपकी अनन्य दासी हूँ तो आप इस समय मेरी लाज रखिए।

यह प्रार्थना करती हुई पार्वतीजी भगवान शिव के पीछे-पीछे चलती रहीं। उन्हें दूर नदी के तट पर माया का महल दिखाई दिया। उस महल के भीतर पहुँचकर वे देखती हैं कि वहाँ शिवजी के साले तथा सलहज आदि सपरिवार उपस्थित हैं। उन्होंने गौरी तथा शंकर का भाव-भीना स्वागत किया। वे दो दिनों तक वहाँ रहे।

तीसरे दिन पार्वतीजी ने शिव से चलने के लिए कहा, पर शिवजी तैयार न हुए। वे अभी और रुकना चाहते थे। तब पार्वतीजी रूठकर अकेली ही चल दीं। ऐसी हालत में भगवान शिवजी को पार्वती के साथ चलना पड़ा। नारदजी भी साथ-साथ चल दिए। चलते-चलते वे बहुत दूर निकल आए। उस समय भगवान सूर्य अपने धाम (पश्चिम) को पधार रहे थे। अचानक भगवान शंकर पार्वतीजी से बोले- 'मैं तुम्हारे मायके में अपनी माला भूल आया हूँ।'

'ठीक है, मैं ले आती हूँ।' - पार्वतीजी ने कहा और जाने को तत्पर हो गईं। परंतु भगवान ने उन्हें जाने की आज्ञा न दी और इस कार्य के लिए ब्रह्मपुत्र नारदजी को भेज दिया। परंतु वहाँ पहुँचने पर नारदजी को कोई महल नजर न आया। वहाँ तो दूर तक जंगल ही जंगल था, जिसमें हिंसक पशु विचर रहे थे। नारदजी वहाँ भटकने लगे और सोचने लगे कि कहीं वे किसी गलत स्थान पर तो नहीं आ गए? मगर सहसा ही बिजली चमकी और नारदजी को शिवजी की माला एक पेड़ पर टँगी हुई दिखाई दी। नारदजी ने माला उतार ली और शिवजी के पास पहुँचकर वहाँ का हाल बताया।

शिवजी ने हँसकर कहा- 'नारद! यह सब पार्वती की ही लीला है।'

इस पर पार्वती बोलीं- 'मैं किस योग्य हूँ।'

तब नारदजी ने सिर झुकाकर कहा- 'माता! आप पतिव्रताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं। आप सौभाग्यवती समाज में आदिशक्ति हैं। यह सब आपके पतिव्रत का ही प्रभाव है। संसार की स्त्रियाँ आपके नाम-स्मरण मात्र से ही अटल सौभाग्य प्राप्त कर सकती हैं और समस्त सिद्धियों को बना तथा मिटा सकती हैं। तब आपके लिए यह कर्म कौन-सी बड़ी बात है?' महामाये! गोपनीय पूजन अधिक शक्तिशाली तथा सार्थक होता है।

आपकी भावना तथा चमत्कारपूर्ण शक्ति को देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। मैं आशीर्वाद रूप में कहता हूँ कि जो स्त्रियाँ इसी तरह गुप्त रूप से पति का पूजन करके मंगलकामना करेंगी, उन्हें महादेवजी की कृपा से दीर्घायु वाले पति का संसर्ग मिलेगा।


शीतला माता

माघ मास के शुक्ल पक्ष क षष्टी तिथि अर्थात छठी तिथि में शीतला षष्ठी व्रत किया जाता है. इस व्रत को करने से उपवासक कि आयु तथा संतान की कामना पूरी होती है. कहीं-कहीं इस व्रत के दिन कुते की सेवा भी की जाती है. तथा कुत्ते को टीका लगाकर उसे पकवान खिलाये जाते है. यह व्रत विशेष रुप से स्त्रियों के द्वारा किया जाता है. इस व्रत के दिन उपवास करने वाली स्त्रियों को गर्म जल से स्नान करने से बचना चाहिए. साथ ही इस दिन व्रत करने वाली स्त्रियों को गर्म भोजन करने से भी बचना चाहिए. इस व्रत को उतरी भारत में विशेष रुप से किया जाता है. इसके साथ ही यह व्रत बंगाल राज्य में अधिक प्रचलित है. कुछ स्थानों में इस व्रत को बासियौरा के नाम से जाना जाता है.

शीतला षष्टी व्रत विधि | Sheetla Shashti Vrat Method

व्रत के दिन उपावासक प्रात: काल में शीघ्र उठे. सुबह उठकर, स्नान और नित्यक्रियाओं से निवृत होकर उसे माता शीतला देवी की पूजा करनी चाहिए. माता की पूजा इस दिन षोडशोपचार से करना कल्याणकारी रहता है. इस दिन माता को बासी भोजन का भोग लगाकर, स्वयं भी बासी भोजन ग्रहण किया जाता है. व्रत से एक दिन पूर्व ही व्रत का भोग तैयार कर लिया जाता है. परिवार के जिन सदस्यों का व्रत न हों, उनके लिये भी एक दिन पहले ही खाना बनाना लिया जाता है. व्रत के दिन चूल्हा न जलाने की प्रथा है. पर घर में कोई रोगी या वृद्ध हों, तो उनके लिये व्रत के दिन भोजन तैयार किया जा सकता है.

शीतला षष्टी व्रत कथा | Shitala Shashti Vrat Katha

भारत देश में सभी व्रत-त्यौहार किसी न किसी कथा या किवंदती से जुडे होते है. शीतला माता षष्टी व्रत कथा के अनुसार एक समय की बात है, कि एक ब्राहमाण के सात बेटे थे. उन सभी का विवाह हो चुका था. परन्तु उसके किसी बेटे की कोई संतान नहीं थी. एक बार एक वृद्धा ने ब्राहमाणी को पुत्र-वधुओं से शीतला माता का षष्टी व्रत करने की सलाह दी. उस ब्राहमाणी ने

श्रद्वापूर्वक व्रत कराया. व्रत के बाद एक वर्ष में ही उसकी पुत्रवधुओं को संतान कि प्राप्ति हुई.

एक बार ब्राह्माणी ने व्रत में कही गई बातों का ध्यान ने रखते हुए. व्रत के दिन गर्म जल से स्नान कर लिया. व्रत के दिन भी ताजा भोजन खाया. और व्रत के समय बताये गये विधि-नियमों का पालन नहीं किया. यही गलती ब्राह्मणी की बहुओं ने भी की. उसी रात ब्राह्माणी ने भयानक स्वप्न देखा. वह स्वप्न में जाग गई. ब्राह्माणी ने देखा की उसके परिवार के सभी सदस्य मर चुके है. अपने परिवार के सदस्यों को देख कर वह शोक करने लगी, उसे पडोसियों ने बताया की भगवती शीतला माता के प्रकोप से हुआ है. यह सुन ब्राह्माणी का विलाप बढ गया. वह रोती हुई जंगल की ओर चलने लगी. जंगल में उसे एक बुढिया मिली. वह बुढिया अग्नि की ज्वाला में तडप रही थी. बुढिया ने बताया कि अग्नि की जलन को दूर करने के लिये उसे मिट्टी के बर्तन में दही लेकर लेप करने के लिये कहा. उससे उसकी ज्वाला शांत हो जायेगी. और शरीर स्वस्थ हो जायेगा. यह सुनकर ब्राह्माणी को अपने किए पर बडा पश्चाताप हुआ. उसने माता से क्षमा मांगी. और अपने परिवार को जीवत करने की विनती की. माता ने उसे दर्शन देकर मृतकों के दिर पर दही का लेप करने का आदेश दिया. ब्राह्माणी नेण ठिक वैसा ही किया. और ऎसा करने के बाद उसके परिवार के सारे सदस्य जीवित हो उठे. उस दिन से इस व्रत को संतान की कामना के लिये किया जाता है.

|| शीतला माता आरती

जय शीतला माता, मैया जय शीतला माता,

आदि ज्योति महारानी सब फल की दाता | जय

रतन सिंहासन शोभित, श्वेत छत्र भ्राता,

ऋद्धिसिद्धि चंवर डोलावें, जगमग छवि छाता | जय

विष्णु सेवत ठाढ़े, सेवें शिव धाता,

वेद पुराण बरणत पार नहीं पाता | जय

इन्द्र मृदंग बजावत चन्द्र वीणा हाथा,

सूरज ताल बजाते नारद मुनि गाता | जय

घंटा शंख शहनाई बाजै मन भाता,

करै भक्त जन आरति लखि लखि हरहाता | जय

ब्रह्म रूप वरदानी तुही तीन काल ज्ञाता,

भक्तन को सुख देनौ मातु पिता भ्राता | जय

जो भी ध्यान लगावैं प्रेम भक्ति लाता,

सकल मनोरथ पावे भवनिधि तर जाता | जय

रोगन से जो पीड़ित कोई शरण तेरी आता,

कोढ़ी पावे निर्मल काया अन्ध नेत्र पाता | जय

बांझ पुत्र को पावे दारिद कट जाता,

ताको भजै जो नाहीं सिर धुनि पछिताता | जय

शीतल करती जननी तुही है जग त्राता,

उत्पत्ति व्याधि विनाशत तू सब की घाता | जय

दास विचित्र कर जोड़े सुन मेरी माता,

भक्ति आपनी दीजै और न कुछ भाता | जय

पथवारी माता कथा

यह कथा शीतला अष्टमी तथा कार्तिक पूजा के समय पथवारी पूजते समय कही जाती है।

पौराणिक कथा के अनुसार एक गुजरी माई थी।उसके दो बहुएं थी।दोनो बहुओं को सास ने दूध बेचने के लिए पास के गावँ में भेज़ा।बड़ी बहू काफी होशियार थी और पैसों का हिसाब भी रख़ना ज़ानती थी।इसलिए रोज़ दूध बेचकर सारे पैसे लाकर सास को दे देती थी।इसके विपरीत छोटी बहू बहुत भोली थी।उसे हिसाब लगाना नहीं आता था।एक दिन जब वह दूध बेचने जा रही थी तब उसने देखा कुछ महिलाएं पथवारी पूजन कर रही हैं।तथा पीपल के पेड़ को जल से सींच रही हैं।बहु ने उन महिलाओं से पूछा पथवारी पूजन कर सींचने से क्या फल मिलता है।इस पर उन महिलाओं ने बताया पथवारी माता सींचने से अन्न धन तथा लक्छमी मिलती है।महिलाओं की बातें सुनकर छोटी बहू ने दूध वहीं बड़ पीपल में चढा पथवारी माता को सींच दिया।वह हर दिन इसी तरह दूध ले जाती तथा पथवारी सीचं आती।कुछ दिन बाद जब सास ने बहु से दूध के पैसे मागें तो उसने दूसरे दिन लाने को कह दिया।लकिन वह अगले दिन भी पैसे नहीं लाई।इस तरह पूरा एक महिना बीत गया।तब सास ने कहा आज पैसे लेकर ही आना।अगले दिन जब वह पैसे लेने के लिए घर से चली तो उदास होकर पथवारी माता के चबूतरे के समीप बैठ गई।तभी पथवारी माता बुढिया का रूप धारण कर के आई और बोली बेटी तुम उदास क्युं बैठी हो।बहु बोली मेरी सास मुझे रोज दूध बेचने भेजती थी मगर मुझे दूध बेचना आता ही नहीं इसलिए मैं तो पथवारी माता को दूध से सींच देती थी।आज सास ने पैसे लेकर आने को कहा है।अब आप ही बताएं मैं पैसे कहां से लेकर जांऊ।बुढिया माई बोली बेटी यह पत्थर पड़े है इन्हें टोकरी में भरकर ले जा इन पत्थरों को कोठे में रख देना।बहु ने बुढिया के कहे अनुसार पत्थर टोकरे में भर लिए और घर लौट कर कोठे में रख दिया।हमेशा की तरह जब सास ने पैसे मागें तो बहू बोली माँजी कोठे में रखे हैं।सास ने जैसे ही कोठे का दरवाज़ा खोला तो देखा उसमें अपार हीरे मोती धन रखा है।सास ने छोटी बहू से पूछा इतना धन कहाँ से लाई है।इस पर बहू ने

कहा मैं हर रोज़ पथवारी माता को सींच देती थी।उन्हीं की कृपा से ये धन मिला है।यह सारी बात जब बड़ी बहू को पता चली तो उसने सोचा छोटी तो कच्चा दूध सींचती थी मैं तो गरम दूध से सींचूगी।यह सोच वह गरम गरम दूध रोज सींचने लगी।छोटी बहू की तरह पूरा महीना बीतने पर वह पथवारी माता के पास जाकर बैठ गई।पथवारी माता बुढिया के रूप में आई और बोली बेटी क्या चाहिए।बड़ी बहू बोली मैं हर रोज़ पथवारी माता के गरम गरम दूध सींचती रही हूँ।अब सास पैसे माँग रही है।कहाँ से लाऊँ पैसे।इस पर बुढिया माई बोली यह पत्थर रखे हैं तू भी ले जा।बड़ी बहू ने ढेर सारे पत्थर टोकरी में भरे और बड़ी मुश्किल से घर तक पहुँची कि ठोकर खा कर गिर पड़ी।सारे पत्थर घर के आगे गिर पड़े।आने जाने वाले ठोकरें खाते और कोसते।वह पुनः पथवारी माता के पास जाकर बोली हे माता तुमने मेरे साथ ऐसा क्यों किया।तब पथवारी माता बोली छोटी बहू ने बड़ी लगन एंव भाव से और बिना लालच के दूध सींचा था और तूने लालच से मेरे उपर गरम गरम दूध चढ़ाया।जिससे मेरे शरीर पर फफोले पड़ गए हैं।बड़ी बहू को अपनी भूल का अहसास हुआ और उसने माफी मांगी।पथवारी माता ने उसे माँफ कर दिया।

॥बोलो पथवारी माता की जय॥


drikPanchang.com

नाग पूजन कैसे करें-

- अलसुबह उठकर घर की सफाई करके नित्यकर्म से निवृत्त हो जाएं।
- तपश्चात स्नान कर धुले हुए साफ एवं स्वच्छ कपड़े धारण करें।
- नाग पूजन के लिए सेंवई-चावल आदि ताजा भोजन बनाएं।
- कुछ भागों में नागपंचमी से एक दिन पहले ही भोजन बना कर रख लिया जाता है और नागपंचमी के दिन बासी (ठंडा) खाना खाया जाता है।
- इसके बाद दीवार पर गेरू पोतकर पूजन का स्थान बनाया जाता है। फिर कच्चे दूध में कोयला घिसकर उससे गेरू पुती दीवार पर घर जैसा बनाते हैं और उसमें अनेक नागदेवों की आकृति बनाते हैं।
- कुछ जगहों पर सोने, चांदी, काठ व मिट्टी की कलम तथा हल्दी व चंदन की स्याही से अथवा गोबर से घर के मुख्य दरवाजे के दोनों बगलों में पांच फन वाले नागदेव अंकित कर पूजते हैं।
- सर्वप्रथम नागों की बांबी में एक कटोरी दूध चढ़ा आते हैं।
- फिर दीवार पर बनाए गए नागदेवता की दही, दूर्वा, कुशा, गंध, अक्षत, पुष्प, जल, कच्चा दूध, रोली और चावल आदि से पूजन कर सेंवई व मिष्ठान से उनका भोग लगाते हैं।
- पश्चात आरती करके कथा का श्रवण किया जाना चाहिए।

नागपंचमी की प्रचलित कथाएं

जनमानस में नागपंचमी पर्व की विविध जनश्रुतियां और कथाएं प्रचलित है। नागपंचमी के संबंध में ऐसी ही दो बहुप्रचलित कथाएं हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं-

किसी राज्य में एक किसान परिवार रहता था। किसान के दो पुत्र व एक पुत्री थी। एक दिन हल जोतते समय हल से नाग के तीन बच्चे कुचल कर मर गए। नागिन पहले तो विलाप करती रही फिर उसने अपनी संतान के हत्यारे से बदला लेने का संकल्प किया। रात्रि को अंधकार में नागिन ने किसान, उसकी पत्नी व दोनों लड़कों को डस लिया।

अगले दिन प्रातः किसान की पुत्री को डसने के उद्देश्य से नागिन फिर चली तो किसान कन्या ने उसके सामने दूध का भरा कटोरा रख दिया। हाथ जोड़ क्षमा मांगने लगी। नागिन ने प्रसन्न होकर उसके माता-पिता व दोनों भाइयों को पुनः जीवित कर दिया। उस दिन श्रावण शुक्ल पंचमी थी। तब से आज तक नागों के कोप से बचने के लिए इस दिन नागों की पूजा की जाती है।

नागपंचमी कथा- (2)

एक राजा के सात पुत्र थे, उन सबके विवाह हो चुके थे। उनमें से छह पुत्रों के संतान भी हो चुकी थी। सबसे छोटे पुत्र के अब तक के कोई संतान नहीं हुई, उसकी बहू को जिठानियां बांझ कहकर बहुत ताने देती थीं।

एक तो संतान न होने का दुःख और उस पर सास, ननद, जिठानी आदि के ताने उसको और भी दुखी करने लगे। इससे व्याकुल होकर वह बेचारी रोने लगती। उसका पति समझाता कि 'संतान होना या न होना तो भाग्य के अधीन है, फिर तू क्यों दुःखी होती है?' वह कहती- सुनते हो, सब लोग बांझ- बांझ कहकर मेरी नाक में दम किए हैं।

पति बोला- दुनिया बकती है, बकने दे मैं तो कुछ नहीं कहता। तू मेरी ओर ध्यान दे और दुःख को छोड़कर प्रसन्न रह। पति की बात सुनकर उसे कुछ सांत्वना मिलती, परंतु फिर जब कोई ताने देता तो रोने लगती थी।

इस प्रकार एक दिन नाग पंचमी आ गई। चौथ की रात को उसे स्वप्न में पांच नाग दिखाई दिए, उनमें एक ने कहा- 'अरी पुत्री। कल नागपंचमी है, तू अगर हमारा पूजन करे तो तुझे पुत्र रत्न की प्राप्ति हो सकती है। यह सुनकर वह उठ बैठी और पति को जगाकर स्वप्न का हाल सुनाया। पति ने कहा- यह कौन सी बड़ी बात है?

पांच नाग अगर दिखाई दिए हैं तो पांचों की आकृति बनाकर उसका पूजन कर देना। नाग लोग ठंडा भोजन ग्रहण करते हैं, इसलिए उन्हें कच्चे दूध से प्रसन्न करना। दूसरे दिन उसने ठीक वैसा ही किया। नागों के पूजन से उसे नौ मास के बाद सुंदर पुत्र की प्राप्ति हुई।

नागपंचमी की पौराणिक कथा

प्राचीन काल में एक सेठजी के सात पुत्र थे। सातों के विवाह हो चुके थे। सबसे छोटे पुत्र की पत्नी श्रेष्ठ चरित्र की विदूषी और सुशील थी, परंतु उसके भाई नहीं था।

एक दिन बड़ी बहू ने घर लीपने को पीली मिट्टी लाने के लिए सभी बहुओं को साथ चलने को कहा तो

सभी धलिया और खुरपी लेकर मिट्टी खोदने लगी। तभी वहां एक सर्प निकला, जिसे बड़ी बहू खुरपी से मारने लगी। यह देखकर छोटी बहू ने उसे रोकते हुए कहा- 'मत मारो इसे? यह बेचारा निरपराध है।'

यह सुनकर बड़ी बहू ने उसे नहीं मारा तब सर्प एक ओर जा बैठा। तब छोटी बहू ने उससे कहा-'हम अभी लौट कर आती हैं तुम यहां से जाना मत। यह कहकर वह सबके साथ मिट्टी लेकर घर चली गई और वहां कामकाज में फँसकर सर्प से जो वादा किया था उसे भूल गई।

उसे दूसरे दिन वह बात याद आई तो सब को साथ लेकर वहां पहुंची और सर्प को उस स्थान पर बैठा देखकर बोली- सर्प भैया नमस्कार! सर्प ने कहा- 'तू भैया कह चुकी है, इसलिए तुझे छोड़ देता हूं, नहीं तो झूठी बात कहने के कारण तुझे अभी डस लेता।

वह बोली- भैया मुझसे भूल हो गई, उसकी क्षमा माँगती हूँ, तब सर्प बोला- अच्छा, तू आज से मेरी बहिन हुई और मैं तेरा भाई हुआ। तुझे जो माँगना हो, माँग ले। वह बोली- भैया! मेरा कोई नहीं है, अच्छा हुआ जो तू मेरा भाई बन गया।

कुछ दिन व्यतीत होने पर वह सर्प मनुष्य का रूप रखकर उसके घर आया और बोला कि 'मेरी बहिन को भेज दो।' सबने कहा कि 'इसके तो कोई भाई नहीं था, तो वह बोला- मैं दूर के रिश्ते में इसका भाई हूँ, बचपन में ही बाहर चला गया था।
उसके विश्वास दिलाने पर घर के लोगों ने छोटी को उसके साथ भेज दिया। उसने मार्ग में बताया कि 'मैं वहीं सर्प हूँ, इसलिए तू डरना नहीं और जहां चलने में कठिनाई हो वहां मेरी पूछ पकड़ लेना। उसने कहे अनुसार ही किया और इस प्रकार वह उसके घर पहुंच गई। वहां के धन-ऐश्वर्य को देखकर वह चकित हो गई।
एक दिन सर्प की माता ने उससे कहा- 'मैं एक काम से बाहर जा रही हूँ, तू अपने भाई को ठंडा दूध पिला देना। उसे यह बात ध्यान न रही और उसने गर्म दूध पिला दिया, जिसमें उसका मुख बेतरह जल गया। यह देखकर सर्प की माता बहुत क्रोधित हुई।

परंतु सर्प के समझाने पर चुप हो गई। तब सर्प ने कहा कि बहिन को अब उसके घर भेज देना चाहिए। तब सर्प और उसके पिता ने उसे बहुत सा सोना, चाँदी, जवाहरात, वस्त्र-भूषण आदि देकर उसके घर पहुंचा दिया।

इतना ढेर सारा धन देखकर बड़ी बहू ने ईर्ष्या से कहा- भाई तो बड़ा धनवान है, तुझे तो उससे और भी

धन लाना चाहिए। सर्प ने यह वचन सुना तो सब वस्तुएं सोने की लाकर दे दीं। यह देखकर बड़ी बहू ने कहा- 'इन्हें झाड़ने की झाड़ू भी सोने की होनी चाहिए'। तब सर्प ने झाड़ू भी सोने की लाकर रख दी।

सर्प ने छोटी बहू को हीरा-मणियों का एक अद्भुत हार दिया था। उसकी प्रशंसा उस देश की रानी ने भी सुनी और वह राजा से बोली कि- सेठ की छोटी बहू का हार यहां आना चाहिए।'

राजा ने मंत्री को हुक्म दिया कि उससे वह हार लेकर शीघ्र उपस्थित हो मंत्री ने सेठजी से जाकर कहा कि 'महारानीजी छोटी बहू का हार पहनेंगी, वह उससे लेकर मुझे दे दो'। सेठजी ने डर के कारण छोटी बहू से हार मँगाकर दे दिया।

छोटी बहू को यह बात बहुत बुरी लगी, उसने अपने सर्प भाई को याद किया और आने पर प्रार्थना की- भैया ! रानी ने हार छीन लिया है, तुम कुछ ऐसा करो कि जब वह हार उसके गले में रहे, तब तक के लिए सर्प बन जाए और जब वह मुझे लौटा दे तब हीरों और मणियों का हो जाए। सर्प ने ठीक वैसा ही किया। जैसे ही रानी ने हार पहना, वैसे ही वह सर्प बन गया। यह देखकर रानी चीख पड़ी और रोने लगी। यह देख कर राजा ने सेठ के पास खबर भेजी कि छोटी बहू को तुरंत भेजो। सेठजी डर गए कि राजा न जाने क्या करेगा? वे स्वयं छोटी बहू को साथ लेकर उपस्थित हुए।

राजा ने छोटी बहू से पूछा- तुने क्या जादू किया है, मैं तुझे दंड दूँगा। छोटी बहू बोली- राजन ! धृष्टता क्षमा कीजिए, यह हार ही ऐसा है कि मेरे गले में हीरों और मणियों का रहता है और दूसरे के गले में सर्प बन जाता है। यह सुनकर राजा ने वह सर्प बना हार उसे देकर कहा- अभी पहनकर दिखाओ। छोटी बहू ने जैसे ही उसे पहना वैसे ही हीरों-मणियों का हो गया।

यह देखकर राजा को उसकी बात का विश्वास हो गया और उसने प्रसन्न होकर उसे बहुत सी मुद्राएं भी पुरस्कार में दीं। छोटी बहू अपने हार और धन सहित घर लौट आई। उसके धन को देखकर बड़ी बहू ने ईर्ष्या के कारण उसके पति को सिखाया कि छोटी बहू के पास कहीं से धन आया है। यह सुनकर उसके पति ने अपनी पत्नी को बुलाकर कहा- ठीक-ठीक बता कि यह धन तुझे कौन देता है? तब वह सर्प को याद करने लगी।

तब उसी समय सर्प ने प्रकट होकर कहा- यदि मेरी धर्म बहिन के आचरण पर संदेह प्रकट करेगा तो मैं उसे खा लूँगा। यह सुनकर छोटी बहू का पति बहुत प्रसन्न हुआ और उसने सर्प देवता का बड़ा सत्कार किया। उसी दिन से नागपंचमी का त्योहार मनाया जाता है और स्त्रियां सर्प को भाई मानकर उसकी पूजा करती हैं।

नाग वंदना

हमारे धर्मग्रन्थों मे श्रावण मास के शुक्ल पक्छ की पचंमी को नाग पूजा का विधान है।

व्रत के साथ एक बार भोजन करने का नियम है।पूजा में दिवार पर नागों का चित्र बनाया जाता है।स्वर्ण रजत काष्ठ या मिट्टी से नाग बना कर पुष्प,गन्ध,धूप-दीप तथा विविध नैवेधों से नागों का पूजन किया जाता है।नाग पूजन में निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण कर नागों को प्रणाम किया जाता है।-

सर्वे नागाः प्रीयतां मे ये केचित पृथ्वीतले॥

ये च हेलिमरीचिस्था येऽन्तरे दिवि संस्थिताः।

ये नदिषु महानागा ये सरस्वतिगामिनः।

ये च वापीतडागेषु तेषु सर्वेषु वै नमः॥

(भविष्य पुराण,ब्राह्मपर्व ३२,३३,३४)

भाव यह है कि जो नाग पृथ्वी,आकाश,स्वर्ग,सूर्य की किरणों,सरोवरों,वापी,कूप तथा तालाब आदि में निवास करतें है,वे हम पर प्रसन्न हों,हम उनको बार बार नमस्कार करते हैं।

भीष्म पंचक व्रत कथा विधि



द्वापर में जब श्री कृष्ण का जन्म हुआ तब उन्होंने मनुष्य को पाप कर्म के प्रभाव से मुक्ति दिलाने के लिए और उत्तम गति प्राप्त करने के लिए कई व्रत और विधि विधान को निर्माण किया. वे व्रत और विधियां कलियुग के इस समय में मुनुष्य के लिए अति कल्याणकारी हैं. जो मनुष्य पाप से मुक्ति की कामना रखते हैं और उत्तम गति प्राप्त करना चाहते हैं वे कृष्ण द्वारा स्थापित व्रत भीष्म पंचक का लाभ उठा सकते हैं.

भीष्म पंचक व्रत कथा (Bhishma Panchak Vrat Katha)

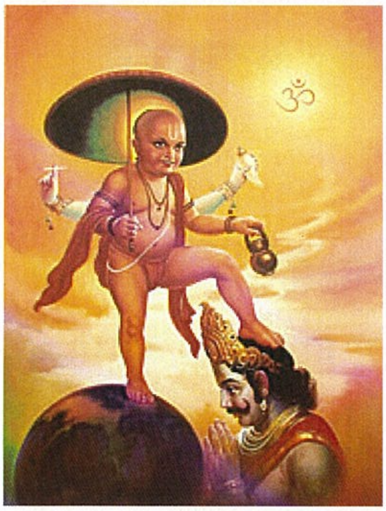
महाभारत युद्ध के बाद जब पांण्डवों की जीत हो गयी तब श्री कृष्ण भगवान पांण्डवों को भीष्म पितामह के पास ले गये और उनसे अनुरोध किया कि आप पांण्डवों को अमृत स्वरूप ज्ञान प्रदान करें. भीष्म भी उन दिनों शर सैय्या पर लेटे हुए सूर्य के उत्तरायण होने की प्रतिक्षा कर रहे थे. कृष्ण के अनुरोध पर परम वीर और परम ज्ञानी भीष्म ने कृष्ण सहित पाण्डवों को राज धर्म, वर्ण धर्म एवं मोक्ष

धर्म का ज्ञान दिया. भीष्म द्वारा ज्ञान देने का क्रम एकादशी से लेकर पूर्णिमा तिथि यानी पांच दिनों तक चलता रहा. भीष्म ने जब पूरा ज्ञान दे दिया तब श्री कृष्ण ने कहा कि आपने जो पांच दिनों में ज्ञान दिया है यह पांच दिन आज से अति मंगलकारी हो गया है. इन पांच दिनों को भविष्य में भीष्म पंचक व्रत के नाम से जाना जाएगा. यह व्रत अति मंगलकारी और पुण्यदायी होगा, जो श्रद्धापूर्वक इस व्रत को रखेंगे उन्हें मृत्य पश्चात उत्तम गति प्राप्त होगी. यह व्रत पूर्व संचित पाप कर्मों से मुक्ति प्रदान करने वाली और कल्याणकारी होगी. इस प्रकार भीष्म पंचम व्रत की शुरूआत भगवान श्री कृष्ण ने की.

भीष्म पंचक व्रत पूजा विधि (Bhishma Panchak Vrat Pooja Vidhi)

भीष्म पंचम व्रत में चार द्वारा वाला एक मण्डप बनाया जाता है. मंडप को गाय को गोबर से लीप कर मध्य में एक वेदी का निर्माण किया जाता है. वेदी पर तिल रखकर कलश स्थापित किया जाता है. इसके बाद भगवान वासुदेव की पूजा की जाती है. इस व्रत में एकादशी से लेकर पूर्णिमा तिथि तक घी के दीपक जलाए जाते हैं. भीष्म पंचक व्रत करने वाले को पांच दिनों तक संयम एवं सात्विकता का पालन करते हुए यज्ञादि कर्म करना चाहिए. इस व्रत में गंगा पुत्र भीष्म की तृप्ति के लिए श्राद्ध और तर्पण का भी विधान है.

वामन जयन्ती व्रतोपवास



वामन अवतार (Vaman Avtar)

पुराणों में लिखा है कि देव माता अदिति ने विष्णु जी की तपस्या की। तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान ने उन्हें वरदान दिया कि वे अदिति के पुत्र के रूप में जन्म लेकर देवताओं को राजा बलि के भय से मुक्ति प्रदान करेंगे। इसी वरदान को पूरा करने के लिए भगवान अदिति के घर भाद्रपद शुक्ल पक्ष की द्वादशी के दिन अदिति के घर वामन रूप में जन्म लिये।

जन्म के कुछ ही समय में भगवान बालक से युवा हो गये। इस समय राजा बलि यज्ञ कर रहे थे। भगवान वामन यज्ञ स्थल पर पहुंचकर राजा बलि से बोले कि उन्हे दान स्वरूप तीन पग भूमि चाहिए। राजा बलि ने भगवान की मांग को स्वीकार करते हुए उनसे कहा कि आप जहां चाहें वहां तीन पग भूमि ले लें। बलि के इतना कहने पर भगवान ने विराट

रूप धारण किया और दो पग में ही धरती और आकाश को नाप लिया। इसके बाद तीसरे पग में राजा बलि को पाताल भेजकर भगवान ने देवताओं को भय से मुक्ति दिलायी।

बलि के पाताल जाने के बाद ऋषि मुनियों एवं देवताओं ने भगवान की पूजा एवं स्तुति की। परम्परागत रूप से उस दिन से ही वामन की पूजा चली आ रही है। इस दिन श्रद्धालु भक्त स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करते हैं इसके बाद वामन भगवान की पूजा करते हैं। धार्मिक मान्यताओ के अनुसार अगर इस दिन श्रावण नक्षत्र हो तो इस व्रत की महत्ता और भी बढ़ जाती है। भक्तों को इस दिन उपवास करके वामन भगवान की स्वर्ण प्रतिमा बनवाकर पंचोपचार सहित उनकी पूजा करनी चाहिए.

जो भक्ति श्रद्धा एवं भक्ति पूर्वक वामन भगवान की पूजा करते हैं वामन भगवान उनको सभी कष्टों से उसी प्रकार मुक्ति दिलाते हैं जैसे उन्होंने देवताओं को राजा बलि के कष्ट से मुक्त किया था।

शत अपराध शमन



हम मनुष्य कर्मों से बंधे हुए हैं। अपने कर्म के अनुसार हमें उसका फल भी भोगना होता है। अच्छे कर्म का अच्छा फल मिलता है और अपराध के लिए दंड भी मिलता है। हमसे जाने अनजाने अपराध भी हो जाता। ईश्वर अपनी संतान का अपराध क्षमा करने देता है जब उसकी संतान अपराध मुक्ति के लिए प्रार्थना करता है एवं अपराध शमन के लिए व्रत करता है।

अपराध शमन व्रत (Shat Apradh Shaman Vrata) महात्मय

शत अपराध शमन व्रत मार्गशीर्ष मास में द्वाद्वशी के दिन शुरू होता है। इस तिथि से प्रत्येक द्वादशी के दिन इस व्रत को करने का विधान है। इस व्रत के प्रभाव से व्यक्ति जाने अनजाने शत अपराध करता है उस अपराध का शमन होता है और व्यक्ति अपराध मुक्त हो कर मृत्यु के पश्चात ईश्वर के समझ पहुंचता है जिससे सुख और उत्तम गति को प्राप्त होता है। ब्रह्मा जी ने इस व्रत के महत्व के विषय में कहा है कि यह व्रत अनंत व इच्छित फल देने वाला है। यह व्रत करने वाला स्वस्थ एवं विद्वान होता है और वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का भागी होता है।

अपराध मुक्ति व्रत कथा – Shat Apradh Shaman Vrata Katha

एक समय की बात है राजा इक्ष्वाकु ने परम श्रद्धेय महर्षि वशिष्ठ जी से प्रश्न किया "हे गुरूदेव! हम लाख चाहने के बावजूद जाने अनजाने अपने जीवन में शताधिक पापकर्म तो अपने सम्पूर्ण जीवन में कर ही लेते हैं। इन अपराधों के कारण मृत्योपरांत हमें और फिर हमारे वंशजों के लिए दु:ख का कारण होता है। हे महाप्रभो! क्या कोई ऐसा व्रत है जिसको करने से सभी प्रकार के पाप मिट जाएं और हमें महाफल की प्राप्ति हो। राज की बातों को सुनकर महर्षि वशिष्ठ ने कहा, हे राजन्! एक व्रत ऐसा है जिसको विधि पूर्वक करने से शताधिक पापों का शमन होता है।

महर्षि ने राजा को शत अपराध बताते हुए कहा कि हे राजन्! शास्त्रों में जो शत अपराध बताये गये हैं उनके अनुसार चारों आश्रमों में अनासक्ति, नास्तिकता, हवन कर्म का परित्याग, अशच, निर्दयता, लोभवृत्ति, ब्रह्मचर्य का पालन न करना, व्रत का पालन न करना, अन्न दान और आशीष न देना, अमंगल कार्य करना, हिंसा, चोरी, असत्यवादिता, इन्द्रियपरायणता, क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या, घमंड, प्रमाद, किसी को दु:ख पहुंचने वाली बात कहना, शठता,

इन्द्रियपरायणता, क्रोध, द्वेष, क्षमाहीनता, कष्ट देना, प्रपंच, वेदों की निंदा करना, नास्तिकता को बढ़ावा देना, माता को कष्ट देना, पुत्र एवं अपने आश्रितों के प्रति कर्तव्य का पालन न करना, अपूज्य की पूजा करना, जप में अविश्वास, पंच यज्ञ का पालन न करना, संध्या-हवन-तर्पण नहीं करना, ऋतुहीन स्त्री से संसर्ग करना, पर्व आदि में स्त्री संग सहवास करना, परायी स्त्री के प्रति आसक्त होना, वेश्यागमन करना, पिशुनता, अंत्यजसंग, अपात्र को दान देना, माता-पिता की सेवा न करना, पुराणों का अनादर करना, मांस मदिरा का सेवन करना, अकारण किसी से लड़ना, बिना विचारे काम करना, सत्री से द्रोह रखना, कई पत्नी रखना, मन पर काबू न रखना, शास्त्र का पालन न करना, लिया गया धन वापस न करना, गुरू द्वारा दिये गये ज्ञान को भूलना, पत्नी अथवा पुत्र और पुत्री को बेचना, बिलों में पानी डालना, जल क्षेत्र को दूषित करना, वृक्ष काटना, भीख मांगना, स्ववृत्ति का त्याग करना, विद्या बेचना, कुसंगति, गो-वध, स्त्री-हत्या, मित्र-हत्या, भ्रूणहत्या, दूसरे के अन्न मांग कर गुजर करना, विधि का पालन न करना, कर्म से रहित होना, विद्वान का याचक होना, वाचालता, प्रतिग्रह लेना, संस्कार हीनता, स्वर्ण चोरी करना, ब्रह्मण का अपमान और हत्या करना, गुरू पत्नी से संसर्ग करना, पापियों से सम्बन्ध रखना, कमजोर और मजबूरों की मदद न करना ये सभी शत अपराध के कहे गये हैं।

महर्षि वशिष्ठ ने कहा हे महाबाहो ईक्ष्वाकु इन अपराधो से मुक्ति के लिए भगवान सत्यदेव की पूजा करनी चाहिए। भगवान सत्यदेव अपनी प्रिया लक्ष्मी के साथ सत्यरूप व्रज पर शोभायमान हैं। इनके पूर्व में वामदेव, दक्षिण में नृसिंह, पश्चिम में कपिल, उदर में वराह एवं उरू स्थान में अच्युत भगवान स्थित हैं जो अपने भक्तों का सदैव कल्याण करते हैं। शंख, चक्र, गदा व पद्म से युक्त भगवान सत्यदेव जिनकी जया, विजया, जयंती, पापनाशिनी, उन्मीलनी, वंजुली, त्रिस्पृशा एवं ववर्धना आठ शक्तियां हैं, जिनके अग्र भाग से गंगा प्रकट हुई है। भक्तवत्सल भगवान सत्यदेव की पूजा मार्गशीर्ष से शुरू करनी चाहिए और प्रत्येक पक्ष की द्वादशी के दिन विधि पूर्वक पूजा करके व्रत करना चाहिए।

अपराध शमन व्रत विधान Shat Apradh Shaman Vrata Puja Vidhi

दोनों पक्ष की द्वादशी तिथि को नित्य क्रियाओं के पश्चात स्नान करके भग्वान सत्यदेव की पूजा एवं व्रत का संकल्प करना चाहिए। संकल्प के बाद भगवान सत्यदेव और देवी लक्ष्मी की स्वर्ण प्रतिमा दूध से भरे कलश पर स्थापित करके सबसे पहले इनकी अष्ट शक्तियों की पूजा करनी चाहिए। इसके बाद लक्ष्मी सहित भगवान सत्यदेव की षोडशोपचार सहित पूजा करनी चाहिए। पूजा के बाद ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा सहित विदा करना चाहिए। वर्ष पर्यन्त दोनों पक्षों में इस व्रत का पालन करने के बाद व्रत का उद्यापन करना चाहिए। उद्यापन के दिन ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा एवं स्वर्ण प्रतिमा ब्राह्मण को देना चाहिए और उनसे आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए।

(आसमाई व्रत कथा)



आसमाई व्रत का महात्मय (Asamai Vrat mahatamya)

आसमाई के विषय में मान्यता है कि इनकी प्रसन्नता से जीवन की हर आशा पूरी होती है और अगर ये अप्रसन्न हो जाएं तो जीवन की सभी खुशियां व सुख नष्ट हो जाते हैं। इनकी प्रसन्नता के लिए महिलाएं विशेषकर पुत्रवती महिलाएं इनका व्रत रखती हैं. वैशाख, आषाढ, तथा माघ के महीने में किसी रविवार के दिन आसमाई की पूजा और व्रत रखा जाता है (Vaisakh, Asadh or Magha).

आसमाई की कथा के अनुसार (Aasmai Katha):

एक राजकुमार था जो माता पिता के लाड़ प्यार के कारण बहुत अधिक शरारती हो गया था। वह नगर की कन्याओं की मटकी को गुलेल से फोड़ देता था. नगरवासियों की शिकायत सुनकर एक दिन राजा को बहुत क्रोध आया और उन्होंने राजकुमार को देश निकाला दे दिया.

राजकुमार अपने घोड़े पर सवार होकर चला जा रहा था. जब एक वन में पहुंचा तो उसने देखा कि तीन वृद्ध महिलाएं अपने अपने हाथों में गगड़ी लिये चली आ रही है. जब राजकुमार उन वृद्ध महिलाओं के समीप पहुंचा तब उसके हाथ से चाबुक छूट गयी और नीचे गिर पड़ी. कुमार उस चाबुक को उठाने के लिए झुका तो महिलओं को लगा कि राजकुमार उन्हें प्रणाम कर रहा है. इस पर उन्होंने पूछा कि तुम हम तीनों में किसे प्रणाम कर रहे हो. राजकुमार ने तब तीसरी महिला की ओर संकेत किया. वह महिला देवी आशा माई थी.

आशा माई राजकुमार पर प्रसन्न हुई और बोली ये तीन अनमोल रत्न तुम सदा अपने पास रखना, जब तक यह रत्न तुम्हारे पास है तुम्हें कोई पराजित नहीं कर सकता। आशा माई से विदा लेकर राजकुमार एक नगर में पहुंचा जहां का राजा चसर खेलने में बहुत ही निपुण था. राजकुमार ने उस राजा को पराजित करके उसका सारा राजपाट जीत लिया। पराजित राजा ने राजकुमार की कुशलता को देखते हुए उससे अपनी पुत्री की शादी कर दी. कुछ दिनों के बाद राजकुमार अपनी पत्नी की इच्छा को देखते हुए अपने पिता और माता से मिलने चल दिया। वहां उसके माता पिता पुत्र के विक्षोह से दु:खी होकर अंधे हो गये थे. आशा माई के कृपा से वे भी भले चंगे हो गये और परिवार की खुशहाली एवं सुख शांति लट आयी. यही है आशापूर्णी आस माई की कथा.

व्रत विधान (Asamai vrat Vidhan):

इस व्रत के दिन महिलाएं पान के पत्ते पर गोपी चंदन अथवा श्रीखंड चंदन से पुतली बनाती है। इस पर चार कड़ियां स्थापित करती हैं। महिलाएं सुन्दर अल्पना बनाकर उस पर कलश बैठाती हैं। इस व्रत का पालन करने वाल महिलाएं गोटियों वाला मांगलिक सूत्र पहन कर आस माई को भोग लगाती हैं तथा अन्य महिलाओं को भेट भी करती हैं। इस व्रत में व्रती मीठा भोजन करती है क्योंकि इस व्रत में नमक खाना वर्जित है.

इस व्रत में कड़ियों की पूजा एवं मटकी स्थापित करने का विधान इसलिए है क्योंकि राजकुमार को मटकियों को फोड़ने के कारण देश निकाला मिला था और कड़ियों से ही वह चसर में राज्य जीत सका था.

मान्यता है कि जो इस व्रत का पालन करता है उसके सारे कष्ट दूर हो जाते हैं और व्यक्ति की सभी आशा पूरी होती है. आप भी आशा की पूर्ति की चाहत रखती हैं तो देवी आस माई का व्रत रख सकती हैं.

आँवला नवमी पर करें वृक्ष पूजन



दीपावली के बाद आने वाली कार्तिक मास की नवमी को आँवला नवमी कहते हैं। आँवला नवमी पर आँवले के वृक्ष के पूजन का महत्व है। साथ ही पुत्र रत्न की प्राप्ति हेतु इस नवमी पूजन का विशेष महत्व है।

एक कथा के अनुसार पुत्ररत्न की प्राप्ति के लिए एक दिन एक वैश्य की पत्नी ने पड़ोसन के कहने पर पराए लड़के की बलि भैरव देवता के नाम पर दे दी। इस वध का परिणाम विपरीत हुआ और उस महिला को कुष्ट रोग हो गया तथा लड़के की आत्मा सताने लगी।

बाल वध करने के पाप के कारण शरीर पर हुए कोढ़ से छुटकारा पाने के लिए उस महिला ने गंगा के कहने पर कार्तिक की नवमी के दिन आँवला का व्रत करने लगी। ऐसा करने से वह भगवान की कृपा से दिव्य शरीर वाली हो गई तथा उसे पुत्र प्राप्ति भी हुई। तभी से इस व्रत को करने का प्रचलन है।

आँवले के वृक्ष के नीचे पूर्व दिशा में बैठकर पूजन कर उसकी जड़ में दूध देना चाहिए। इसके बाद पेड़ के चारों ओर कच्चा धागा बाँधकर कपूर, बाती या शुद्ध घी की बाती से आरती करते हुए सात बार परिक्रमा करनी चाहिए। इस दिन महिलाएँ किसी ऐसे गॉर्डन में जहाँ आँवले का वृक्ष हो, वहाँ जाकर वे पूजन करने बाद वहीं भोजन करती हैं।


SUKRH
BUDH
CHANDRA
GURU
MANGAL
SURYA
KETHU
SANEE
RAHU



सोमवार व्रत कथा

विधि

सोमवार का व्रत साधारणतया दिन के तीसरे पहर तक होता है। व्रत में फलाहार या पारायण का कोई खास नियम नहीं है किन्तु यह आवश्यक है कि दिन रात में केवल एक समय भोजन करें। सोमवार के व्रत में शिवजी पार्वती का पूजन करना चाहिए। सोमवार के व्रत तीन प्रकार के हैं साधारण प्रति सोमवार, सौम्य प्रदोष और सोलह सोमवार, विधि तीनों की एक जैसी है। शिव पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए।

सोमवार व्रत कथा प्रारम्भ

एक बहुत धनवान साहूकार था, जिसके घर धन आदि किसी प्रकार की कमी नहीं थी। परन्तु उसको एक दुःख था कि उसके कोई पुत्र नहीं था। वह इसी चिन्ता में रात-दिन रहता था और वह पुत्र की कामना के लिए प्रति सोमवार को शिवजी का व्रत और पूजन किया करता था तथा सायंकाल को शिव मन्दिर में जाकर के शिवजी के श्री विग्रह के सामने

सोमवार व्रत कथा

दीपक जलाया करता था। उसके इस भक्तिभाव को देखकर एक समय श्री पार्वती जी ने शिवजी महाराज से कहा कि महाराज, यह साहूकार आप का अनन्य भक्त है और सदैव आपका व्रत और पूजन बड़ी श्रद्धा से करता है। इसकी मनोकामना पूर्ण करनी चाहिए।

शिवजी ने कहा– 'हे पार्वती! यह संसार कर्मक्षेत्र है। जैसे किसान खेत में जैसा बीज बोता है वैसा ही फल काटता है। उसी तरह इस संसार में जैसा कर्म करते हैं वैसा ही फल भोगते हैं।'' पार्वती जी ने अत्यन्त आग्रह से कहा– 'महराज! जब यह आपका अनन्य भक्त है और इसको अगर किसी प्रकार का दुःख है तो उसको अवश्य दूर करना चाहिए, क्योंकि आप सदैव अपने भक्तों पर दयालु होते हैं और उनके दुःखों को दूर करते हैं। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो मनुष्य आपकी सेवा तथा व्रत क्यों करेंगे।''

पार्वती जी का ऐसा आग्रह देख शिवजी महाराज कहने लगे– 'हे पार्वती! इसके कोई पुत्र नहीं है इसी चिन्ता में यह अति दुःखी रहता है। इसके भाग्य में पुत्र न होने पर भी मैं इसको पुत्र की प्राप्ति का वर देता हूँ।

सोमवार व्रत कथा

परन्तु यह पुत्र केवल 12 वर्ष तक जीवित रहेगा। इसके पश्चात् वह मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा। इससे अधिक मैं और कुछ इसके लिए नहीं कर सकता।" यह सब बातें साहूकार सुन रहा था। इससे उसको न कुछ प्रसन्नता हुई और न ही कुछ दुःख हुआ। वह पहले जैसा ही शिवजी महाराज का व्रत और पूजन करता रहा। कुछ काल व्यतीत हो जाने पर साहूकार की स्त्री गर्भवती हुई और दसवें महीने उसके गर्भ से अति सुन्दर पुत्र की प्राप्ति हुई। साहूकार के घर में बहुत खुशी मनाई गई परन्तु साहूकार ने उसकी केवल बारह वर्ष की आयु जान कोई अधिक प्रसन्नता प्रकट नहीं की और न ही किसी को भेद ही बताया। जब वह बालक 11 वर्ष का हो गया तो उस बालक की माता ने उसके पिता से विवाह आदि के लिए कहा तो वह साहूकार कहने लगा कि अभी मैं उसका विवाह नहीं करूंगा। अपने पुत्र को काशी जी पढ़ने के लिए भेजूंगा। फिर साहूकार ने अपने साले अर्थात् बालक के मामा को बुला उसको बहुत सा धन देकर कहा तुम बालक को काशी जी पढ़ने के लिये ले जाओ और रास्ते में जिस

सोमवार व्रत कथा

स्थान पर भी जाओ यज्ञ करते हुए ब्राहमणों को भोजन कराते जाओ। वह दोनों मामा–भानजे यज्ञ करते और ब्राहमणों को भोजन कराते जा रहे थे। रास्ते में उनको एक शहर पड़ा। उस शहर में राजा की कन्या का विवाह था और दूसरे राजा का लड़का जो विवाह कराने के लिए बारात लेकर आया था, वह एक आँख से काना था। उसके पिता को इस बात की बड़ी चिन्ता थी कि कहीं वर को देख कन्या के माता–पिता विवाह में किसी प्रकार की अड़चन पैदा न कर दें। इस कारण जब उसने अति सुन्दर सेठ के लड़के को देखा तो मन में विचार किया कि क्यों न दरवाजे के समय इस लड़के से वर का काम चलाया जाये। ऐसा विचार कर वर के पिता ने उस लड़के और मामा से बात की तो वे राजी हो गये। फिर उस लड़के को वर के कपड़े पहना तथा घोड़ी पर चढ़ा दरवाजे पर ले गये और सब कार्य प्रसन्नता से पूर्ण हो गया। फिर वर के माता पिता ने सोचा कि यदि विवाह कार्य भी इसी लड़के से करा लिया जाय तो क्या बुराई है? ऐसा विचार कर लड़के और उसके मामा से कहा–यदि आप फेरों का और कन्यादान के

सोमवार व्रत कथा

काम को भी करा दें तो आपकी बड़ी कृपा होगी और मैं इसके बदले में आपको बहुत कुछ धन दूंगा तो उन्होंने स्वीकार कर लिया और विवाह कार्य भी बहुत अच्छी तरह से सम्पन्न हो गया। परन्तु जिस समय लड़का जाने लगा तो उसने राजकुमारी की चुन्दड़ी के पल्ले पर लिख दिया कि तेरा विवाह तो मेरे साथ हुआ है, परन्तु जिस राजकुमार के साथ भेजेंगे वह एक आँख से काना है और मैं काशी जी पढ़ने जा रहा हूँ। लड़के के जाने के पश्चात् उस राजकुमारी ने जब अपनी चुन्दड़ी पर ऐसा लिखा हुआ पाया तो उसने राजकुमार के साथ जाने से मना कर दिया और कहा कि यह मेरा पति नहीं है। मेरा विवाह इसके साथ नहीं हुआ है। वह तो काशी जी पढ़ने गया है। राजकुमारी के माता-पिता ने अपनी कन्या को विदा नहीं किया और बारात वापस चली गयी।

उधर सेठ का लड़का और उसका मामा काशी जी में पहंच गये। वहाँ जाकर उन्होंने यज्ञ करना और लड़के ने पढ़ना शुरू कर दिया। जब लड़के की आय बारह साल की हो गई उस दिन उन्होंने यज्ञ रचा रखा था कि लड़के ने

सोमवार व्रत कथा

अपने मामा से कहा-''मामाजी आज मेरी तबियत कुछ ठीक नहीं है।'' मामा ने कहा- ''अन्दर जाकर सो जाओ।'' लड़का अन्दर जाकर सो गया और थोड़ी देर में उसके प्राण निकल गए। जब उसके मामा ने आकर देखा तो वह मुर्दा पड़ा है तो उसको बड़ा दुःख हुआ और उसने सोचा कि अगर मैं अभी रोना-पीटना मचा दूंगा तो यज्ञ का कार्य अधूरा रह जाएगा। अतः उसने जल्दी से यज्ञ का कार्य समाप्त कर ब्राहाणों के जाने के बाद रोना-पीटना आरम्भ कर दिया। संयोगवश उसी समय शिव-पार्वतीजी उधर से जा रहे थे। जब उन्होंने जोर-जोर से रोने की आवाज सुनी तो पार्वती जी कहने लगीं-''महाराज! कोई दुखिया रो रहा है इसके कष्ट को दूर कीजिये। जब शिव-पार्वती ने पास जाकर देखा तो वहां एक लड़का मुर्दा पड़ा था। पार्वती जी के कहने लगीं-महाराज यह तो उसी सेठ का लड़का है जो आपके वरदान से हुआ था। शिवजी कहने लगे-''हे पार्वती! इसकी आयु इतनी थी सो यह भोग चुका।'' तब पार्वती जी ने कहा- 'हे महाराज! इस बालक को और आयु दो नहीं तो इसके माता-पिता तड़प-तड़प कर मर

page 6/8

सोमवार व्रत कथा

जायेंगे।'' पार्वती जी के बार-बार आग्रह करने पर शिवजी ने उसको जीवन वरदान दिया और शिवजी महाराज की कृपा से लड़का जीवित हो गया। शिव-पार्वती कैलाश पर्वत चले गये।

तब वह लड़का और मामा उसी प्रकार यज्ञ करते तथा ब्राहाणों को भोजन कराते अपने घर की ओर चल पड़े। रास्ते में उसी शहर में आए जहां उसका विवाह हुआ था। वहां पर आकर उन्होंने यज्ञ आरम्भ कर दिया तो उस लड़के के ससुर ने उसको पहचान लिया और अपने महल में ले जाकर उसकी बडी खातिर की, साथ ही बहुत दास-दासियों सहित आदर पूर्वक लड़की और जमाई को विदा किया। जब वह अपने शहर के निकट आए तो मामा ने कहा कि मैं पहले तुम्हारे घर जाकर खबर कर लेता हूँ। जब उस लड़के का मामा घर पहुँचा तो लड़के के माता-पिता घर की छत पर बैठे थे और यह प्रण कर रखा था कि यदि हमारा पुत्र सकुशल लौट आया तो हम राजी-खुशी नीचे आ जायेंगे नहीं तो छत से गिरकर अपने प्राण खो देंगे। इतने में उस लड़के के मामा ने आकर यह समाचार दिया कि आपका पुत्र आ गया है

page 7/8

सोमवार व्रत कथा

तो उनको विश्वास नहीं आया तब उसके मामा ने शपथपूर्वक कहा कि आपका पुत्र अपनी स्त्री के साथ बहुत सारा धन साथ लेकर आया है तो सेठ ने आनन्द के साथ उसका स्वागत किया और बड़ी प्रसन्नता के साथ रहने लगे। इसी प्रकार से जो कोई भी सोमवार के व्रत को धारण करता है अथवा इस कथा को पढ़ता या सुनाता है उसकी समस्त मनोकामनाएं पूर्ण होती है।

शिव जी की आरती

ओं जय शिव ओंकारा स्वामी जय शिव ओंकारा । ब्रह्मा विष्णु सदा शिव अर्द्धांगी धारा ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

एकानन चतुरानन पंचानन राजे । हंसानन गरूड़ासन वृषवाहन साजे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

दो भुज चार चतुर्भुज दश भुज ते सोहे । तीनो रूप निरखता त्रिभुवन मन मोहे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

अक्षमाला वनमाला रूण्डमाला धारी । चन्दन मृगमद सोहे भाले शुभकारी ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

श्वेताम्बर पीताम्बर बाघाम्बर अंगे । सनकादिक ब्रह्मादिक प्रेतादिक संगे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

कर के बीच कमण्डल चक्र त्रिशुल धर्ता । जग कर्ता जगहर्ता जग पालनकर्ता ।।

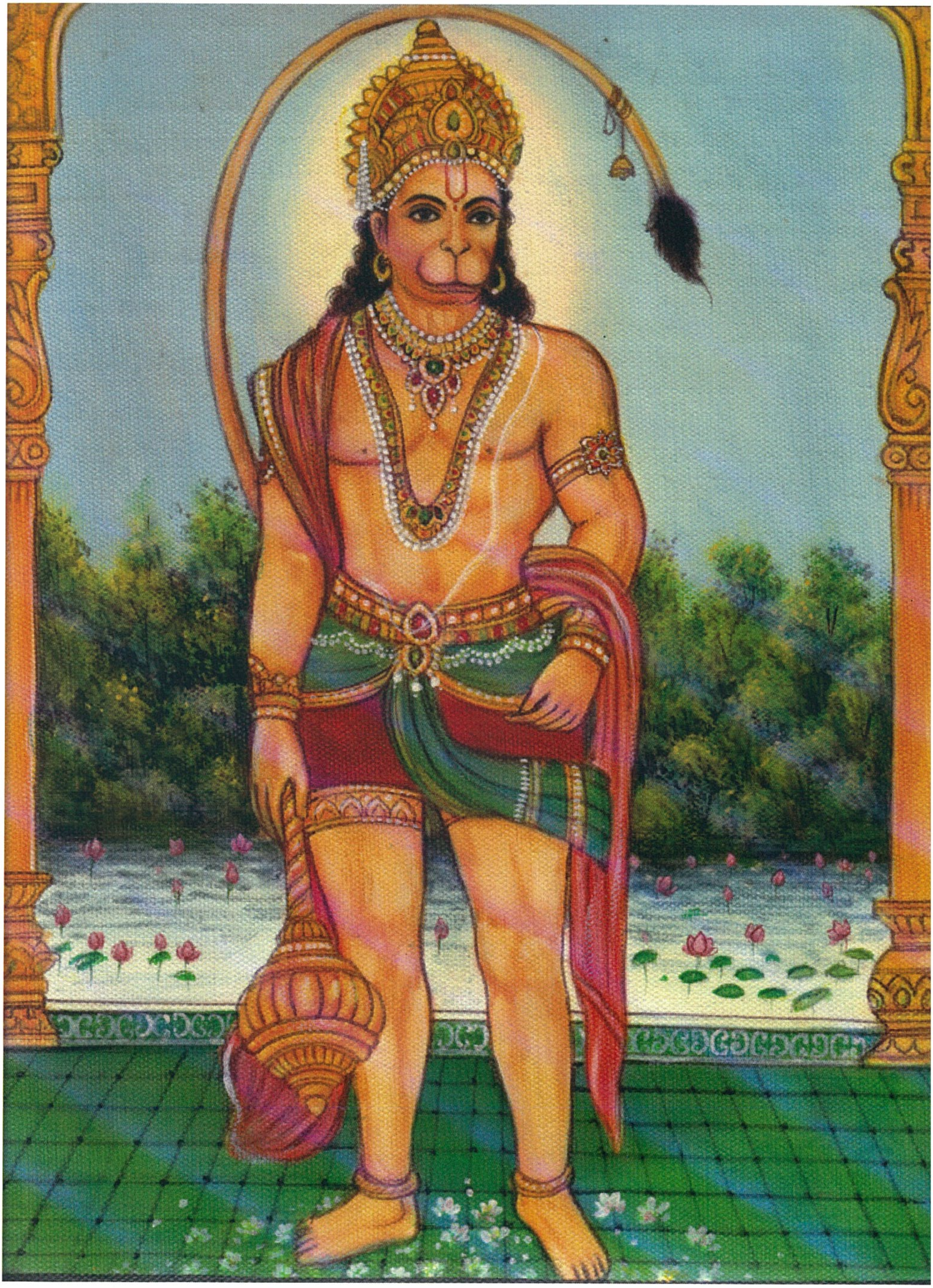
ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका । प्रणवाक्षर के मध्य तीनो ही एका ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।

त्रिगुण स्वामीजी की आरती जो कोई गावे। कहत शिवानंद स्वामी मनवांछित फल पावे ।।

ओउम् जय शिव ओंकारा ।।



पूजा विधि

सर्व सुख, रक्त विकार, राज्य सम्मान तथा पुत्र की प्राप्ति के लिये मंगलवार का व्रत उत्तम है । इस व्रत मे गेहूँ ओर गुड़ का भोजन करना चाहिए। भोजन दिन रात मे एक बार ही ग्रहण करना ठीक है। व्रत २१ सप्ताह तक करे । मंगलवार के व्रत से मनुष्य के समस्त दोष नष्ट हो जाते है । व्रत के पूजन के समय लाल पुष्पो को चढ़ावे ओर लाल वस्त्र धारण करे। अन्त मे हनुमान जी की पूजा करनी चाहिए तथा मंगलवार की कथा सुननी चाहिए ।

मंगलवार व्रत कथा कथा प्रारम्भ

एक ब्राह्मण दम्पति के कोई सन्तान नही थी, जिसके कारण पति-पत्नि दु:खी थे। वह ब्राह्मण हनुमान जी की पुजा हेतु वन चला गया। वह पुजा के साथ म्हावीर जी से एक पुत्र की प्राप्ति के लिए कामना करने प्रकट किया करता था। घर पर उसकी पत्नि मंगलवार व्रत पुत्र प्राप्ति के लिए किया करती थी । मंगल के दिन व्रत के अन्त भोजन ग्रहण करती थी। मंगल के दिन व्रत के अंत भोजन बनाकर हनुमान जी को भोग लगाने के बाद स्वयं भोजन ग्रहण करती थी । एक बार कोई व्रत आ गया। जिसके कारण ब्राह्मणी भोजन न बना सकी तब हनुमान जी का भोग भी नही लगाया। वह अपने मन मे ऐसा प्रण करके सो गई कि अब अगले मंगलवार के दिन तो उसे मूर्छा आ गई तब हनुमान जी उसकी लगन और निष्ठा को देखकर प्रसन्न हो गए। उन्होने उसे दर्शन दिया और कहा- "मै तुमसे अति प्रसन्न हुँ। मै तुझको एक सुन्दर बालक देता हुँ। जो तेरी सेवा किया करेगा।" हनुमान जी बाल रूप मे उसको दर्शन देकर अंतर्धान हो गए । सुन्दर बालक पाकर ब्राह्मणी अति प्रसन्न हुई। ब्राह्मणी ने बालक का नाम मंगल रखा। कुछ समय पश्चात् ब्राह्मण वन से लौटकर आया । प्रसन्नचित सुन्दर बालक को घर मे क्रीड़ा करते देखकर पत्नी से बोला- "यह बालक कौन है ?" पत्नी ने कहा- "मंगलवार के व्रत से प्रसन्न होकर हनुमान जी ने दर्शन देकर मुझे बालक दिया है।" पत्नी की बात छल से भरी जान उसने सोचा यह कुल्टा व्यभिचारिणी अपनी कुलषता छुपाने के लिए बात बना रही है। एक दिन उसका पति कुएँ पर पानी भरने चला तो पत्नी ने कहा मंगल को साथ ले जाओ। वह मंगल को साथ ले चला और उसको कुएँ मे डालकर वापिस पानी भरकर घर आया तपो पत्नी ने पूछा मंगल कहाँ है ? तभी मंगल मुस्कराता हुआ घर आ गया। उसको देख ब्राह्मण आश्चर्य चकित हुआ रात्रि को हनुमान जी ने उसको स्वप्न मे कहा- "यह बालक मैनें दिया है तुम पत्नी को कुल्टा क्यो कहते हो।" पति यह जानकर हर्षित हुआ। फिर पति-पत्नि मंगल का व्रत रख अपना जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत करने लगे। जो मनुष्य मंगलवार के व्रत को नियम से करता है अथवा इस कथा को पढ़ता और सुनता है ।उसके हनुमान जी की कृपा से सब कष्ट दूर होकर सर्व सुख प्राप्त होता है।

।। समाप्त ।।

श्री हनुमान जी की आरती

आरती कीजै हनुमान लला की । दुष्टदलन रघुनाथ कला की ।।
जाके बल से गिरिवर कांपै । रोग दोष जाके निकट न झांके ।।
अंजनि पुत्र महा बल दाई । संतन के प्रभु सदा सहाई ।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये । लंका जारि सीय सुधि लाये ।।
लंका सो कोटि समुद्र सी खाई । जात पवनसुत बार न लाई ।।
लंका जारि असुर संहारे । सियाराम जी के काज संवारे ।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे । लाय सजीवन प्राण उबारे ।।
पैठि पाताल तोरि जम कारे । अहिरावन की भुजा उखारे ।।
बायें भुजा असुर दल मारे । दाहिने भुजा संत जन तारे ।।
सुर नर मुनि जन आरती उतारे । जै जै जै हनुमान उचारे ।।
कंचन थाल कपूर लौ छाई । आरती करत अंजना माई ।।
जो हनुमान जी की आरती गावै । बसि बैकुंठ परमपद पावै ।।



पूजा विधि

ग्रह शान्ति तथा सर्व-सुखो की इच्छा रखने वालो को बुधवार का व्रत करना चाहिए । इस व्रत मे रात दिन मे एक बार भोजन ही करना चाहिए । इस व्रत के समय हरी वस्तुओ का उपयोग करना श्रेष्ठ है । इस व्रत के अंत मे शंकर जी की पूजा धुप, बेल-पत्र आदि से करना चाहिए।साथ ही कथा सुन कर आरती के बाद प्रसाद लेकर जाना चाहिए। बीच मे नही जाना चाहिए ।

बुधवार व्रत कथा कथा प्रारम्भ

एक समय एक व्यक्ति अपनी पत्नी को विदा करवाने अपनी ससुराल गया। वहाँ पर कुछ दिन रहने के बाद सास-ससुर से विदा करने के लिए कहा । किन्तु सब ने कहा कि आज बुधवार है आज के दिन गमन नही करते है । वह व्यक्ति किसी प्रकार न माना ओर हठधर्मी करके बुधवार के दिन ही पत्नी को विदा कराकर अपने नगर को चल पड़ा। रहा मे उसकी पत्नी को प्यास लगी तो उसने अपने पति को कहा कि मुझे बहुत जोर से प्यास लगी है । तब वह व्यक्ति लोटा लेकर रथ से उतरकर जल लेने चला गया । जैसे ही वह पत्नी के निकट आया तो वह यह देखकर आश्चर्य से चकित रह गया कि ठकि अपनी ही जैसी सूरत तथा वैसी ही वेश-भूषा मे वह व्यक्ति उसकी पत्नी के पास रथ मे बैठा हुआ है । उसने ,कोध से कहा कि तू कौन है जो मेरी पत्नी के निक ट बैठा हुआ है । दूसरा व्यक्ति बोला यह मेरी पत्नी है। मै अभी-अभी सुसराल से विदा करा कर ला रहा हूं । वे दोनो व्यक्ति परस्पर झगड़ने लगे। तभी राज्य के सिपाही आकर लोटे वाले व्यक्ति को पकड़ने लगे । स्त्री से पूछा, तुम्हारा असली पति कौन सा है ? तब पत्नी शान्त ही रही क्योकि दोनो एक जैसे थे वह किसे अपना पति कहे । वह व्यक्ति ईश्वर से प्रार्थना करता हुआ बोला- हे परमेश्वर यह क्या लीला है कि सच्चा झूठा बन रहा है । तभी आकाशवाणी हुई कि मूर्ख आज बुधवार के दिन तुझे गमन नही करना था । तूने किसी की बात नही मानी । यह सब लीला बुधदेव भगवान की है । उस व्यक्ति ने बुधदेव भगवान से प्रार्थना की और अपनी गलती के लिए क्षमा मांगी । तब बुधदेव जी अनतर्ध्यान हो गए। वह अपनी स्त्री को लेकर घर आया तथा बुधवार का व्रत वे दोनो पति पत्नि नियमपूर्वक करने लगे । जो व्यक्ति इस कथा को श्रवण करता तथा सुनाता है उसको बुधवार के दिन यात्रा करने मे कोई दोष नही लगता है, उसको सर्व प्रकार से सुखो की प्राप्ति होती है ।

।। समाप्त ।।

बुधवार की आरती

आरती युगल किशोर की कीजै,
तन मन धन न्यौछावर कीजे। आरती...
गौर श्याम मुख निरखत रीझे,
हरि को स्वरूप नयन भरि पीजे। आरती...
रवि शशि कोटि बदन की शोभा,
ताहि निरखि मेरा मन लोभा। आरती...
ओढे नील पीत पट सारी,
कुंज बिहारी गिरवर धारी। आरती...
फूलन की सेज फूलन की माला,
रत्न सिंहासन बैठे नन्दलाला। आरती...
मोर मुकुट मुरली कर सोहै,
नटवर कला देखि मन मोहै। आरती...
कंचन थार कपूर की बाती,
हरि आये निर्मल भई छाती। आरती...
श्री पुरुषोत्तम गिरवरधारी,
आरती करें सकल ब्रजनारी। आरती...
नन्द नन्दन वृषभानु किशोरी,
परमानन्द स्वामी अविचल जोरी। आरती...



पूजा विधि

इस दिन बृहस्पतेश्वर महादेव जी की पूजा होती है । दिन मे एक समय ही भोजन करें । पीले वस्त्र धारण करें ।भोजन भी चने की दाल का होना चाहिए, नमक नही खाना चाहिए । पीले रंग के फुल, चने की दाल, पीले कपड़े तथा पीले चन्दन से पूजा करनी चाहिए। पूजन के पश्चात् कथा सुननी चाहिए । इस व्रत को करने से बृहस्पति जी अति प्रसन्न होते है तथा धन और विद्या का लाभ होता है । स्त्रियो के लिए यह व्रत अति आवश्यक है । इस व्रत मे केले का पूजन होता है ।

बृहस्पतिवार व्रत कथा प्रारम्भ

किसी गांव मे एक साहूकार रहता था, जिसके घर मे अनन, वस्त्र और धन किसी की कोई कमी नही थी, परन्तु उसकी स्त्री बहुत ही कृपण थी। किसी कसी भिक्षार्थी को कुछ नही देती, सारे दिन घर के कामकाज मे लगी रहती। एक समय एक साधु-महात्मा बृहस्पतिवार के दिन उसके द्वार पर आये और भिक्षा की याचना की। स्त्री उस समय घर के आंगन को लीप रही थी, इस कारण साधु महाराज से कहने लगी कि महाराज इस समय तो मै घर लीप रही हूँ आपको कुछ नही दे सकती, फिर किसी अवकाश समय आना। साधु महात्मा खाली हाथ चले गए। कुछ दिन के पश्चात् वही साधु महात्मा आए उसी तरह भिक्षा मांगी। साहूकारनी उस समय लड़के को खिला रही थी। कहने लगी- महाराज मै क्या करूँ अवकाश नही है, इसलिए आपको भिक्षा नही दे सकती। तीसरी बार महात्मा आए तो उसने उन्हे उसी तरह टालना चाहा परन्तु महात्मा जी कहने लगे कि यदि तुमको बिल्कुल ही अवकाश हो जाए तो क्या मुझको दोगी ? साहुकारनी कहने लगी कि हाँ महाराज यदि ऐसा हो जाए तो आपकी बड़ी कृपा होगी। साधु- महात्मा जी कहने लगे कि अच्छा मै एक उपाय बताता हूँ। तुम बृहस्पतिवार को दिन चढ़े उठो और सारे घर मे झाडू लगा कर कूड़ा एक कोने मे जमा करके रख दो। घर मे चौका इत्यादि मन लगाओ। फिर स्नान आदि करके घर वालो से कह दो, उस दिन सब हजामत अवश्य बनवाये। रसोई बनाकर चूल्हे के पीछे रखा करो, सामने कभी रक्खो। सांयकाल को अन्धेरा होने के बाद दीपक जलाओ तथा बृहस्पतिवार को पीले वस्त्र मत धारण करो, न पीले रंग की चीजो का भोजन करो। यदि ऐसा करोगे तो तुमको घर का कोई काम नही करना पड़ेगा। साहूकारनी ने ऐसा ही किया। बृहस्पतिवार को दिन चढे उठी, झाडू लगाकर कूड़े को घर के एक कोने मे जमा करके रख दिया। पुरूषो ने हजामत बनवाई। भोजन बनवाकर चूल्हे के पीछे रखा। वह सब बृहस्पतिवारो को ऐसा ही करती रही। अब कुछ काल बाद उसके घर मे खाने को दाना न रहा। थोड़े दिनो मे महात्मा फिर

क्रमश:

(१)

आए और भिक्षा मांगी परन्तु सेठानी ने कहा महाराज मेरे घर मे खाने को अन्न नही है, आपको क्या दे सकती हूँ । तब महात्मा ने कहा कि जब तुम्हारे घर मे सब कुछ था तब भी कुछ नही देती थी । अब पूरा-पूरा अवकाश है तब भी कुछ नही दे रही हो, तुम क्या चाहती हो वह कहो ? तब सेठानी ने हाथ जोड़ कर कहा की महाराज अब कोई ऐसा उपाय बताओ कि मेरे पहले जैसा धन-धान्य हो जाय । अब मै प्रतिज्ञा करती हूँ कि अवश्यमेव आप जैसा कहेगे वैसा ही करूँगी । तब महात्मा जी बोले - "बृहस्पतिवार को प्रात: काल उठकर स्नानादि से निवृत हो घर को गौ के गोबर से लीपो तथा घर के पुरूष हजामत न बनवाये । भूखो को अन्न-जल देती रहा करो । ठीक सांय काल दीपक जलाओ । यदि ऐसा करोगी तो तुम्हारी सब मनोकामनाएं भगवान् बृहस्पति जी की कृपा से पूर्ण होगी । सेठानी ने ऐसा ही किया और उसके घर मे धन-धान्य वैसा ही होगा जैसा पहले था । इस प्रकार भगवान् बृहस्पति जी की कृपा से अनेक प्रकार के सुख भोगकर दीर्घकाल तक जीवित रही ।

।। समाप्त ।।

(२)

बृहस्पतिवार की आरती

ॐ जय ब्रृहस्पति देवा, जय ब्रृहस्पति देवा
छिन छिन भोग लगाऊँ फल मेवा। ॐ....
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर्यामी।
जगत पिता जगदीश्वर तुम सबके स्वामी। ॐ....
चरणामृत निज निर्मल, सब पालकहर्ता।
सकल मनोरथ दायक, कृपा करो भर्ता। ॐ....
तन मन धन अर्पण कर जो जन शरण पडे।
प्रभु प्रकट तब होकर, आकर द्वार खड़े। ॐ....
दीन दयाल दयानिधि, भक्तन हितकारी।
पाप दोष सब हर्ता, भव बन्धन हारी। ॐ....
सकल मनोरथ दायक, सब संशय तारो।
विषय विकार मिटाओ, सन्तन सुखकारी। ॐ....
जो कोई आरती तेरी, प्रेम सहित गावे।
जेष्ठानन्द बन्दसो, सो निश्चय पावे। ॐ....


सुक

विधि :

इस व्रत को करने वाले कथा के पूर्व कलश को पूर्ण भरे, उसके ऊपर गुड़ व चने से भरी कटोरी रखे, कथा कहते व सुनते समय हाथ मे भुने चने व गुड़ रखे सुनने वाले 'सन्तोषी माता की जय' इस प्रकार जय-जयकार से बोलते जाएँ। कथा समाप्त होने पर हाथ का गुड़ और चना गौ माता को खिलाएँ। कलश मे रखा हुआ गुड़ व चना सबको प्रसाद के रूप मे बाँट दे। कथा समाप्त होने और आरती के बाद कलश के जल को घर में सब जगह छिड़के, बचा हुआ जल तुलसी की क्यारी मे डाले। माता भावना की भूखी है कम ज्यादा का कोई विचार नही, अतएव जितना भी बन पड़े प्रसाद अर्पण कर श्रद्धा और प्रेम से प्रसन्न मन से व्रत करना चाहिए। व्रत के उद्यापन मे अढ़ाई सेर खाजा, चने का शाक, मोएनदार पूड़ी खीर, नैवेद्य रखे। घी का दीपक जला संतोषी माता की जय-जयकार बोल नारियल फोड़े। इस दिन ८ लड़को को भोजन कराएं। देवर, जेठ, घर के ही लड़के हो तो दूसरो को बुलाना नही अगर कुटूम्ब मे न मिलें तो ब्राह्मणो के, रिश्तेदारो के या पड़ोसी के लड़के बुलाए। उन्हे खटाई की कोई वस्तु न दे तथा भोजन करा यथाशक्ति दक्षिणा दे।

शुक्रवार व्रत कथा प्रारम्भ

एक समय की बात है कि एक नगर मे कायस्थ, ब्राह्मण और वैश्य जाति के तीनो लड़को मे परस्पर मित्रता थी। उन तीनोका विवाह हो गया था। ब्राह्मण और कायस्थ के लड़को का गौना भी हो गया था, परन्तु वैय के लड़के का गौना नही हुआ था। एक दिन कायस्थ के लड़के ने कहा- "हे मित्र ! तुम मुकलावा करके अपनी स्त्री को घर क्यो नही लाते? स्त्री के बिना घर कैसा बुरा लगता है।"

यह बात वैश्य के लड़के को जंच गई। वह कहने लगा कि मै अभी जाकर मुकलावा लेकर आता हूँ। ब्राह्मण के लड़के ने कहा अभी मत जाओ क्योकि शुक्र अस्त हो रहा है, जब उदय हो तब जा कर ले आना। परन्तु वैश्य के लड़के को ऐसी जिद हो गई कि किसी प्रकार से नही माना। जब उसके घरवालो ने सुना तो उन्होने बहुत समझाणा परन्तु वह किसी प्रकार से नही माना और अपनी ससुराल चला गया। उसको आया देखकर सुसराल वाले भी चकराए। जमात्ता का स्वागत सत्कार करने के बाद उन्होनट पुछा आपका आना कैसे हुआ ? वैश्य पुत्र कहने लगा कि मै अपनी पत्नी को विदा कराने के लिए आया हूँ। सुसराल वालो ने भी उसे बहुत समझाया कि इन दिनो शुक्र अस्त है, उदय होने पर ले जाना, परन्तु उसने एक न सुनी और अपनी पत्नी को ले जाने का आग्रह करता रहा। जब वह किसी प्रकार न माना तो उन्होने लाचार होकर अपनी पुत्री को विदा कर दिया।

वैश्य पुत्र अपनी पत्नी को एक रथ मे बिठा कर अपने घर की ओर चल पड़ा। थोड़ी दूर जाने के बाद मार्ग मे उसके रथका पहिया टूटकर गिर गया और बैल का पैर टूट गया। उसकी पत्नी भी गिर पड़ी और घायल हो गई। जब आगे चले तो रास्ते मे डाकू मिले। उसके पास जो धन, वत्र तथा आभूषण थे वह सब उन्होने छीन लिए ।

इस प्रकार अनेक कष्टौं का सामना कर जब पति पत्नि अपने घर पहूँचे तो आते ही वैश्य के लड़के को सर्प ने काट लिया, वह मूर्छित होकर गिर पड़ा।

क्रमश:

(१)

तब उसकी स्त्री अत्यन्त विलाप कर रोने लगी। वैश्य ने अपने पुत्र को वैद्यो को दिखलाया तो वैद्य कहने लगे-यह तीन दिन में मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा। जब उसके मित्र ब्राह्मण को पता लगातो उसने कहा- "सनातन धर्म की प्रथा है कि जिस समय शुक्र के अस्त हो कोई अपनी स्त्री को नही लाता। परन्तु यह शुक्र के शस्त के समय स्त्री को विदा कराके ले आया है इस कारण सारे विघ्न उपस्थित हुए है। यदि यह दोनो सुसराल वापिस चले जाएँ और शुक्र के उदय होने पर पुनः आवे तो निश्चय ही विघ्न टल सकता है।

सेठ ने अपने पुत्र और उसकी स्त्री को शीघ्र ही उसकी सुसराल वापिस पहुँचा दिया। वहाँ पहुँचते ही वैश्य पुत्र की मूर्च्छा दूर हो गई और साधारण उपचार से ही वह सर्प विष से मुक्त हो गया। अपने दामाद को स्वास्थ्य लाभ करता रहा और जब शुक्र का उदय हुआ तब हर्ष पूर्वक उसकी सुसराल वालो ने उसको अपनी पुत्री के साथ विदा किया। इस के पश्चात् पति पत्नि दोनो घर आकर आनन्द से रहने लगे। इस व्रत के करने से अनेक विघ्न दूर होते है।

।। समाप्त ।।

(२)

शुक्रवार की आरती

आरती लक्ष्मण बालजती की,
असुर संहारन प्राणपति की। आरती...

जगमग ज्योति अवधपुर राजे,
शेषाचल पै आप विराजे। आरती...

घण्टा ताल पखावज बाजे,
कोटि देव मुनि आरती साजे। आरती...

किरीट मुकुट कर धनुष विराजे,
तीन लोक जाकी शोभा राजे। आरती...

कंचन थार कपूर सुहाई,
आरती करत सुमित्रा माई। आरती...

आरती कीजे हरि की तैसी,
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण जैसी। आरती...

प्रेम मगन होय आरती गावैं,
बसि वैकुण्ठ बहुरि नहीं आवैं। आरती...

भक्ति हेतु हरि ध्यान लगावै,
जन घनश्याम परमपद पावै। आरती...



विधि :

इस दिन शनिदेव की पूजा होती है। काला तिल. काला वस्त्र, तेल, उड़द शनिदेव को अति प्रिय है, इसलिए इनके द्वारा शनिदेव की पूजा की जाती है। शनि स्तोत्र का पाठ भी विशेष लाभदायक सिद्ध होता है।

शनिवार व्रत की कथा

एक समय सूर्य, चन्द्रमा, मँगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन सब ग्रहों मे आपस मे विवाद हो गया कि हममे सबसे बड़ा कौन है? सब अपने आपको बड़ा कहते थे। जब आपस मे कोई निश्चय न हो सका तो सब आपस मे झगड़ते हुए देवराज इन्द्र के पास गए और कहने लगे कि आप सब देवताओ के राजा है इसलिए आप हमारा न्याय करके बतलाएं कि हम नवो ग्रहो मे कौन सबसे बड़ा ग्रह कौन है?

देवराज इन्द्र देवातओ का प्रश्न सुनकर घबरा गए और कहने लगे कि मुझमे यह सामर्थ्य नही है कि मै किसी को बड़ा या छोटा बतला सकूँ। मै अपने मुख से कुछ नही कह सकता। हाँ एक उपाय हो सकता है। इस समय पृथ्वी पर राजा विक्रमादित्य दूसरो के दु:खो का निवारण करने वाले है इसलिए आप सब मिलकर उन्ही के पास जाएँ, वही आपके विवाद का निवारण करेंगे।

क्रमश:

(१)

सभी ग्रह देवता देवलोक से चलकर भू-लोक मे जाकर राजा विकमादित्य की सभा मे उपस्थित हुए और अपना प्रश्न राजा के सामने रखा । राजा विकमादित्य ग्रहों की बात सुनकर गहरी चिन्ता मे पड़ गए कि मै अपने मुख से किसको बड़ा और किसको छोटा बतलाऊँगा ? जिसको छोटा बतलाऊँगा वही क्रोध करेगा । उनका झगड़ा निपटाने के लिए उन्होने एक उपाय सोचा और सोना, चाँदी, काँसा, पीतल, सीसा, रांगा, जस्ता, अभ्रक और लोहा नौ धातुओ के नौ आसन बनवाए । सब आसनो को क्रम से जैसे सोना सबसे पहले और लोहा सबसे पीछे बिछाया गया । इसके पश्चात् राजा ने सब ग्रहो से कहा कि आप सब अपना-अपना आसन ग्रहण करें, जिसका आसन सबसे आगे वह सब से बड़ा और जिसका सबसे पीछे वह सबसे छोटा जानिए । क्योकि लोहा सबसे पीछे था और शनिदेव का शासन था इसलिए शनिदेव ने समझ लिया कि राजा ने मुझको सबसे छोटा बना दिया है।

इस निर्णय पर शनिदेव को बहुत क्रोध आया । उन्होने कहा कि राजा तू मुझे नही जानता । सूर्य एक राशि पर एक महीना, चन्द्रमा सवा दो महीना दो दिन, मँगल डेढ महीना, बृस्पति तेरह महीने, बुध और शुक्र एक-एक महीने विचरण करते है । परन्तु मै एक राशि पर ढाई वर्ष से लेकर साढे सात वर्ष तक रहता हूँ । बड़े-बड़े देवताओ को भी मैने भीषण दु:ख दिया है। राजन् सुनो ! श्रीरामचन्द्रजी को साढे साती आई और उन्हे वनवास हो गया। रावण पर आई तो राम ने वानरो की सेना लेकर लंका पर चढाई कर दी और रावण के कुल का नाश कर दिया । हे राजन् ! अब तुम सावधान रहना।

राजा विकमादित्य ने कहा- जो भाग्य मे होगा, देखा जाएगा।

इसके बाद अन्य ग्रह तो प्रसन्नता के साथ अपने-अपने स्थान पर चले गए परन्तु शनिदेव क्रोध के साथ वहाँ से सिधारे।

कुछ काल व्यतीत होने पर जब राजा विकमादित्य को साढे साती की दशा आई तो शनिदेव घोड़ो के सौदागर बनकर अनेक घोड़ो के सहित

क्रमश:

(२)

राजा विक्रमादित्य की राजधानी मे आए। जब राजा ने घोड़ो के सौदागर के आने की खबर सुनी तो अपने अश्वपाल को अच्छे-अच्छे घोड़े खरीदने की आज्ञा दी। अश्वपाल ऐसी अच्छी नस्ल के घोड़े देखकर और एक अच्छा सा घोड़ा चुनकर सवारी के लिए उस पर चढे ।

राजा के पीठ पर चढते ही घोड़ा तेजी से भागा। घोड़ा बहुत दूर एक घने जंगल मे जाकर राजा को छोड़कर अन्तर्ध्यान हो गया। इसके बाद राजा विक्रमादित्य अकेला जंगल मे भटकता फिरता रहा। भूख-प्यास से दु:खी राजा ने भटकते-भटकते एक ग्वाले को देखा। ग्वाले ने राजा को प्यास से व्याकुल देखकर पानी पिलाया। राजा की अंगुली मे एक अंगूठी थी। वह अंगूठी उसने निकाल कर प्रसन्नता के साथ ग्वाले को दे दी और स्वयं शहर की ओर चल दिया। राजा शहर मे पहुँचकर एक सेठ की दुकान पर जाकर बैठ गया और अपने आपको उज्जैन का रहने वाला तथा अपना नाम वीका बतलाया। सेठ ने उसको एक कुलीन मनुष्य समझकर जल आदि पिलाया। भाग्यवश उस दिन सेठ की दुकान पर बहुत अधिक बिक्री हुई तब सेठ उसको भाग्यवान् पुरुष समझकर भोजन के लिएअपने साथ घर ले गया। भोजन करते समय राजा विक्रमादित्य ने एक आश्चर्यजनक घटना देखी, जिस खूंटी पर हार लटक रहा था वह खूंटी उस हार को निगल रही थी।

भोजन के पश्चात् जब सेठ कमरे मे आया तो उसे कमरे मे हार नही मिला। उसने यही निश्चय किया कि सिवाय वीका के कोई और इस कमरे मे नही आया, अत: अवश्य ही उसी ने हार चोरी किया है। परन्तु वीका ने हार लेने से इन्कार कर दिया। इस पर पाँच सात आदमी उसको पकड़कर नगर कोतवाल के पास ले गए। फौजदार ने उसको राजा के सामने उपस्थित कर दिया और कहा कि यह आदमी भला प्रतीत होता है, चोर मालूम नही होता, परन्तु सेठ का कहना है कि इस के सिवाय और कोई घर मे आया ही नही, इसलिए अवश्य ही चोरी इस ने की है। राजा ने आज्ञा दी की इस के हाथ पैर काटकर चौरंगिया किया जाए। तुरन्त राजा की आज्ञा का पालन किया गया और वीका के हाथ पैर काट दिये गए।

क्रमश:

(३)

कुछ काल व्यतीत होने पर एक तेली उसको अपने घर ले गया और उसको कोल्हू पर बिठा धिया। वीका उस पर बैठा हुआ अपनी जबान से बैल हांकता रहा। इस काल मे राजा की शनि की दशा समाप्त हो गई। वर्षा ऋृतु के समय के वह मल्हार राग गाने लगा। यह राग सुनकर उस शहर के राजा की कन्या मनभावनी उस राग पर मोहित हो गई राजकन्या ने राग गाने वाले की खबर लाने के लिए अपनी दासी को भेजा। दासी सारे शहर मे घूमती रही। जब वह तेली के घर के निकट से निकली तब क्या देखती है कि तेली के घर मे चौरंगिया राग गा रहा। दासी ने लौटकर राजकुमारी को सब वृतांत सुना दिया। बस उसी क्षण राजकुमारी मनभावनी ने अपने मन मे यह प्रण लिया चाहे कुछ भी हो मैने चौरंगिया के साथ ही विवाह करना है।

प्रात: काल होते ही जब दासी ने राजकुमारी मनभावनी को जगाना चाहा तो राजकुमारी अनशन व्रत लेकर पड़ी रही। दासी ने रानी के पास जाकर राजकुमारी के न उठने का वृतांत कहा। रानी ने वहां आकर राजकुमारी को जघाया और उसके दु:ख का कारण पूछा। राजकुमारी ने कहा कि माताजी मैने यह प्रण कर लिया है कि तेली के घर मे जो चौरंगिया है मै उसी के साथ विवाह करूँगी। माता ने कहा- पगली, तू यह क्या कह रही है? तुझे किसी देश के राजा के साथ परिणाया जाएगा। कन्या कहने लगी कि माताजीमै अपना प्रण कभी नही तोडंगी। माता ने चिन्तित होकर यह बात महाराज को बताई। महाराज ने भी आकर उसे समझाया कि मै अभी देश-देशान्तर मे अपने दूत भेजकर सुयोग्य, रूपवान एवं बड़े-से-बड़े गुणी राजकुमार के साथ तुम्हारा विवाह करूंगा। ऐसी बात तुम्हे कभी नही विचारनी चाहिए। परन्तु राजकुमारी ने कहा- "पिताजी मै अपने प्राण त्याग दूंगी परन्तु किसी दूसरे से विवाह नही करूँगी।" यह सुनकर राजा ने क्रोध से कहा यदि तेरे भाग्य मे ऐसा ही लिखा है तो जैसी तेरी इच्छा हो वैसा ही कर। राजा ने तेली को बुलाकर कहा कि तेरे घर मे जो चौरंगिया है उसके साथ साथ मै अपनी कन्या का विवाह करना चाहता हूँ। तेली ने कहा महाराज यह कैसे हो सकता है? राजा ने कहा कि भाग्य के लिखे को कोई नही टाल सकता। अपने घर जाकर विवाह की तैयारी करो।

क्रमश:

(४)

राजा ने सारी तैयारी कर तोरण और बन्दनवार लगवाकर राजकुमारी का विवाह चौरंगिया के साथ कर दिया। रात्रि को जब विक्रमादित्य और राजकुमारी महल मे सोये तप आधी रात के समय शनिदेव ने विक्रमादित्य को स्वप्न दिया और कहा की राजा मुझको छोटा बतलाकर तुमने कितना दु:ख उठाया? राजा ने शनिदेव से क्षमा माँगी । शनिदेव ने राजा को क्षमा कर दिया और प्रसन्न होकर विक्रमादित्य को हाथ-पैर दिये। तब राजा विक्रमादित्य ने शनिदेव से प्रार्थना की - "महाराज मेरी प्रार्थना स्वीकार करें, जैसा दु:ख आपने मुझे दिया है ऐसा और किसी को न दें।" शनिदेव ने कहा - तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार है, जो मनुष्य मेरी कथा सुनेगा या कहेगा उसको मेरी दशा मे कभी भी दु:ख नही होगा जो नित्य मेरा ध्यान करेगा या चीटियो को आटा डालेगा उसके सब मनोरथ पूर्ण होगे । इतना कह कर शनिदेव अपने धाम को चले गए।

जब राजकुमारी मनभावनी की आँख खुली और उसने चौरंगिया को हाथ-पाँव साथ देखा तो आश्चर्यचकित हो गई उसको देखकर राजा विक्रमादित्य ने अपना समस्त हाल कहा कि मै उज्जैन का राजा विक्रमादित्य हूँ। यह घटना सुनकर राजकुमारी अत्यन्त प्रसन्न हुई । प्रात: काल राजकुमारी से उसकी सखियों ने पिछली रात का हाल - चाल पूछा तो उसने अपने पति का समस्त वृतांत कह सुनाया। तब सबने प्रसन्नता प्रकट की और कहा कि ईवर ने आपकी मनोकामना पूर्ण कर दी । जब उस सेठ ने यह घटना सुनी तो वह राजा विक्रमादित्य के पास आया और उनके पैरो पर गिरकर क्षमा मांगने लगा कि आप पर मैने चोरी का झूठा दोष लगाया । आप जो चाहे मुझे दण्ड दे । राजा ने कहा - मुझ पर शनिदेव का कोप था इसी कारण यह सब दु:ख मुझको प्राप्त हुए, इसमे तुम्हारा कोई दोष नही है । तुम अपने घर जाकर अपना कार्य करो, तुम्हारा कोई अपराध नही । सेठ बोला- "महाराज मुझे तभी शान्ति मिलेगी जब आप मेरे घर चलकर प्रीतिपूर्वक भोजन करेंगे"। राजा ने कहा जैसी आपकी इच्छा हो वैसा ही करें।

क्रमश:

(५)

सेठ ने अपने घर जाकर अनेक प्रकार के सुन्दर व्यंजन बनवाए और राजा विक्रमादित्य को प्रीतिभोज दिया। जिस समय राजा भोजन कर रहे थे एक आश्चर्यजनक घटना घटती सबको दिखाई दी। जो खूंटी पहले हार निगल गई थी, वह अब हार उगल रही थी । जब भोजन समाप्त हो गया तो सेठ ने हाथ जोड़कर बहुत सी मौहरें राजा को भेंट की और कहा- "मेरी श्रीकंवरी नामक एक कन्या है उसका आप पाणिग्रहण करें। राजा विक्रमादित्य ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। तब सेठ ने अपनी कन्या का विवाह राजा के साथ कर दिया और बहुत सा दान-दहेज आदि दिया। कुछ दिन तक उस राज्य मे निवास करने के पचात् राजा विक्रमादित्य ने अपने श्वसुर राजा से कहा कि अब मेरी उज्जैन जाने की इच्छा है।

कुछ दिन बाद विदा लकिर राजकुमारी मनभावनी, सेठ की कन्या तथा दोनो जगह से मिला दहेज मे प्राप्त अनेक दास-दासी, रथ और पालकियो सहित राजा विक्रमादित्य उज्जैन की तरफ चले। जब वे शहर के निकट पहुंचे और पुरवासियो ने राजा के आने का सम्वाद सुना तो उज्जैन की समस्त प्रजा अगवानी के लिए आई। प्रसन्नता से राजा अपने महल मे पधारे। सारे नगर मे भारी उत्सव मनाया गया और रात्रि को दीपमाला की गई। दूसरे दिन राजा ने अपने पूरे राज्य मे यह घोषणा करवाई कि शनि देवता सब ग्रहो मे सर्वोपरि है । मैने इनको छोटा बतलाया इसी से मुझको यह दु:ख प्राप्त हुआ।

इस प्रकार सारे राज्य मे सदा शनिदेव की पूजा और कथा होने लगी। राजा और प्रजा अनेक प्रकार के सुख भोगती रही। जो कोई शनिदेव की इस कथा को पढ़ता या सुनता है, शनिदेव की कृपा से उसके सब दु:ख दूर हो जाते है। व्रत के दिन शनिदेव की कथा को आवश्य पढना चाहिए।

।। समात ।।

(५)

आरती श्री शनि देव जी की

जय जय जय श्री शनि देव भक्तन हितकारी,
सूर्य पुत्र प्रभुछाया महतारी॥ जय जय जय शनि देव.॥
श्याम अंग वक्र-दृष्टि चतुर्भुजा धारी,
नीलाम्बर धार नाथ गज की असवारी॥ जय.॥
क्रीट मुकुट शीश राजित दिपत है लिलारी,
मुक्तन की माल गले शोभित बलिहारी॥ जय.॥
मोदक मिष्ठान पान चढ़त हैं सुपारी,
लोहा तिल तेल उड़द महिषी अति प्यारी॥ जय.॥
देव दनुज ऋषि मुनी सुमिरत नर नारी,
विश्वनाथ धरत ध्यान शरण हैं तुम्हारी॥ जय जय जय श्री शनि देव.॥

अथ शनिदेव जी की आरती

चार भुजा तहि छाजै, गदा हस्त प्यारी । जय • ।
रवि नन्दन गज वन्दन, यम अग्रज देवा ।
कष्ट न सो नर पाते, करते तब सेना । जय • ।
तेज अपार तुम्हारा, स्वामी सहा नही जावे ।
तुम से विमुख जगत मे, सुख नही पावे ।
नमो नम ः रविनन्दन सब ग्रह सिरताजा ।
बन्शीधर यश गावे रखियो प्रभु लाजा । जय • ।



पूजा विधि

सर्व मनोकानाओ की पूर्ति हेतु रविवार का व्रत श्रेष्ठ है / इस व्रत की विधि इस प्रकार है / प्रात: काल स्नान आदि से निवृत हो स्वच्छ वस्त्र धारण करे / शान्तचित्त होकर परमात्मा का स्मारण करे / भोजन तथा फलाहार सूर्य के प्रकाश रहते ही कर लेना उचित है । यदि निराहार रहने पर सूर्य छिप जाए तो दूसरे दिन सूर्य उदय होने पर अर्ध्य देने के बाद ही भोजन करे । व्रत के दिन नमकीन तेलयुक्त भोजन कदापि ना करे ।इस व्रत को करने से मान-सम्मान बढ़ता है तथा शत्रुओ का क्षय होता है आँख की पीड़ा के अतिरिक्त अन्य सब पीड़ाये दूर होती है /

कथा प्रारम्भ

एक बुढिया थी । उसका नियम था प्रति रविवार को सबेरे स्वेरे ही स्नान आदि कर घर को गौ के गोबर से लीपकर फिर भोजन तैयार कर भगवान को भोग लगा कर स्वयं भोजन करती थी । ऐसा व्रत करने से उसका घर अनेक प्रकार के धन धान्य से पूर्ण था । श्री हरि की कृपा से घर मे किसी प्रकार का विघ्न या दु:ख नही था । सब प्रकार से घर मे आनन्द रहता था । इस तरह कुछ दिन बीत जाने पर उसकी एक पड़ोसन जिसकी गौ का गोबर वह बुढ़िया लाया करती थी । विचार करने लगी कि यह वृद्धा सर्वदा मेरी गौ का गोबर ले जाती है । इसलिए अपनी गौ को घर के भीतर बांधने लगी । बुढ़िया को गोबर ना मिलने से रविवार के दिन अपने घर को न लीप सकी । इसलिए उसने न तो भोजन बनाया न भगवान को भोग लगाया तथा स्वयं भी भोजन नही किया । इस प्रकार उसने निराहार व्रत किया । रात्रि हो गई और वह भूखी सो गई । रात्रि मे भगवान ने उसे स्वप्न दिया और भोजन न बनाने तथा लगाने का कारण पूछा । वृद्धा ने गोबर न मिलने का कारण सुनाया तब भगवान ने कहा कि माता हम तुमको ऐसी गौ देते है जिससे सभी इच्छाएं पूर्ण होती है क्योकि तुम हमेशा रविवार को गौ के गोबर से घर को लीपकर भोजन बनाकर मेरा भोग लगाकर खुद भोजन करती हो । इससे मै खुश होकर तुमको वरदान देता हूँ । निर्धन को धन और बाँझ स्त्रियो को पुत्र देकर दु:खो को दूर करता हूँ तथा अन्त समय मे मोक्ष देता हूँ ।

स्वप्न मे ऐसा वरदान देकर भगवान तो अन्तर्धान हो गए और वृद्धा की आँख खुली तो वह देखती है कि आंगन मे एक अति सुन्दर गौ और बछड़ा बँधे हुए है । वह गाय और बछड़े को देखकर अतीव प्रसन्न हुई और उसको घर के बाहर बाँध दिया और वही खाने को चारा डाल दिया । जब उसकी पड़ोसन ने बुढ़िया के घर के बाहर एक अति सुन्दर गौ और बछड़ा देखा तो द्वेष के कारण उसका हृदय जल उठा और उसने देखा कि गाय ने सोने का गोबर किया है तो वह उस गाय का गोबर ले गई और अपनी गाय का गोबर उसकी जगह पर रख गई । वह नित्यप्रति ऐसा ही करती रही और सीधी - साधी बुढ़िया को इसकी खबर नही होने दी तब सर्वव्यापी ईश्वर ने सोचा कि चलाक पड़ोसन के कर्म से बुढ़िया ठगी जा रही है तो ईश्वर ने संध्या के समय अपनी माया से बहुत जोर की आँधी चला दी । बुढ़िया ने अन्धेरी के भय से अपनी गौ को अन्दर बाँध लिया । प्रात: काल जब बुढ़िया ने देखा कि गौ ने सोने का गोबर दिया है तो उसके आश्चर्य की सीमा नही रही और वह प्रतिदिन गऊ को घर के भीतर बांधने लगी । उधर पड़ोसन ने देखा की बुढ़िया गऊ को घर के भीतर बांधने लगी है और उसका सोने का गोबर उठाने का दाँव नही चलता तो वह ईर्ष्या और डाह से जल उठी और कुछ उपाय न देख पड़ोसन ने उस देश के राजा की सभा मे जाकर कहा महाराज मेरे पड़ोस मे एक वृद्धा के पास ऐसी गऊ है जो आप जैसे राजाओं के ही योग्य है, वह नित्य सोने का गोबर देती है। आप उस सोने से प्रजा का पालन करिए।

वह वृद्धा इतने सोने का क्या करेगी । राजा ने यह बात सुन अपने दूतों को वृद्धा के घर से गऊ लाने की आज्ञा दी । वृद्धा प्रात: ईश्वर का भोग लगा भोजन ग्रहण करने ही जा रही थी कि राजा के कर्मचारी गऊ खोल कर ले गए । वृद्धा काफी रोई - चिल्लाई किन्तु कर्मचारियो के समक्ष कोई क्या कहता । उस दिन वृद्धा गऊ के वियोग मे भोजन न खा सकी और रात भर रो-रो ईश्वर से गऊ को पुन: पाने के लिए प्रार्थना करती रही । उधर राजा गऊ को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ लेकिन सुबह जैसे ही वह उठा सारा महल गोबर से भरा दिखाई देने लगा । राजा यह देख घबरा गया । भगवान ने रात्रि मे राजा को स्वप्न मे कहा कि हे राजा ! गाय को वृद्धा को लौटाने मे ही तेरा भला है उसके रविवार के व्रत से प्रसन्न होकर मैने उसे गाय दी थी । प्रात: होने पर राजा ने वृद्धा को बुलाकर बहुत से धन के साथ सम्मान के सहित गऊ और बछड़ा लौटा दिया। उसकी पड़ोसिन को बुलाकर उचित दण्ड दिया । इतना करने के बाद राजा के महल से गन्दगी दूर हुई ।उसी दिन से राजा ने नगरवासियो को आदेश दिया कि राज्य की तथा अपनी समस्त मनोकामनाओ की पूर्ति के लिए रविवार का व्रत करो । व्रत करने से नगर के लोग सुखी जीवन व्यतीत करने लगे । कोई भी बीमारी तथा प्रकृति का प्रकोप उस नगर पर नही होता था । सारी प्रजा सुख से रहने लगी ।

।। समाप्त ।।

अथ रविवार की आरती

कहुँ लगि आरती दास करेंगे, सकल जगत जाकी जोत बिराजेसात ।।टेक।।
समुद्र जाके चरणनि बसे, कहा भयो जल कुम्भ भरे हो राम ।
कोटि भानु जाके नख की शोभा, कहा भयो मन्दिर दीप धरे हो राम ।
भार अठारह रामा बलि जाके, कहा भयो शिर पुष्पधरे हो राम ।
छप्पन भोग जाके नितप्रति लागे, कहा भयो नैवेद्य धरे हो राम ।
अमित कोटि जाके बाजा बाजे, कहा भयो झनकार करे हो राम ।
चार वेद जाके मुख की शोभा, कहा भयो ब्रह्म वेद पढ़े हो राम ।
शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, नारद हुनि जाको ध्यान धरें हो राम ।
हिम मंदार जाको पवन झकोरे, कहा भयो शिव चवँर दुरे हो राम ।
लख चौरासी वन्दे छुड़ाये, केवल हरियश नामदेव गाये ।।हो राम ।।

सूर्य देव जी की आरती

जय कश्यप-नन्दन, ॐ जय अदिति-नन्दन ।
त्रिभुवन-तिमिन निकन्दन भक्त-हृदय-चन्दन ।। टेक ।।

सप्त - अश्वरथ राजित एक चक्रधारी ।
दुखहारी - सुखकारी, मानस-मल-हारी ।। जय ।।

सुर-मुनि-भूसुर-वंदित, विमल विभवशाली ।
अघ-दल-दलन दिवाकर दिव्य किरण माली ।। जय ।।

सकल-सुकर्म-प्रसविता सविता शुभकारी ।
विश्व-विलोचन मोचन भव बंधन भारी ।। जय ।।

कमल-समूह-विकासक, नाशक त्रय तापा ।
सेवत सहज हरत अति मनसिज-संतापा ।। जय ।।

नेत्र-व्याधि-हर सुरवर भू-पीड़ा-हारी ।
वृष्टि-विमोचन संतत परहित - व्रतधारी ।। जय ।।

सूर्यदेव करूणाकर अब करूणा कीजे ।



आरती श्री काली मैया की

मंगल की सेवा सुन मेरी देवी, हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े
पान सुपारी ध्वजा नारियल, ले ज्वाला तेरी भेंट करें।
सुन जग्दम्बे कर न विलम्बे सन्तन के भंडार भरे
सन्तान प्रतिपाली सदा खुशहाली,जय काली कल्याण करे।।
बुद्धि विधाता तू जगमाता,मेरा कारज सिद्ध करे
चरण कमल का लिया आसरा,शरण तुम्हारी आन परे
जब जब पीर पड़े भक्तन पर तब तब आये सहाय करे
सन्तन प्रतिपाली सदा खुशहाली, काली कल्याण करे।।
बार बार तै सब जग मोहयो,तरूणी रूप अनूप धरे
माता होकर पुत्र खिलावें,कही भार्या बन भोग करे
संतन सुखदायी,सदा सहाई,सन्त खड़े जयकार करें
संतन प्रतिपाली सदा खुशहाली, जय काली कल्याण करे।।
ब्रह्मा विष्णु,महेश फल लिए भेंट देन सब द्वार खड़े
अटल सिंहासन बैठी माता,सिर सोने का छत्र धरे
वार शनिचर कुंकुमवरणी,जब लुंकुड पर हुक्म करे
संतन प्रतिपाली सदा खुशहाली , जय काली कल्याण करे।।

(१)

क्रमश:



श्री भैरव जी की आरती

जय भैरव देवा, प्रभु जय भैरव देवा ,
जय काली और गौरा देवी कृत सेवा। जय....

तुम्हीं पाप उद्धारक दुःख सिन्धु तारक ,
भक्तों के सुख कारक भीषण वपु धारक। जय...

वाहन श्वान विराजत कर त्रिशूल धारी ,
महिमा अमित तुम्हारी जय जय भयहारी। जय...

तुम बिन देवा सेवा सफल नहीं होवे ,
चौमुख दीपक दर्शन दुःख खोवे। जय...

तेल चटकि दधि मिश्रित भाषावलि तेरी ,
कृपा कीजिए भैरव करिये नहिं देरी। जय...

पाँव घुंघुरु बाजत अरु डमरु डमकावत ,
बटुकनाथ बन बालकजन मन हरषावत। जय...

बटुकनाथ की आरती जो कोई नर गावे ,
कहे धरणीधर नर मनवांछित फल पावे। जय...


तीन नदियों का पवित्र संगम - प्रयाग
श्री सरस्वति जी
श्री गंगा जी
श्री जमुना जी

श्री गंगाजी की आरती

ॐ जय गंगे माता, श्री जय गंगे माता ।
जो नर तुमको ध्याता, मन वांछित फल पाता ।।
चंद्र सी ज्योति तुम्हारी, जल निर्मल आता ।
शरण पड़े जो तेरी, सो नर तर जाता ।।
पुत्र सगर के तारे, सब जग के ज्ञाता ।
कृपा दृष्टि तुम्हारी, त्रिभुवन सुखदाता ।।
एक ही बार जो तेरी शरणागति आता ।
यम की त्रास मिटाकर परम गति पाता ।।
आरती मात तुम्हारी जो नरनित गाता ।
दास वही सहज में मुक्ति को पाता ।।

आरती श्री यमुना जी की

ओउम् जय यमुना माता, हरि जै यमुना माता,
जो नहावे फल पावे सुख सुख की दाता।
ओउम् जय

पावन श्रीयमुना जल अगम बहै धारा,
जो जन शरण में आया कर दिया निस्तारा।
ओउम् जय

जो जन प्रातः ही उठकर नित्य स्नान करे,
यम के त्रास न पावे जो नित्य ध्यान करे।
ओउम् जय

कलिकाल में महिमा तुम्हारी अटल रही,
तुम्हारा बड़ा महातम चारों वेद कही।
ओउम् जय

आन तुम्हारे माता प्रभू अवतार लियो,
नित्य निर्मल जल पीकर कंस को मार दियो।
ओउम् जय

नमो मात भय हरणी शुभ मंगल करणी,
मन 'बेचैन' भया है तुम बिन वैतरणी।
ओउम् जय

12



आरती

श्री सरस्वती जी

जय सरस्वती माता, मैया जय सरस्वती माता।
सद्गुण वैभव शालिनि, त्रिभुवन विख्याता॥ मैया जय

चन्द्रवदनि पद्मासिनि, द्युति मंगलकारी।
सोहे शुभ हंस सवारी, अतुल तेजधारी॥ मैया जय

बाएं कर में वीणा, दाएं कर माला।
शीश मुकुट मणि सोहे, गल मोतियन माला॥ मैया जय

देवि शरण जो आए, उनका उद्धार किया।
पैठि मंथरा दासी, रावण संहार किया॥ मैया जय

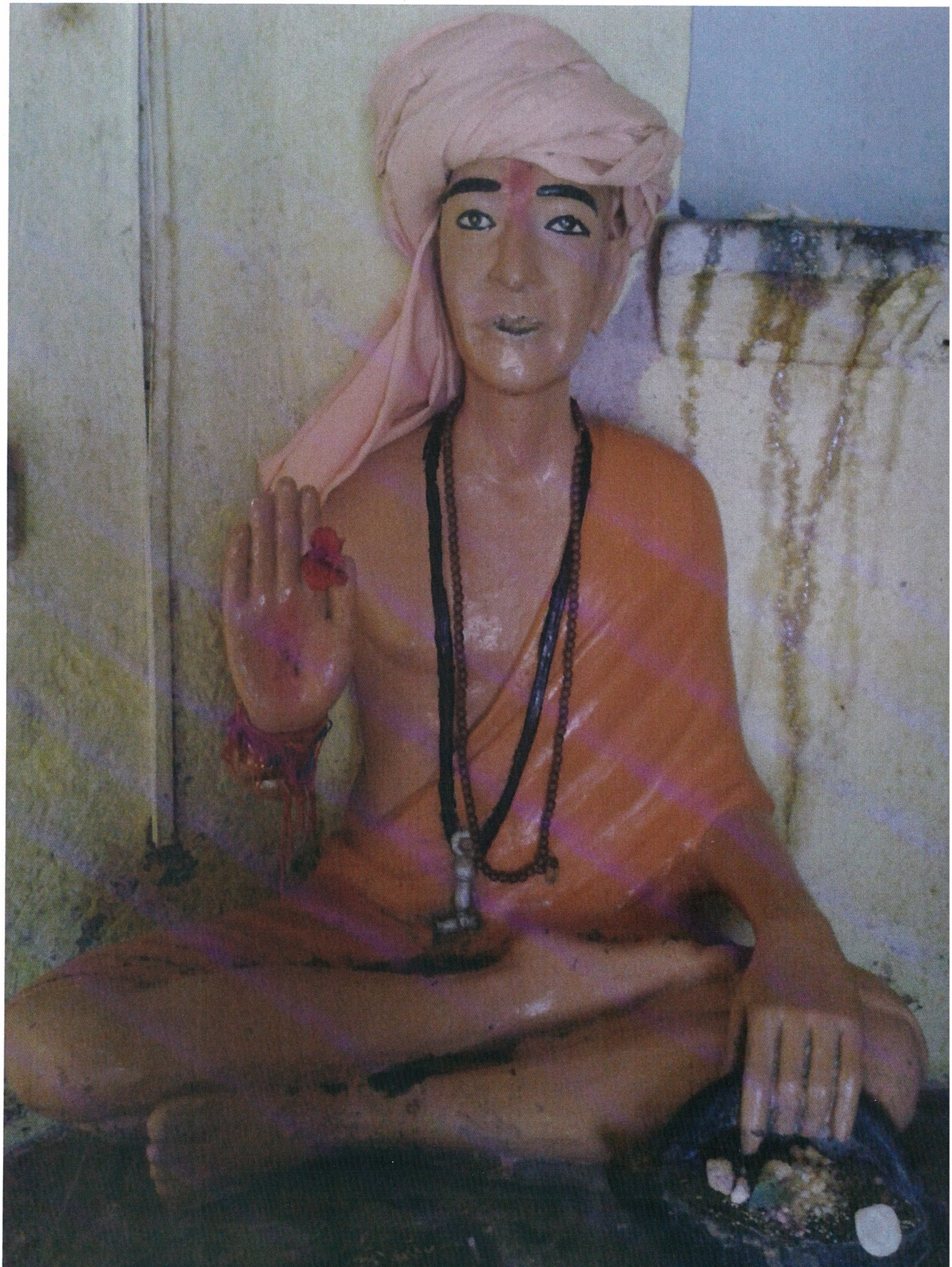
विद्या ज्ञान प्रदायिनि ज्ञान प्रकाश भरो।
मोह, अज्ञान और तिमिर का, जग से नाश करो॥ मैया जय

धूप दीप फल मेवा, माँ स्वीकार करो।
ज्ञानचक्षु दे माता, जग निस्तार करो॥ मैया जय

माँ सरस्वती की आरती, जो कोई जन गावे।
हितकारी सुखकारी, ज्ञान भक्ति पावे॥ मैया जय

श्री सरस्वती-वन्दन

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता।
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना॥
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वंदिता।
सा माम पातु सरस्वती भगवती निःशेष जाड्यापहा॥



आरती बाबा जोड़नाथ की

जय जय जय जोड़नाथ बाबा मैं शरण पड़यौं हूँ थारी।

शरण पड़यौं हूँ थारी बाबा शरण पड़यौं हूँ थारी॥

आप ही रक़्शक आप ही दाता आप ही ख़ेवनहारे।

मैं मूरख़ हूँ कुछ नहीं जाणूं आप ही हो रखवारे॥जय॥

आप खड़े हैं हरदम हर घड़ी करने मेरी रखवारी।

हम सब जन हैं शरण आपकी है ये अरज गुजारी॥जय॥

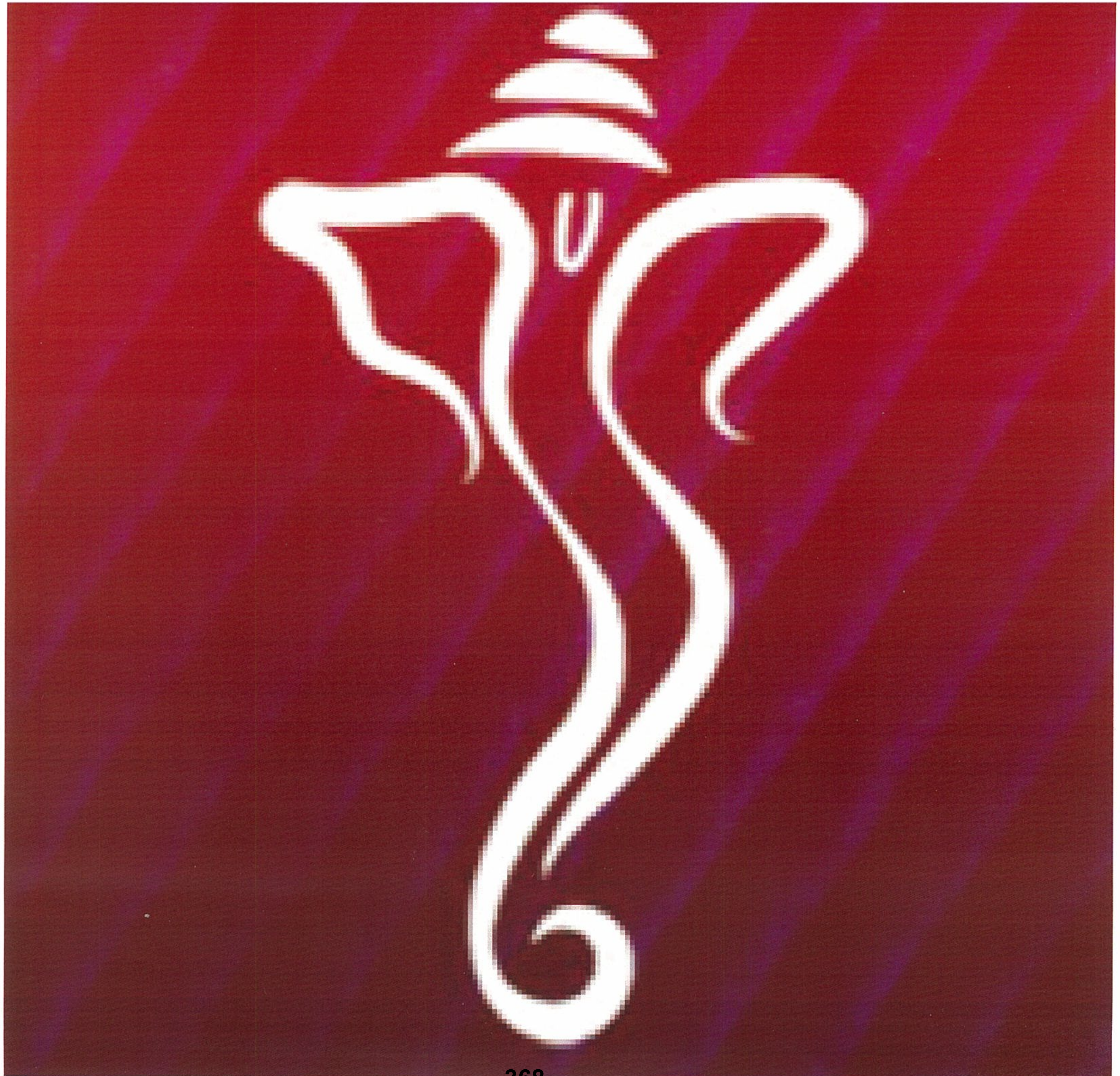
देश और परदेश सब जगह आप ही करो सहाई।

काम पड़े पर नाम आपको लगे बहुत सुखदाई॥जय॥

भक्त सभी हैं शरण आपकी अपने सहित परिवार।

रक़्शा करो आप ही सबकी रटूं मै बारम्बार॥जय॥










drikPanchang.com



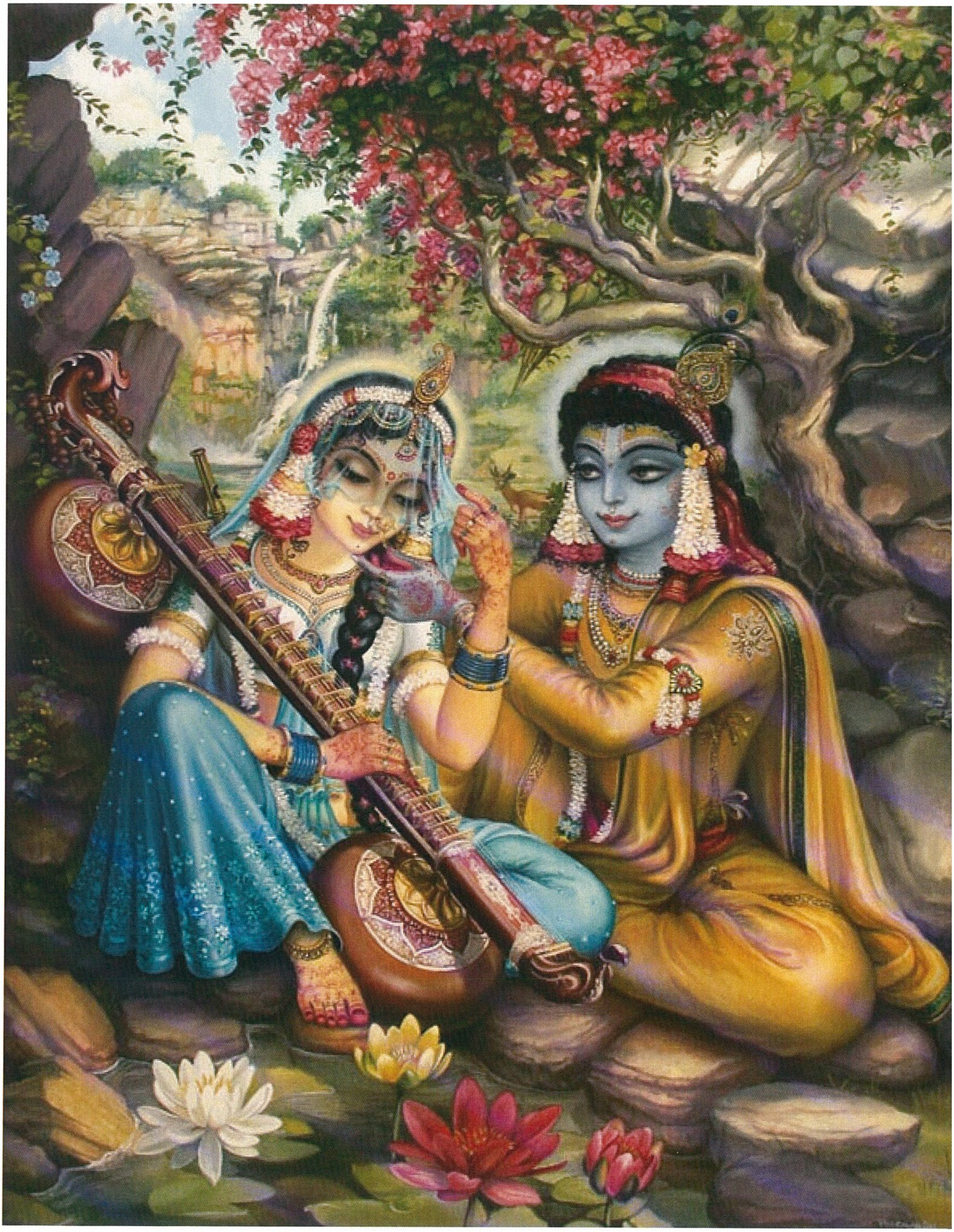




www.russianpaintings.net







www.russianpaintings.net


Barnali Bagchi
CGSociety.org






श्री करवा चौथ पूजन
श्री गणेशाय नमः


होई
अष्टमी


जाहर वीर गोगाजी
9607

